हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

उद्यान रश्मि

राजभाषा पत्रिका

(जनवरी–दिसंबर 2015)

वर्ष 15 अंक 1, 2

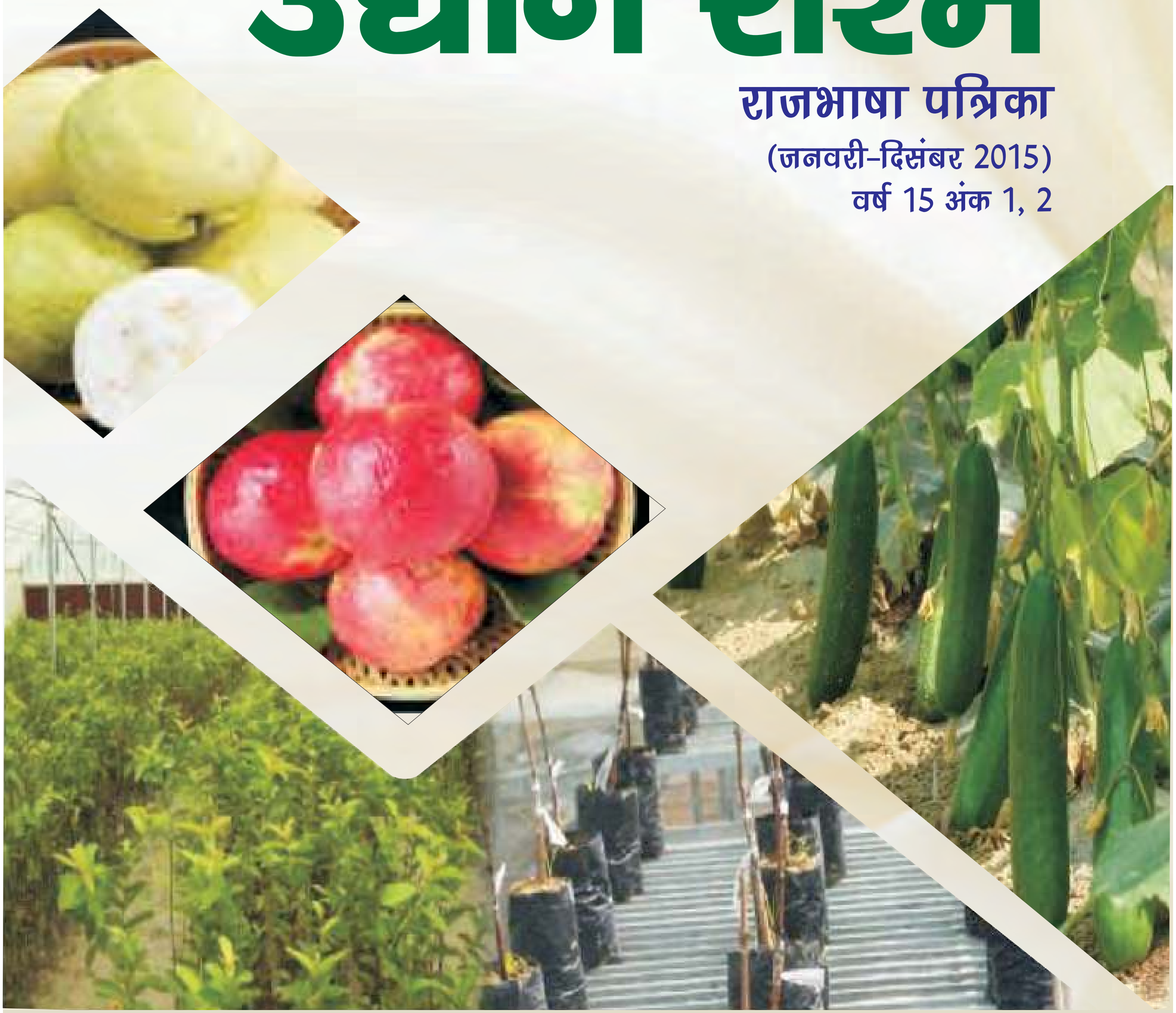

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान

रहमानखेड़ा, डाकघर काकोरी, लखनऊ - 226 101, उ0प्र0

दूरभाष : 0522–2841022, 24 फैक्स : 0522–2841025

ई–मेल : cish.lucknow@gmail.com

वेबसाइट : www.cish.res.in

मीडिया संसाधन कक्ष : 0522–2841082

भाकृअनुप
ICAR

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
CENTRAL INSTITUTE FOR SUBTROPICAL HORTICULTURE
ISO 9001 : 2008

उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल, श्री राम नाईक कृषक को सम्मानित करते हुए। बायीं तरफ भा.कृ.अनु.प. के उपमहानिदेशक (बागवानी विज्ञान), डॉ एन के कृष्ण कुमार एवं अन्य गणमान्य।

उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल, श्री राम नाईक 'धवल' एवं 'लालिमा' नामक अमरूद की उन्नत किस्मों को लोकार्पित करते हुए।

हिन्दी चेतना मास के अन्तर्गत आयोजित कवि सम्मेलन के दौरान उत्तर प्रदेश एवं आस-पास के क्षेत्रों के सम्मानित कविगण एवं संस्थान के निदेशक, डॉ शैलेन्द्र राजन (बीच में) के साथ मंचासीन।

उद्यान रश्मि

राजभाषा पत्रिका

(जनवरी–दिसंबर 2015)
वर्ष 15 अंक 1, 2

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, डाकघर काकोरी, लखनऊ - 226 101, उ०प्र०
दूरभाष : 0522–2841022, 24 फैक्स : 0522–2841025
ई–मेल : cish.lucknow@gmail.com
वेबसाइट : www.cish.res.in
मीडिया संसाधन कक्ष : 0522–2841082

भाकृअनुप
ICAR

ISO 9001 : 2008

राजभाषा पत्रिका
(जनवरी-दिसंबर, 2015)
वर्ष 15 अंक 1, 2

© भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, लखनऊ

संरक्षक एवं प्रकाशक
डॉ. शैलेन्द्र राजन
निदेशक
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, लखनऊ-226 101, उ.प्र.

प्रकाशन समिति
अजय वर्मा
मनीष मिश्र
कंचन कुमार श्रीवास्तव
धीरज शर्मा

अस्वीकरण

इस पत्रिका में प्रकाशित तथ्यात्मक लेखों के लिए लेखक ही उत्तरदायी हैं न कि भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ, इसके प्रकाशक, संरक्षक या प्रकाशन समिति। उपयोगकर्ताओं को यह सलाह दी जाती है कि पत्रिका में दी गयी जानकारियों को उपयोग में लाने से पहले किसी विशेषज्ञ से विचार-विमर्श करें/सलाह लें।

प्रकाशक एवं सम्पर्क सूत्र
निदेशक
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, पोस्ट-काकोरी, लखनऊ-226101
फोन : 0522-2841022-24, फैक्स : 0522-2841025
मीडिया संसाधन कक्ष नं. : 0522-2841082
ई-मेल : cish.lucknow@gmail.com
वेबसाइट : www.cish.res.in

आवरण : [1]धवल, [2]लालिमा, [3]पौधशाला, [4]पौधशाला में तैयार होते पौधे एवं [5]संरक्षित खेती।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का गीत

जय जय कृषि परिषद भारत की,

सुखद प्रतीक हरित भारत की,

कृषिधन, पशुधन मानव जीवन,

दुग्ध, मत्स्य, फल, यंत्र सुवर्धन,

वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी,

पारिस्थितिकी का संरक्षण,

सस्य-श्यामला छवि भारत की,

जय जय कृषि परिषद भारत की।

हिम प्रदेश से सागर तट तक,

मरु धरती से पूर्वोत्तर तक,

हर पथ पर है, मित्र कृषक की,

शिक्षा, शोध, प्रसार सकल तक,

आशा स्वावलंबित भारत की,

जय जय कृषि परिषद भारत की।

जय जय कृषि परिषद भारत की।।

प्राक्कथन

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ द्वारा फलों के राजा आम तथा गरीब लोगों के सेब अमरूद पर कार्य किये जाने के कारण इस संस्थान का विश्व में एक अप्रतिम स्थान है। संस्थान के वैज्ञानिकों में आनुवंशिकी संबंधी जागरूकता के कारण यहाँ के प्रक्षेत्र जीन बैंक में आम के 762 अभिगमनों का संकलन उपलब्ध है। यहाँ के वैज्ञानिकों ने आम अनुरक्षण विविधता समिति जैसा संगठन बना कर किसानों को आम की विविध एवं अनूठी किस्मों को संरक्षित करने के लिये प्रेरित करने में सफलता पायी है। इसके परिणामस्वरूप 34 किसानों को पौध किस्म एवं कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण, नयी दिल्ली में पंजीयन हेतु अनुशंसित किया गया है। इसके अलावा सामुदायिक पौधशालाओं को भी स्थापित किया गया है।

संस्थान द्वारा आम एवं अमरूद की विकसित विभिन्न किस्मों को देश के सभी हिस्सों के उपभोक्ताओं द्वारा स्वीकार किया गया। वाराणसी के कुछ हिस्सों जहाँ सब्जियाँ पैदा की जाती थीं, वहाँ भी अमरूद की 'ललित' किस्म ने प्रभावशाली बढ़ोत्तरी की है। इसके अतिरिक्त 'ललित' का फैलाव महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु के दूर-दराज स्थानों में भी हुआ है। संस्थान द्वारा विकसित अमरूद की दो किस्मों 'धवल' एवं 'लालिमा' को उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल महोदय, श्री राम नाईक ने 22 जून, 2015 को उत्तर प्रदेश के लखनऊ स्थित पर्यटन भवन में लोकार्पित किया गया।

ध्यातव्य है कि भारत सरकार के स्वच्छ भारत अभियान को संस्थान अत्यंत उत्साह के साथ लागू कर रहा है। संस्थान के अधिकारियों ने न केवल समय-समय पर संस्थान के परिसरों की सफाई की बल्कि उन्होंने आस-पास के स्कूलों, पंचायत भवनों तथा मलिहाबाद एवं काकोरी के रेलवे प्लेटफार्मों की भी सफाई की है। राजस्थान तथा मध्य प्रदेश, देश के दो महत्वपूर्ण राज्य हैं जहाँ के कुछेक जिलों में जनजातीयों की अच्छी संख्या है। भारत सरकार के जनजातीय उप योजना के अंतर्गत उपलब्ध वित्तीय समर्थन के मद्देनजर संस्थान ने उदयपुर, ग्वालियर तथा जबलपुर के आस-पास के क्षेत्रों में आम, अमरूद तथा अन्य उपोष्ण फलों के क्षेत्र के विस्तार तथा उत्पादकता बढ़ाने पर जोर दिया है। कृषि विज्ञान केन्द्रों की पौधशालाओं को मजबूत करने के अलावा गुणवत्ता वाले पौध सामग्री के गुणन हेतु मातृखण्ड तैयार करने का भी प्रयास किया गया है। संस्थान को दिनांक 26 मार्च, 2015 को आई.एस.ओ. 9001:2008 प्रमाणपत्र से प्रत्यायित किया गया। संस्थान द्वारा किसानों में जागरूकता एवं आपसी तालमेल बढ़ाने के लिए मेरा गांव मेरा गौरव नामक कार्यक्रम के अन्तर्गत 40 गांवों का चयन किया गया है। इन चयनित गांवों के समग्र विकास का प्रयास जारी है। इसी क्रम में 20 गांवों के किसानों की भूमि का परीक्षण भी कराया गया तथा किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड भी वितरित किये गये।

संस्थान द्वारा किये गये शोध एवं अन्य कार्यों को संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'उद्यान रश्मि' में समाहित किया जाता रहा है। इस बार भी इसके प्रकाशन के समय इसका ध्यान रखा जा रहा है कि संस्थान की गतिविधियों को इसमें समाहित किया जाये। हिन्दी में होने के कारण यह कृषि विज्ञान की पत्रिका किसानों में भी लोकप्रिय है। इसके प्रकाशन अवसर पर मैं प्रकाशन समिति के सदस्यों को बधाई देते हुए आशा करता हूँ कि यह पत्रिका ज्ञानवर्धक एवं किसानोपयोगी होगी।

(शैलेन्द्र राजन)
निदेशक

संपादकीय

संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'उद्यान रश्मि' के वर्ष 15 का संस्करण नूतन एवं अद्यतन जानकारियों के साथ एक बार पुनः आपके सम्मुख प्रस्तुत है। विगत अंकों की भाँति इस अंक में भी किसानोपयोगी कृषि विज्ञान सम्मत जानकारियाँ उपलब्ध करायी गयी है। वैज्ञानिक लेखों को हिन्दी में पिरोना एक अत्यन्त ही चुनौतिपूर्ण कार्य रहा है। यह इस बात का भी द्योतक है कि भाषा यदि सरल एवं सहज हो तो वह विज्ञान के भार को भी वहन कर सकती है। हिन्दी यह कार्य अत्यन्त सरलता से करने में समर्थ रही है।

मानव समाज के विकास का सपूर्ण श्रेय यदि किसी एक वस्तु को दिया जा सकता है तो वह भाषा है। प्रसिद्ध प्राचीन विचारक राजा भर्तृहरि ने कहा है कि यदि भाषा की उत्पत्ति नहीं हुई होती तो सपूर्ण विश्व घोर अंधकार में निमग्न हो गया होता। विज्ञान, कला एवं ज्ञान-विज्ञान सभी विषयों को वैज्ञानिक तरीके से प्रस्तुत करने में भाषाओं की वर्णनातीत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यही कारण है कि भाषा सभी को विषयों की बारीकियों एवं गूढताओं से परिचित कराती है। भाषा न केवल योग का कार्य करती है अपितु यह दो लोगों को पृथक भी करती है। भाषा ही वह घटक है जो हमें पशुओं से अलग दिखाती है। भारत के परिप्रेक्ष्य में भाषाओं की और अधिक महत्ता रही है। अंग्रेजी भाषा एवं वैयाकरण के ज्ञाता लियोनार्द ब्लूमफील्ड, महर्षि पतंजलि को व्याकरण के जनक के रूप में देखते हैं। भाषा और व्याकरण की उत्पत्ति में पाणिनी को सम्मिलित नहीं जाना न्यायसंगत नहीं होगा। पाणिनी द्वारा रचित अष्टाध्यायी का सरलीकरण ही पतंजलि का महाभाष्य है।

हिन्दी दुनिया की तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाले वाली भाषा है। यह एक अत्यन्त ही वैज्ञानिक भाषा है क्योंकि इस भाषा में जैसा लिखा जाता है वैसा ही बोला जाता है। जबकि अंग्रेजी भाषा में शब्दों के उच्चारण के लिये अलग से शब्दकोश निर्मित किया गया है। अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में इसकी और अधिक महत्ता है क्योंकि भारत में अधिकांश लोगों की मातृभाषा होने के साथ-साथ यह प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अधिकतर लोगों के लिए सूचनाओं एवं जानकारियों की संवाहिका रही है। भारत संघ की राजभाषा होने के कारण हिन्दी का महत्व और भी ज्यादा है क्योंकि समस्त सरकारी कार्यों का संपादन हिन्दी में ही कार्यान्वित किया जाता है। संपर्क भाषा के अलावा संध की राजभाषा होने के कारण सरकारी संस्थाओं में इसकी विशेष भूमिका है।

'उद्यान रश्मि' के प्रकाशन का प्रमुख उद्देश्य है कि इस पत्रिका में प्रकाशित लेख किसानों के लिये उपयोगी होने के साथ-साथ सामान्य जनमानस के लिये भी लाभकारी हो। इसमें निहित फलों, सब्जियों तथा अन्य कृषि प्रौद्योगिकी संबंधी, तकनीकों एवं सूचनाओं का ताना-बाना बुन कर एक इंद्रधनुषी रंग में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। यह हर्ष का विषय है कि विषय-विशेषज्ञों द्वारा लिखित वैज्ञानिक लेखों में कृषकों एवं जनसाधारण में इस पुस्तिका की लोकप्रियता बढ़ी है। फिर भी इस पत्रिका में उत्तरोत्तर सुधार के लिये आपके सुझाव और लेख सर्वदा आमंत्रित किये जाते हैं।

इस पत्रिका प्रकाशन के लिये मैं राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष, इसके सदस्यों तथा समस्त लेखकों का आभारी हूँ जिनके मार्गदर्शन, सुझाव एवं तथ्यात्मक लेखों के बिना यह अथक प्रयास सफल नहीं हो सकता था। आशा है कि यह पत्रिका सभी पाठकों के लिये ज्ञानवर्धक सिद्ध होगी।

धीरज शर्मा

(धीरज शर्मा)

सहायक निदेशक (रा.भा.)

विषय-वस्तु

1. **राजाभाषा अधिनियम, 1963 (यथासंशोधित, 1967) (1963 का अधिनियम संख्यांक 19)** 1

2. **राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 (यथा संशोधित, 1987, 2007 तथा 2011)** 4

3. **मृदा उर्वरता के लिए कार्बनिक पदार्थ की उपयोगिता** 8
   कैलाश कुमार, तरूण अदक एवं विनोद कुमार सिंह

4. **मृदा स्वास्थ्य में जैव उर्वरकों एवं जैविक खादों की महत्ता** 11
   कैलाश कुमार, अतुल सिंघा, तरुण अदक एवं विनोद कुमार सिंह

5. **आम की किस्मों के संरक्षक किसान** 14
   शैलेन्द्र राजन

6. **आम के बाग में अन्तःफसल एवं उसका लाभ** 23
   वी.के. सिंह, मनोज कुमार सोनी, अनुराग सिंह, कामिनी सिंह, पूजा सक्सेना एवं कैलाश कुमार

7. **फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारक** 27
   देवेन्द्र पाण्डेय, धीरू कुमार तिवारी, शिल्पा सिंह एवं अवनीश पाण्डेय

8. **अमरूद में उपज एवं गुणवत्ता बढ़ाने का विकल्प-बहार नियंत्रण** 30
   प्रमोद कुमार सिंह एवं शैलेन्द्र राजन

9. **महुआ के पोषक तत्व एवं उनकी उपयोगिता** 34
   ए.के. सिंह

10. **कटहल की वैज्ञानिक खेती** 36
    घनश्याम पाण्डेय एवं जय नरायण तिवारी

11. **चकोतरा-एक अनूठा नीबू** 39

पूजा बोहरा, वामन अजित अरूण, करंजालकर गौरीश रंगनाथ एवं प्रमोद कुमार सिंह

12. **ब्रोकली का उपोष्ण जलवायु में उत्पादन** 42

वी.के. सिंह, कामिनी सिंह, मनोज कुमार सोनी, अनुराग सिंह एवं पूजा सक्सेना

13. **चेस्टनट : एक बार लगायें, जीवनभर खायें** 46

अजय कुमार त्रिवेदी, सुरेश कुमार वर्मा एवं घनश्याम पाण्डेय

14. **पैशन फल की औषधीय उपयोगिता** 50

विशम्भर दयाल, पवन सिंह गुर्जर एवं प्राणनाथ वर्मन

15. **कमरख की बागवानी और उसकी उपयोगिता** 52

विशम्भर दयाल एवं पंकज कुमार सिन्हा

16. **खुबानी की खेती** 55

दिनेश कुमार, नजीर अहमद एवं कंचन कुमार श्रीवास्तव

17. **करौंदा एक बहुपयोगी फल** 58

पवन सिंह गुर्जर, ज्योतिर्मयी लेंका, मुरलीधर बी.एम. एवं इसरार अहमद

18. **उत्तर प्रदेश में गौड़ फलों की उपलब्धता, विविधता एवं व्यावसायिक काश्त की सम्भावनायें** 61

सुशील कुमार शुक्ला, घनश्याम पांडेय एवं मनीष मिश्र

19. **पर्वतीय क्षेत्रों में औद्यानिक फसलों हेतु पौधशालाः रोजगार एवं आय का उत्तम साधन** 65

अजय कुमार त्रिवेदी एवं सुरेश कुमार वर्मा

20. **आम के शूट गॉल सिला कीट की पहचान एवं नियंत्रण** 67

गुण्डप्पा, पी.के. शुक्ला एवं बालाजी राजकुमार

21. **तुड़ाई उपरांत कुछ उपोष्ण फलों के रोग** 69

ए. के. मिश्र

22. **ट्राइकोडर्मा द्वारा पादप रोगों का जैविक नियंत्रण** 76

सोमेश्वर भगत, इसरार अहमद, अजंता बिराह, अरविंद कुमार त्रिपाठी, नसीम अहमद एवं रमेश चन्द्र श्रीवास्तव

23. **केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियाँ एवं प्रदत्त सेवाएँ** 79

बरसाती लाल, सुभाष चन्द्र, हरीश चन्द्र वर्मा एवं अरविन्द कुमार

24. **जैविक विधि से तैयार कीट एवं व्याधि नाशकों द्वारा औद्यानिक फसलों के कीट एवं व्याधियों का प्रबंधन** 83

राम अवध राम

25. **फल एवं सब्जियों का परासारणी निर्जलीकरण द्वारा संरक्षण** 86

जोतिर्मयी लेंका, पवन सिंह गुर्जर, भारती किल्लाड़ी, रेखा चौरसिया एवं डी.के. शुक्ला

26. **स्वास्थ्य के लिये फलों के ऐंटीऑक्सीडेंट का महत्व** 89

भारती किल्लाड़ी, रेखा चौरसिया एवं डी.के. शुक्ला

27. **अगुणित फलोत्पादन : नये आयाम** 92

स्वोस्ति शुभदर्शिनी दास, अंतरा दास एवं ज्योतिर्मयी लेंका

28. **तुड़ाई उपरान्त फल प्रबंधन में प्लास्टिक की भूमिका** 95

भारती किल्लाड़ी, रेखा चौरसिया एवं डी.के. शुक्ला

29. **प्याज का उत्पादन** 99

श्याम राज सिंह एवं इसरार अहमद

30. **अंदमान-निकोबार द्वीपों में पाये जाने वाले महत्वपूर्ण गौड़ फल** 103

इसरार अहमद एवं सुशील कुमार शुक्ल

31. **वाई. 2 के. 38 : समस्या तथा संभावित दुष्परिणाम** 104

एच.सी. वर्मा एवं दीपक कुमार वर्मा

32. **प्रसंस्कृत उत्पाद में खाद्य रंग का स्वास्थ्य पर प्रभाव** 107

पुष्पा चेतन कुमार, डी.के. शुक्ला, रेखा चौरसिया, भारती किल्लाड़ी एवं जोतिर्मयी लेंका

33. **लागत प्रभावी संरक्षित खेती एवं जलवायु परिवर्तन** 109

अशोक कुमार

34. **विविध**

अमरूद चालीसा 110

कलियुग की नारी शक्तिहीन 111

हिन्दी दिवस 112

आम बचायें 112

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस 113

फलों का राजा आम 114

राजभाषा से संबंधित वस्तुनिष्ठ जानकारियाँ 115

संदेश 115

हिन्दी के अंकों का स्वीकृत मानक रूप 116

प्रशासनिक शब्दावली 117

फलों एवं सब्जियों के नाम 119

बागवानी से संबंधी शब्दावली 120

राजाभाषा अधिनियम, 1963 (यथासंशोधित, 1967) (1963 का अधिनियम संख्यांक 19)

उन भाषाओं का, जो संघ के राजकीय प्रयोजनों, संसद में कार्य के संव्यवहार, केन्द्रीय और राज्य अधिनियमों और उच्च न्यायालयों में कतिपय प्रयोजनों के प्रयोग में लाई जा सकेंगी, उपबन्ध करने के लिए अधिनियम। भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हों।

1. संक्षिप्त नाम और प्रारंभ

(1) यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा।

(2) धारा 3, जनवरी, 1965 के 26वें दिन को प्रवृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबन्ध उस तारीख को प्रवृत्त होंगे जिसे केन्द्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करें और इस अधिनियम के विभिन्न उपबन्धों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी।

2. परिभाषाएं- इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो

(क) 'नियत दिन' से, धारा 3 के सम्बन्ध में, जनवरी, 1965 का 26वां दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबन्ध के सम्बन्ध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन को वह उपबन्ध प्रवृत्त होता है;

(ख) 'हिन्दी' से वह हिन्दी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है।

3. संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए और संसद में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा का रहना

(1) संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा, नियत दिन से ही।

(क) संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए वह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लाई जाती थी; तथा

(ख) संसद में कार्य के संव्यवहार के लिए प्रयोग में लाई जाती रह सकेगी

परंतु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लाई जाएगी।

परन्तु यह और जहां किसी ऐसे राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है और किसी अन्य राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, बीच पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाया जाता है, वहां हिन्दी में ऐसे पत्रादि के साथ-साथ उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में भेजा जाएगा।

परन्तु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संघ के साथ या किसी ऐसे राज्य के साथ, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है, या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है, और ऐसे किसी मामले में उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा।

(2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी या अंग्रेजी भाषा

(i) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और दूसरे मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के बीच

(ii) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के बीच,

(iii) केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम या कम्पनी या कार्यालय के बीच,

प्रयोग में लाई जाती है वहां उस तारीख तक, जब तक पूर्वोक्त संबंधित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या विभाग या कम्पनी का कर्मचारीवृद हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद, यथास्थिति, अंग्रेजी भाषा या हिन्दी में दिया जाएगा।

(3) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी हिन्दी और अंग्रेजी भाषा दोनों ही (प) संकल्पों, साधारण आदेशों, नियमों, अधिसूचनाओं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदनों या प्रेस विज्ञप्तियों के लिए, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के किसी कार्यालय द्वारा निकाले जाते हैं या किए जाते हैं;

(ii) संसद के किसी सदन या सदनों के समक्ष रखे गए प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदनों और राजकीय कागज-पत्रों के लिए,

(iii) केन्द्रीय सरकार या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या उसकी ओर से या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के किसी कार्यालय द्वारा निष्पादित संविदाओं और करारों के लिए तथा निकाली गई अनुज्ञपत्तियों अनुज्ञापत्रों, सूचनाओं और निविदा-प्ररूपों के लिए, प्रयोग में लाई जाएगी।

(4) उपधारा (1) या उपधारा (2) या उपधारा (3) के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यह है कि केन्द्रीय सरकार धारा 8 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा उस भाषा या उन भाषाओं का उपबन्ध कर सकेगी जिसे या जिन्हें संघ के राजकीय प्रयोजन के लिए, जिसके अन्तर्गत किसी मंत्रालय, विभाग, अनुभाग या कार्यालय का कार्यकरण है, प्रयोग में लाया जाना है और ऐसे नियम बनाने में राजकीय कार्य के शीघ्रता और दक्षता के साथ निपटारे का तथा जन साधारण के हितों का सम्यक ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति का सम्यक ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाए गए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति संघ के कार्यकलाप के सम्बन्ध में सेवा कर रहे हैं और जो या तो हिन्दी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण हैं वे प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें और यह भी कि केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं है उनका कोई अहित नहीं होता है।

(5) उपधारा (1) के खंड (क) के उपबन्ध और उपधारा (2), उपधारा (3) और उपधारा (4) के उपबन्ध तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे जब तक उनमें वर्णित प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए ऐसे सभी राज्यों के विधान मण्डलों द्वारा, जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नही अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिए जाते और जब तक पूर्वोक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात ऐसी समाप्ति के लिए संसद क हर एक सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिया जाता।

4. राजभाषा के संबंध में समिति

(1) जिस तारीख को धारा 3 प्रवृत्त होती है उससे दस वर्ष के समाप्ति के पश्चात, राजभाषा के सम्बन्ध में एक समिति, इस विषय का संकल्प संसद के किसी भी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी से प्रस्तावित और दोनों सदनों द्वारा पारित किए जाने पर गठित की जाएगी।

(2) इस समिति में तीस सदस्य होंगे जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे तथा इस राज्य सभा के सदस्य होंगे, जो क्रमशः लोक सभा के सदस्यों तथा राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(3) इस समिति का कर्तव्य होगा कि वह संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रयोग में की गई प्रगति का पुनर्विलोकन करें और उस पर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति को प्रतिवेदन करें और राष्ट्रपति उस प्रतिवेदन को संसद के हर एक सदन के समक्ष रखवाएगा और सभी राज्य सरकारों को भिजवाएगा।

(4) राष्ट्रपति उपधारा (3) में निर्दिष्ट प्रतिवदेन पर और उस राज्य सरकारों ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किए हों तो उन पर विचार करने के पश्चात उस समस्त प्रतिवदेन के या उसके किसी भाग के अनुसार निर्देश निकाल सकेगा।

परन्तु इस प्रकार निकाले गए निदेश धारा 3 के उपबन्धों से असंगत नहीं होंगे।

5. केन्द्रीय अधिनियमों आदि का प्रधिकृत हिन्दी अनुवाद

(1) नियत दिन को और उसके पश्चात् शासकीय राजपत्र में राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित-

(क) किसी केन्द्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का अथवा

(ख) संविधान के अधीन या किसी केन्द्रीय अधिनियम के अधीन निकाले गए किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि का हिन्दी में अनुवाद उसका हिन्दी में प्राधिकृत पाठा समझा जाएगा।

(2) नियत दिन से ही उन सब विधेयकों के, जो संसद के किसी भी सदन में पुर:स्थापित किए जाने हो और उन सब संशोधनों के, जो उनके सम्बन्ध में संसद के किसी भ सदन में प्रस्तावित किए जाने हों, अंग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथ-साथ उनका हिन्दी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किसी जाएगा, जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाए।

6. कतिपय दशाओं में राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद

जहां किसी राज्य के विधानमण्डल ने उस राज्य के विधानमण्डल द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में प्रयोग के लिए हिन्दी से भिनन कोइ्र भाषा विहित की है वहां, संविधान के अनुच्छेद 348 के खण्ड (3) द्वारा अपेक्षित अंग्रेजी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त, उसका हिन्दी में अनुवाद उस राज्य के शासकीय राजपत्र में, उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात प्रकाशित किया जा सकेगा और ऐसी दशा में ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिन्दी में अनुवाद हिन्दी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

7. उच्च न्यायालयों के निर्णयों आदि में हिन्दी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग

नियत दिन से ही या तत्पश्चात किसी भी दिन से किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूव्र सम्मति से, अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग, उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनों के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और जहां कोई निर्णय, डिक्री या आदेश (अंग्रेजी भाषा से भिन्न) ऐसी किसी भाषा में पारित किया या दिया जाता है वहां उसके साथ-साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से निकाला गया अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी होगा।

8. नियम बनाने की शक्ति

(1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगी।

(2) इस धारा के अधीन बनाया गया हर नियम, बनाए जाने के पश्चात यथाशीघ्र, संसद के हर एक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा। वह अवधि एक सत्र में, अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी। यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रममिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सद या उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात यह निस्प्रभाव हो जाएगा। किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निस्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

9. कतिपय उपबंधों का जम्मू-कश्मीर को लागू न होना

धारा 6 और धारा 7 के उपबन्ध जम्मू-कश्मीर राज्य को लागू न होंगे।

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 (यथा संशोधित, 1987, 2007 तथा 2011)

सा.का.नि. 1052 - राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) की धारा 3 की उपधारा (4) के साथ पठित धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित नियम बनाती है, अर्थातः-

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ

(क) इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियमक, 1976 है।

(ख) इनका विस्तार, तमिलनाडु राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है।

(ग) ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत्त होंगे।

2. परिभाषाएं - इन नियमों में, जब तक कि संदर्भ में अन्यथा अपेक्षित न हो

(क) 'अधिनियम' से राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) अभिप्रेत हैं,

(ख) 'केन्द्रीय सरकार के कार्यालय' के अन्तर्गत निम्नलिखित भी है, अर्थात,

(क) केन्द्रीय सरकार का कोई मंत्रालय, विभाग या कार्यालय;

(ख) केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी आयोग, समिति या अधिकरण का कोई कार्यालय; और

(ग) केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रण के अधीन किसी निगम या कम्पनी का कोई कार्यालय।

(ग) 'कर्मचारी' से केन्द्रीय सरकार के कार्यालय में नियोजित कोई व्यक्ति अभिप्रेत है,

(घ) 'अधिसूचित कार्यालय' से नियम 10 के उपनियम (4) के अधीर अधिसूचित कार्यालय, अभिप्रेत है,

(ङ) 'हिन्दी में प्रवीणता' से नियम 9 में वर्णित प्रवीणता अभिप्रेत है,

(च) 'क्षेत्र क' से बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तराखण्ड, राजस्थान और उत्तरप्रदेश राज्य तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दिल्ली संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत है,

(छ) 'क्षेत्र ख' से गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चंडीगढ़, दमन और दीव तथा छादरा और नागर हवेली संघ राजय क्षेत्र अभिप्रेत हैं,

(ज) 'क्षेत्र ग' से खंड (च) और (छ) में निर्दिष्ट राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में भिन्न राज्य तथा संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत है,

(झ) 'हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान' से नियम 10 में वर्णित कार्यसाधक ज्ञान अभिप्रेत हैं।

3. राज्यों आदि और केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न कार्यालयों के साथ पत्रादि

(1) केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'क' में किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र को या ऐसे राज्य सा संघ राज्य क्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कायालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि असाधारण दशाओं को छोड़कर हिन्दी में होंगे और यदि उनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा।

(2) केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से

(क) क्षेत्र 'ख' में किसी राज्य सा संघ राज्य क्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) को पत्रादि सामान्यतया हिन्दी में होंगे और यदि इनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा; परन्तु यदि कोई ऐसा राज्य या संघ राज्य क्षेत्र यह चाहता है कि किसी विशिष्ट वर्ग या प्रवर्ग के पत्रादि या उसके किसी कार्यालय के लिए आशयित पत्रादि संबद्ध राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट अवधि तक अंग्रेजी या हिन्दी में भेजे जाएं और उसके साथ दूसरी भाषा में उसका अनुवाद भी भेजा जाए तो ऐसे पत्रादि उसी रीति से भेज जाएंगे।

(ख) क्षेत्र 'ख' के किसी राज्य या संघ राजय क्षेत्र में किसी

व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में भेजे या सकते हैं।

(3) केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'ग' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि अंग्रेजी में होंगे।

(4) उप नियम (1) और (2) में किसी बात के होते हुए भी, क्षेत्र 'ग' में केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'क' या 'ख' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं। परन्तु हिन्दी में पत्रादि ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर अवधारित करें।

4. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि

(क) केन्द्रीय सरकार के किसी एक मंत्रालय या विभाग और किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

(ख) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग और क्षेत्र 'क' में स्थित संलग्न या अधीनस्थ कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी में होंगे और ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सकरार, ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे संबंधित आनुषंगिक बातों को धन में रखते हुए, समय-समय पर अवधारित करें;

(ग) क्षेत्र 'क' में स्थित केन्द्रीय सरकार के ऐसे कार्यालयों के बीच, जो खण्ड (क) या खण्ड (ख) में विनिर्दिष्ट कार्यालयों से भिन्न हैं, पत्रादि हिन्दी में होंगे;

(घ) क्षेत्र 'क' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और क्षेत्र 'ख' या 'ग' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;
परन्तु ये पत्रादि हिन्दी में ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर अवधारित करे;
परन्तु ये पत्रादि हिन्दी में ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर अवधारित करें;

(ङ) क्षेत्र 'ख' या 'ग' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

परन्तु ये पत्रादि हिन्दी में ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर अवधारित करे;

परन्तु जहां ऐसे पत्रादि

(i) क्षेत्र 'क' या क्षेत्र 'ख' किसी कार्यालय को संबोधित हैं वहां यदि आवश्यक हो तो, उनका दूसरी भाषा में अनुवाद, पत्रादि प्राप्त करने के स्थान पर किया जाएगा;

(ii) क्षेत्र 'ग' में किसी कार्यालय को संबोधित है वहां, उनका दूसरी भाषा में अनुवाद, उनके साथ भेज जाएगा;

परन्तु यह और कि यदि कोई पत्रादि किसी अधिसूचित कार्यालय को संबोधित है तो दूसरी भाषा में ऐसा अनुवाद उपलबध कराने की अपेक्षा नहीं की जाएगी।

5. हिन्दी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर

नियम 3 और नियम 4 में किसी बात के होते हुए भी, हिन्दी में पत्रादि के उत्तर केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से हिन्दी में दिए जांएगे।

6. हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग

अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (3) में निर्दिष्ट सभी दस्तावेजों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व होगा कि वे यह सुनिश्चित कर लें कि ऐसी दस्तावेजं हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही में तैयार की जाती हैं, निष्पादित की जाती हैं और जारी की जाती है।

7. आवेदन, अभ्यावेदन आदि

(1) कोई कर्मचारी आवेदन, अपील या ओीयावेदन हिन्दी या अंग्रेजी में कर सकता है।

(2) जब उपनियम (1) में विनिर्दिष्ट कोई आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी में किया गया हो उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर किए गए हों, तब उसका उत्तर हिन्दी में दिया जाएगा।

(3) यदि कोई कर्मचारी यह चाहता है कि सेवा संबंधी विषयों (जिनके अन्तर्गत अनुशासनिक कार्यवाहियां भी हैं) से संबंधित कोई आदेश या सूचना, जिसका कर्मचारी पर तामील किया जाना अपेक्षित है, यथास्थिति, हिन्दी या अंग्रेजी में होनी चाहिए तो वह उसे असम्यक विलम्ब के बिना उसी भाषा में दी जाएगी।

8. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में टिप्पणी का लिख जाना

(1) कोई कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पणी या कार्यवृत्त हिंदी या अंग्रेजी में लिख सकता है और उससे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वी उसका अनुवाद दूसरी भाषा में प्रस्तुत करें।

(2) केन्द्रीय सरकार का कोई भी कर्मचारी, जो हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखता है, हिन्दी में किसी दस्तावेज के अंग्रेजी अनुवाद की मांग तभी कर सकता है, जब वह दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का है, अन्यथा नहीं।

(3) यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई विशिष्ट दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का है या नहीं तो विभाग या कार्यालय का प्रधान उसका विनिश्चय करेगा।

(4) उपनियम (1) में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार, आदेश द्वारा ऐसे अधिसूचित कार्यालयों को विनिर्दिष्ट कर सकती है जहां ऐसे कर्मचारियों द्वारा जिन्हें हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, टिप्पणी, प्रारूपण और ऐसे अन्य शासकीय प्रयोजनों के लिए, जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, केवल हिन्दी का प्रयोग किया जाएगा।

9. हिन्दी में प्रवीणता

यदि किसी कर्मचारी ने

(क) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर कोई परीक्षा हिन्दी के माध्यम से उत्तीर्ण कर ली है, या

(ख) स्नातक परीक्षा में अथवा स्नातक परीक्षा की समतुल्य या उससे उच्चतर किसी अन्य परीक्षा में हिन्दी को एक वैकल्पिक विषय के रूप में लिया हो, या

(ग) यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषण करता है कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है,

तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर ली है।

10. हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान

(1) (क) यदि किसी कर्मचारी ने

(i) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर परीक्षा हिन्दी विषय के साथ उत्तीर्ण कर ली है, या

(ii) केन्द्रीय सरकार की हिन्दी परीकाश योजना के अन्तर्गत आयोजित प्राज्ञ परीक्षा या यदि उस सरकार द्वारा किसी विशिष्ट प्रवर्ग केपदों के सम्बन्ध में उस योजना के अन्तर्गत कोई निम्नतर परीक्षा विनिर्दिष्ट है, वह परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है, या

(iii) केन्द्रीय सरकार द्वारा उस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अन्य परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है, या

(ख) यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसने ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है; तो उसके बारे में यह समझा जाएका कि उसने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

(2) यदि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में कार्य करने वाले कर्मचारियों में से अस्सी प्रतिशत ने हिन्दी का ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है तो उस कार्यालय के कर्मचारियों के बारे में सामान्यतया यह समझा जाएगा कि उन्होंने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

(3) केन्द्रीय सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अधिकारी यह अवधारित कर सकता है कि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय के कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है या नहीं।

(4) केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उन कार्यालयों के नाम राजपत्र में अधिसूचित किए जाएंगे।

परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार की राय है कि किसी अधिसूचित कार्यालय में काम करने वाले और हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों का प्रतिशत किसी तारीख में से उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट प्रतिशत से कम हो गया है, तो वह राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकती है कि उक्त कार्यालय उस तारीख से अधिसूचित कार्यालय नहीं रह जाएगा।

11. मैनुअल, संहिताएं, प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, लखेन सामग्री आदि।

(1) केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से संबंधित सभी मैनुअल, संहिताएं और प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषिक रूप में यथास्थिति, मुद्रित या साइक्लोस्टाइल किया जाएगा और प्रकाशित किया जाएगा।

(2) केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग किए जाने वाले रजिस्टरों के प्ररूप और शीर्षक हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे।

(3) केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग के लिए सभी नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्रशीर्ष और लिफाफों पर उत्कीर्ण लेख तथा लेखन सामग्री की अन्य मदें हिन्दी और अंग्रेजी में लिखी जाएंगी, मुद्रित या उत्कीर्ण होंगी;

परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार ऐसा करना आवश्यक समझती है तो वह, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय को इस नियम के सभी या किन्हीं उपबन्धों से छूट दे सकती है।

12. अनुपालन का उत्तरदायित्व

(1) केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह

(i) यह सुनिश्चित करे कि अधिनियम और इन नियमों उपबंधों और उपनियम (2) के अधीन जारी किए गए निर्देशों का समुचित रूप से अनुपालन हो रहा है; और

(ii) इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त और प्रभावकारी जांच के लिए उपाय करे।

(2) केन्द्रीय सरकार अधिनियम और इन नियमों के उपबन्धों के सम्यक अनुपालन के लिए अपने कर्मचारियों और कार्यालयों को समय-समय पर आवश्यक निर्देश जारी कर सकती है।

(भारत का राजपत्र, भाग-2, खंड 3, उपखंड (i) में प्रकाशनार्थ)

भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग
नई दिल्ली, दिनांकः अगस्त, 2007

अधिसूचना

का.आ. (अ).- केन्द्रीय सरकार, राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) की धारा 3 की उपधारा (4) के साथ पठित धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 का और संशोधन करने के लिए निम्नलिखित नियम बनाती है, अर्थात

1. (1) इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) संशोधन नियम, 2007 है।

(2) ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत्त होंगे।

2. राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 में -

नियम 2 के खंड (च) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रखा जाएगा, अर्थात्

(च) ''क्षेत्र क'' से बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह संघ राज्य क्षेत्र' अभिप्रेत हैं।

मृदा उर्वरता के लिए कार्बनिक पदार्थ की उपयोगिता

कैलाश कुमार[1], तरुण अदक[2] एवं विनोद कुमार सिंह[3]
[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

मृदा कार्बनिक पदार्थ पौधों तथा जन्तुओं के अवशेषों से निर्मित एक जटिल पदार्थ है। यह मृदा में पोषक तत्वों के भंडारण का कार्य करता है। मृदा में इसकी मात्रा मृदा की उर्वरा शक्ति का द्योतक है। जल भी कार्बनिक पदार्थ का एक अवयव है। मृदा कार्बनिक पदार्थ प्राप्त होने के प्रमुख स्रोत पादप अवशेष, हरी खाद की फसलें, गोबर की खाद, कम्पोस्ट, सूक्ष्म जीवाणु और मृदा जन्तुओं के अवशेष हैं। पौधों और जन्तुओं के अवशेष मृदा में उचित नमी और वायु की दशा में विभिन्न प्रकार के मृदा सूक्ष्म जीवों द्वारा विच्छेदित कर दिये जाते हैं। अवशेष पदार्थों की प्रकृति, मृदा नमी, मृदा तापमान, पी.एच. मान और कार्बन नाइट्रोजन अनुपात विच्छेदन की दर को प्रभावित करते हैं। सूक्ष्म जीवों की प्रतिक्रिया से ताप के रूप में ऊर्जा, सरल अंतिम उपफल और ह्यूमस बनता है। कार्बनिक पदार्थों में स्थितिक ऊर्जा विद्यमान रहती है जिसका उपयोग मृदा सूक्ष्म जीवों द्वारा किया जाता है। विच्छेदन उपरांत कार्बन, नाइट्रोजन, सल्फर, फास्फोरस आदि उपफल प्राप्त होते हैं। कार्बन सभी कार्बनिक पदार्थों का मुख्य अवयव है। किसी भी कार्बनिक पदार्थ में कार्बन एवं कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में 1:1.724 का अनुपात होता है। मृदा में उपस्थित सभी प्रकार के जीव ऊर्जा का अधिकांश भाग कार्बन के ऑक्सीकरण से प्राप्त करते है।

ह्यूमस मृदा कार्बनिक पदार्थ का एक अंश है इसका निर्माण जटिल जीव रासायनिक अभिक्रियाओं से होता है। यह मृदा कार्बनिक पदार्थों के विच्छेदन से बनता है एवं क्ले की तरह कोलायडीय, अम्लीय और जल में अविलेय होता है। यह मृदा में सदैव परिवर्तनशील होता है। इसमें जलधारण क्षमता, जल शोषण शक्ति और उत्प्रेरक गुण अधिक होते हैं। पानी शोषित कर इसमें फूलने और सिकुड़ने का गुण एवं अधिक धनायन विनिमेय क्षमता होने से अत्यधिक प्रतिरोधक क्षमता होती है।

[1]प्रधान वैज्ञानिक, [2]वैज्ञानिक एवं [3]सहा. मुख्य तकनीकी अधिकारी

कार्बनिक पदार्थ का मृदा गुणों एवं उर्वरता पर प्रभाव

मृदा में उचित ढंग से सड़ा हुआ कार्बनिक पदार्थ काफी मात्रा में होता है जो मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को प्रभावित करते है।

भौतिक प्रभाव

1. मृदा सतह पर मोटे कार्बनिक पदार्थों की परत होने से मृदा क्षरण कम हो जाता है एवं मृदा में जल की अधिक उपलब्धता पौधों की समुचित वृद्धि में सहायक होती है।
2. कार्बनिक पदार्थ मृदा सतह पर विछावन के समान कार्य करता है जो मृदा के तापमान को गर्मियों में कम करता है तथा सर्दियों में मृदा को गर्म रखता है जिससे पौधों की जड़ों की समुचित ढंग से वृद्धि होती है।
3. ह्यूमस मृदा की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ता है तथा हवा के द्वारा होने वाले मृदा क्षरण को कम करता है।
4. मृदा संरचना में सुधार के साथ-साथ मृदा की जल धारण क्षमता को बढ़ाता है।

रासायनिक प्रभाव

1. मृदा कार्बनिक पदार्थ पौधों के पोषक तत्वों का भण्डार गृह होता है जो फसलों की उपज पर लाभकारी प्रभाव डालता है।
2. मृदा कार्बनिक पदार्थ के विच्छेदन से विनिमय योग्य और उपलब्ध होने वाले धनायन, पौटेशियम, कैल्सियम और मैग्नीशियम के लिए अस्थायी रूप से भण्डार गृह का कार्य करता है। जीवांश पदार्थ से अमोनिया उर्वरकों

का विक्षालन रुक जाता है।

3. इसमें पौधों की वृद्धि हेतु अनेक आवश्यक हारमोन पाये जाते हैं।

4. इसके विच्छेदन से कार्बनिक अम्ल बनते हैं जो क्षारीय मृदा के पी.एच. मान को कम करते हैं तथा मृदा में उपलब्ध अघुलनशील पोषक तत्वों की घुलनशीलता एवं उलब्धता में वृद्धि करते हैं।

जैविक प्रभाव

1. मृदा जीवाणुओं की संख्या वृद्धि एवं क्रियाशीलता हेतु कार्बनिक पदार्थ एक उचित माध्यम का कार्य करता है।

2. मृदा जीवाणुओं के माध्यम से मृदा वायु संचार और जल निकास में सुधार होता है।

3. यह मृदा सूक्ष्म जीवों का भोज्य पदार्थ है जो उनके शरीर निर्माण में सहायक होता है।

4. सूक्ष्म जीव पोषक तत्वों की उपलब्धता में सहायक होते हैं।

कार्बन नाइट्रोजन अनुपात

मृदा कार्बनिक पदार्थ में कार्बन और नाइट्रोजन की मात्रा में एक गहरा संबंध रहता है। कार्बन ऊर्जा प्रदान करने का कार्य करता है जबकि नाइट्रोजन पौधों के लिए एक प्रमुख आवश्यक पोषक तत्व है। मृदा में उपलब्ध कार्बन और नाइट्रोजन की मात्रा के अनुपात को (कार्बन:नाइट्रोजन) अनुपात कहते है। यह अनुपात परिवर्तनशील होता है। कृषि योग्य मृदा में इसका औसत अनुपात 10:1 होता है। अनुपात संकुचित होने पर आसानी से प्राप्त होने वाले कार्बन की मात्रा घट जाती है। मृदा में अनुपात विस्तृत होने पर सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है जिससे कार्बनिक पदार्थों का विच्छेदन की गति तीव्र हो जाती है एवं मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है।

मृदा कार्बन मृदा उपयोग के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होता है जो कि सस्य क्रियाओं, फसल पद्धति, उर्वरकीकरण, मृदा सुधारक पर निर्भर करता है। विभिन्न फसल पद्धतियों द्वारा मृदा में संरक्षित मृदा कार्बन की मात्रा भी भिन्न-भिन्न होती है।

सारणीः मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा (रोपण के 6 वर्ष बाद)

Øe l-	i)fr	tSfod dkcZu dh ek=k ¼izfr'kr½	
		0&15 l-eh-	15&30 l-eh-
1.	वार्षिक फसल	0.42	0.37
2.	कृषि वानकी	0.71	0.73
3.	कृषि बागवानी	0.73	0.74
4.	कृषि सिल्वीकल्चर	0.38	0.56

वायुमंडल में 762 गिगाटन कार्बन है जिसका लगभग संपूर्ण भाग कार्बन डाई ऑक्साइड के रूप में होता है। समुद्र में लगभग 40000 गिगाटन कार्बन भण्डारित है जिसका 90 गिगाटन प्रति वर्ष कार्बन डाई ऑक्साइड का समुद्र और वातावरण में विनिमय होता है। पूरे विश्व में मृदा की ऊपरी सतह (0-30 सें.मी.) में कार्बनिक कार्बन की मात्रा लगभग 1500 पीकोग्राम है जबकि भारत में इसकी मात्रा केवल 9 पीकोग्राम है। मृदा, कार्बन के भण्डारण के साथ-साथ इसके स्रोत का भी कार्य करती है। कार्बन का अधिक स्थरीकरण मृदा में होने पर मृदा संरचना मृदा जलधारण क्षमता, पोषक तत्वों की उपलब्धता पौधों के लिए लाभदायक होती है।

मृदा कार्बनिक पदार्थ प्रबंधन

कार्बनिक पदार्थों के विच्छेदन से पौधों और जन्तुओं के अवशेष कार्बनिक पदार्थ सरल अकार्बनिक तत्वों या यौगिकों में परिवर्तित हो जाते है। विभिन्न जीवों की विच्छेदन क्षमता पादप पदार्थों की प्रकृति, मृदा में कार्बन नाइट्रोजन अनुपात, तापमान, नमी, ऑक्सीजन की उपलब्धता, पी.एच. मान आदि पर निर्भर करती है। इन कारकों का उचित प्रबंधन कर मृदा में पौधों के लिए कार्बनिक पदार्थ की उपलब्धता बढ़ायी जा सकती है। इसके विच्छेदन के फलस्वरूप ताप के रूप में उत्पन्न या सूक्ष्म जीवों द्वारा प्रयोग की गयी ऊर्जा सरल अंतिम उपफल और ह्यूमस बनता है। कार्बन सभी कार्बनिक

पदार्थ का एक मुख्य अवयव है। मृदा में उपस्थित जीव अपनी आवश्यक ऊर्जा का अधिकांश भाग कार्बन के ऑक्सीकरण से प्राप्त करते हैं जिसके परिणामस्वरूप ऑक्साइड्स लगातार और अधिक मात्रा में निकलते हैं जो कार्बन डाई ऑक्साइड की थोड़ी मात्रा में पानी से क्रिया कर कार्बोनिक अम्ल और कैल्सियम, पोटैशियम तथा अन्य कार्बोनेट और बाइकार्बोनेट बनते है। यह लवण विलेय होते है। इनका मृदा के गुणों पर प्रभाव पड़ता है। कार्बनिक नाइट्रोजन का अधिक गतिशील अकार्बनिक अमोनियम एवं नाइट्रेट आयनों में रूपान्तरण हो जाता है। खनिज में अमीनीकरण, अमोनीकरण और नाइट्रीकरण क्रम सम्मिलित है। इन क्रियाओं को प्रभावित करने वाले मुख्य कारक मृदा ताप, वायुसंचार, नमी एवं पी.एच. मान है। मृदा में उपस्थित आवश्यक पोषक तत्वों का पौधों द्वारा अवशोषण से सीधा संबंध होता है जिससे पौधों की वृद्धि एवं उपज प्रभावित होती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ाने में निम्नलिखित कारक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

1. मृदा में कम-से-कम सस्य क्रिया करना अथवा शून्य सस्य क्रिया को अपनाना।
2. हरी खादों का प्रयोग करना।
3. गोबर की खाद, कम्पोस्ट और अन्य कार्बनिक खादों एवं जैव-उर्वरकों का प्रयोग करना।
4. पेड़ों की गिरी हुई पत्तियों को बिछावन के रूप में प्रयोग करना। इससे मृदा में जल/नमी को भी संरक्षित किया जा सकता है।
5. जैविक उर्वरकों के प्रयोग से मृदा में सूक्ष्म जीवों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है जो मृदा स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक है।
6. सही फसल चक्र अपनाकर कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है।

मृदा कार्बनिक पदार्थ से मृदा/पौधों को लाभ

1. मृदा में होने वाली सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियायें सुचारू रूप से चलती रहती है और पोषक तत्वों की उपलब्धता पौधों को निरन्तर बनी रहती है।
2. मृदा की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
3. मृदा कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा पौधों की अनेक घातक रोगों से रक्षा करती है।
4. यह उत्प्रेरक के रूप में मृदा में पोषक तत्वों की आनुपातिक उपलब्धता को संतुलित करता है।
5. खनिजों के हानिकारक प्रभावों को आयनिक संतुलन के द्वारा कम करने में सहायक की भूमिका का कार्य करता है।
6. मृदा की जल धारण क्षमता बढ़ाने एवं मृदा क्षरण को रोकने में सहायक होता है।
7. मृदा सूक्ष्म जीवों के लिए आवश्यक आधार है जिससे उनकी संख्या एवं क्रियाशीलता में सुधार होता है।

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए, इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।
आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी, शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।
हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में, हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।
सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं, सारी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।
मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही, हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

- दुष्यन्त कुमार

मृदा स्वास्थ्य में जैव उर्वरकों एवं जैविक खादों की महत्ता

कैलाश कुमार[1], अतुल सिंघा[2], तरुण अदक[3] एवं विनोद कुमार सिंह[4]

[1,2,3,4]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

मृदा के माध्यम से ही पौधों द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण किये जाने के कारण मृदा का स्वास्थ्य पौधों की समुचित वृद्धि के लिए अत्यावश्यक होता है। पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता, फसल उत्पादकता और मृदा स्वास्थ्य का जैविक मृदा कार्बन से सीधा संबंध होता है। जीवांशयुक्त खाद जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद आदि का कम प्रयोग किये जाने के कारण फसल की उत्पादकता में कमी होती जा रही है। जीवांश पदार्थ की घटती हुई मात्रा के फलस्वरूप मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में ह्रास होने के साथ-साथ मृदा में पोषक तत्वों की कमी भी हो रही है। उर्वरकों का असंतुलित और अधिक मात्रा में प्रयोग किये जाने से जीवांश खादों का प्रचलन कम हो गया है जिसके परिणामस्वरूप मृदा की उत्पादकता एवं उर्वराशक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग मृदा जाँच पर आधारित होने के साथ-साथ उनके सन्तुलित उपयोग एवं साथ में जैव उर्वरक और जीवांश खादों का प्रयोग भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए। गोबर की खाद, कम्पोस्ट तथा तैयार किये गये जैव उर्वरकों में सूक्ष्म जीवाणुओं की असंख्य जीवित कोशिकाएँ होती हैं जो वायुमण्डल के नाइट्रोजन को पौधों के लिए उपलब्ध कराती हैं। इस प्रकार के जैव उर्वरकों में *राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम, एजोला* और नील हरित शैवाल आते हैं। कुछ फास्फोरस घोलक सूक्ष्म जीवाणु (पी.एस.एम.) मृदा में उपलब्ध अप्राप्य फास्फोरस को पौधों के लिये उपलब्ध फास्फोरस में बदल देते हैं।

एजोस्पाइरिलम तथा *एजोटोबैक्टर* अन्न वाली फसलों और *राइजोवियम* सभी प्रकार की दलहनी फसलों में वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करता है। पी.एस.एम. मृदा में उपलब्ध अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील कर पौधों के लिए इसकी उपलब्धता को बढ़ाता है। *एजोला* एवं नील हरित शैवाल धान की फसल के लिए नाइट्रोजन स्थिरीकरण का कार्य करते हैं।

जैव उर्वरक, रासायनिक उर्वरकों का विकल्प नहीं होते हुए भी इसके प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों की मात्रा में कमी की जा सकती है। फसल उत्पादन में जैव उर्वरकों का प्रयोग किया जाना एक सरल एवं कम लागत वाली तकनीक है जिसके उपयोग से पर्यावरण की गुणवत्ता बनी रहती है। टिकाऊ खेती के लिए मृदा स्वास्थ्य को उच्च कोटि का बनाये रखने के लिए जैव उर्वरकों को एकीकृत मृदा एवं पौध पोषण प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण अवयव माना जाता है।

जैविक खादों से मृदा की उत्पादकता एवं उर्वराशक्ति के संरक्षण के अलावा पौधों के मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की पूर्ति होती है। जीवांश पदार्थ मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार लाकर मृदा एवं पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। देश की अधिकांश मृदाओं में जीवांश पदार्थ की कमी होने के कारण मृदा उर्वरता संरक्षण में जैविक खादों का योगदान और भी महत्वपूर्ण हो गया है। लंबे समय से सघन खेती किये जाने के कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि कारण हुई है किन्तु मृदा उर्वराशक्ति में कमी आयी है। उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग के कारण उत्पादन क्षमता कम होती जा रही है एवं मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता प्रभावित हो रही है। मृदा में जीवांश कार्बन का स्तर कम होने से मृदा में मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी परिलक्षित होती है जिससे उत्पादन प्रभावित होता है।

जैविक खादों द्वारा मृदा पोषक तत्वों की आपूर्ति

अधिक उपज देने वाली प्रजातियों की सघन खेती करने से मृदा में मुख्य और सूक्ष्म तत्वों का स्तर कम हो जाता है जिससे मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जैविक

[1]प्रधान वैज्ञानिक, [2,3]वैज्ञानिक एवं [4]सहा.मु.त. अधिकारी

खादों के प्रयोग से मृदा स्वास्थ्य में बहुत सुधार लाया जा सकता है।

जैव उर्वरक प्रयोग के लाभ

1. मृदा के भौतिक और रासायनिक गुणों में सुधार होता है।
2. लवणीय, अम्लीय एवं क्षारीय मृदाओं में सुधार होता है।
3. मृदा वायु संचार और मृदा संरचना में महत्वपूर्ण सुधार होता है जिससे मृदा प्रदूषण नियंत्रित होती है।
4. खाद्यानों, फलों और सब्जियों की उपज एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है।
5. रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग को कम कर मृदा स्वास्थ्य ठीक करने का महत्वपूर्ण उपाय है।
6. कम्पोस्ट एवं जैव उर्वरकों के प्रयोग से वानस्पतिक अवशेषों की सड़न प्रक्रिया तेज होती है और पोषण क्षमता में भी सुधार होता है।
7. जैव उर्वरक जीवाणु विभिन्न प्रकार के विटामिन, हार्मोन आदि भी स्रावित करते हैं जो पौधों की बढ़वार और विकास में सहायक होते हैं।
8. कुछ जैव उर्वरक (जीवाणु विशेष प्रकार के फफूँद) जीवरोधी रसायन भी पैदा करते हैं जिनसे कुछ मृदा जनित पौध रोगों की रोकथाम में सहायता मिलती है तथा पौधों में रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है।

विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों की क्षमता/क्रियाशीलता को निम्नलिखित सारणी में प्रदर्शित किया गया है।

विभिन्न जैव उर्वरकों की क्षमता/सामर्थ्य

Ø- l-	tio mojd	ukbVªkstu@QkLQksjl ;kxnku fd-xzk-@gDV;j	tio mojd iz;ksx ls mit esa of) %izfr'kr%
1.	*राइजोबियम* (दलहनी फसलों के साथ)	50–300	10–60
2.	*एजोटोबैक्टर* (गैर दलहनी फसलों में)	15–25	10–20
3.	*एजोस्पाइरिलम* (गैर दलहनी फसलों में)	20–35	20–35
4.	नील हरित शैवाल (धान)	20–30	10–20
5.	*एजोला* (धान में सह–फसल के रूप में)	20–25	15–25
6.	*एसिटोबैक्टर* (गन्ना)	150–300	25–150
7.	फास्फेटिका जैव उर्वरक (पी.एस.एम.)	10–15	10–25
8.	वैम जैव उर्वरक	10–40	10–55

जैव उर्वरकों से उचित लाभ प्राप्त नहीं हो पाने के संभावित कारण।

1. जैव उर्वरक गुणवत्ता में कमी

अ. जीवाणुओं की संख्या में कमी।

ब. जीवाणुओं की उचित प्रजाति का प्रयोग नहीं करना।

स. उत्पाद में अवांछित जीवाणुओं की अधिक संख्या का होना।

2. जैव उर्वरक के भंडारण में कमी

अ. पैकेटों का भंडारण गर्म तापमान पर किया हो।

ब. पैकेटों को उचित भंडारित नहीं किया गया हो।

3. जैव उर्वरक प्रयोग प्रक्रिया में उचित सावधानी नहीं बरतना।

अ. फसल विशेष से अलग अन्य फसल में गलत विधि प्रयोग द्वारा।

ब. जैव उर्वरक का उचित मात्रा में बीज पर नहीं चिपक पाना।

स. फसल संरक्षण हेतु अधिक मात्रा में रसायनों का प्रयोग।

4. मृदा संबंधी कारण

अ. मृदा में अधिक अम्लीयता या क्षारीयता का होना।

ब. अधिक तापमान या नमी की कमी।

स. मृदा में फास्फोरस एवं मोलिब्डिनम पोषक तत्वों की कमी।

घ. मृदा में प्राकृतिक अन्य जीवाणुओं की अधिकता होना।

जैव उर्वरक प्रयोग में उपयोगी बिन्दु

1. जैव उर्वरकों का प्रयोग निर्धारित तिथि के पहले करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं।
2. जैव उर्वरक को तेज धूप से बचाना चाहिए और ठंडे स्थानों पर भंडारित करना चाहिए जिससे उनकी क्रियाशीलता कायम रहे।
3. जैव उर्वरक से उपचारित बीज को समय सीमा में ही बुआई कर देनी चाहिए।

जैविक खादों का मृदा स्वास्थ्य के लिए महत्व

जैविक खाद मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को प्रभावित करती हैं जिससे मृदा स्वास्थ्य पर अनुकूल प्रभाव पड़ने के साथ-साथ उत्पादन में भी बढ़ोत्तरी होती है और आय भी बढ़ती है।

1. भौतिक गुणों पर प्रभाव

(अ) जैविक खादों के प्रयोग से मृदा संरचना में सुधार होता है एवं मृदा में वायु संचार भी बढ़ता है।

(ब) पौधों की जड़ों का विकास अच्छा होने के साथ-साथ पौधों की वृद्धि अच्छी होती है।

(स) मृदा जलधारण क्षमता में वृद्धि और मृदा क्षरण में कमी आती है तथा मृदा तापक्रम में सुधार भी होता है।

2. मृदा के रासायनिक गुणों पर प्रभाव

अ. पौधों के लिए पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि होती है।

ब. मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है।

स. मृदा की क्षार विनिमय क्षमता बढ़ जाती है।

द. मृदा में अनुपलब्ध पोषक तत्व उपलब्ध पोषक तत्वों में बदल जाते हैं जिससे पौधों की वृद्धि अच्छी होती है।

3. जैविक गुणों पर प्रभाव

अ. मृदा में लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या एवं उनकी क्रियाशीलता बढ़ जाती है।

ब. मृदा में लाभकारी अन्य जीवाणुओं की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है।

स. जीवाणुओं द्वारा वातावरण की नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है।

द. जीवाणुओं द्वारा मृदा में पौधों की बढ़वार हेतु उचित माध्यम प्रदान किया जाता है।

4. जैविक खादों का उपज पर प्रभाव

अ. जैविक खादों के प्रयोग से उर्वरकों की बचत के साथ-साथ उत्पादन क्षमता में बढ़ोत्तरी होती है।

ब. क्षारीय मृदाओं में हरी खाद (ढेंचा) का प्रयोग करने से मृदा की क्षारीयता में कमी आती है एवं अधिक लाभकारी उपज प्राप्त होती है।

स. फसलों के अवशेषों को खाद बनाकर प्रयोग करने से उर्वरकों की बचत के साथ-साथ अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

द. अधिक एवं टिकाऊ कृषि उत्पादन में जैविक खादों का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

य. पर्यावरण में सुधार के साथ अधिक गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त होती है।

सम्पूर्ण पोषक तत्वों की पूर्ति उर्वरकों के माध्यम से करना कठिन है। ऐसी स्थिति में उर्वरकों के साथ फसलों के अवशेष और जैविक खादों के प्रयोग से पोषक तत्वों की पूर्ति करनी चाहिए जिससे उत्पादन और मृदा उत्पादकता निरन्तर बनी रहे।

आम की किस्मों के संरक्षक किसान

शैलेन्द्र राजन[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

मलिहाबाद अपनी अनोखी आम की किस्मों के कारण पूरे विश्व में विख्यात है और इन किस्मों की संख्या सैकड़ों में है। ये किस्में किसी एक किसान के प्रयास का परिणाम नहीं हैं बल्कि पूरे समूह के प्रयास का नतीजा हैं। ये किस्में धीरे-धीरे लुप्त हो रही हैं जिसके कारण आने वाले समय में शायद इनकी यादें ही शेष रह जायेंगी। अतः वर्तमान समय जो भी किस्में उपलब्ध हैं उनको संरक्षित करने के पीछे इस क्षेत्र के बागवानों का ही अथक प्रयास है।

बाग में दर्जनों ऐसी किस्में होती हैं जिनसे बागवान को व्यावसायिक किस्मों की अपेक्षा बहुत कम धन मिलता है। परन्तु इन किस्मों का महत्व विविधता संरक्षण के प्रयासों के लिए बहुमूल्य है।

बागवानों द्वारा एक-से-एक अनूठी किस्मों को निकालने और उन्हें संरक्षित करने की दिशा में किये गये उनके प्रयास महत्वपूर्ण हैं। वे एक-दूसरे से इन किस्मों का विनिमय करते हैं और अपने बुजुर्गों से मिली हुई इस विरासत से अटूट प्रेम होने के कारण संरक्षित रखते हैं। ऐसे अनेक बागवान हैं जिनको अपने बाग में अधिक-से-अधिक किस्में लगाने का शौक है। वे गैर-व्यावसायिक किस्मों को भी महत्व देते हैं और उनके बाग में लाभ नहीं देने वाली किस्में भी सुरक्षित हैं।

पौधशालाओं के स्वामियों ने गैर-व्यावसायिक किस्मों के पौधों के संरक्षण और संख्या बढ़ाने में अपना विशेष योगदान दिया है। कुछ दशक पहले तक अधिक किस्मों के पौधे बनाने वाली पौधशाला महत्वपूर्ण मानी जाती थी। लेकिन आज व्यावसायिक किस्में बागवानों को ज्यादा आकर्षित कर रही हैं। इन बागवानों का महत्व बीजू किस्मों के संरक्षण एवं नयी किस्में निकालने में भी कम नहीं हैं। वे आम की अच्छी किस्म लाकर गुठलियों से पौधे बनाते हैं और अच्छी गुणवत्ता किस्म को कलम द्वारा प्रसारित करते हैं। बहुत से बागवान अपने बाग में बीजू आम के पौधों को भी सम्मान देते हैं जिससे उनके यह विविधता तो अधिक होती हैं साथ ही साथ नयी किस्म विकसित होने की भी सम्भावना रहती हैं।

पद्मश्री श्री कलीमउल्ला खान को ख्याति दिलाने में आम की किस्मों के संकलन और संरक्षण का ही योगदान रहा है। मलिहाबाद और आस-पास के क्षेत्रों में अनेक ऐसे बागवान हैं जिन्होंने दर्जनों किस्में अपने बागों में संरक्षित रखी हैं, लेकिन उनके इस महत्वपूर्ण योगदान को कम ही लोग जानते हैं।

(1) छोटे लाल कश्यप, गोपरामऊ (काकोरी ब्लाक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

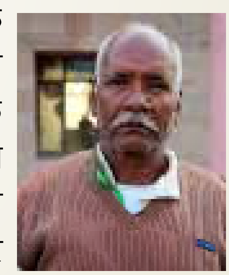

श्री छोटे लाल कश्यप गोपरामऊ नामक गाँव के किसान हैं। उन्होंने लगभग 40 वर्ष पूर्व गोमती नदी के किनारे उस स्थान पर आम की बागवानी करनी शुरू की जहाँ बागवानी करना अत्यन्त कठिन माना जाता था। कालान्तर में, जैव एवं अजैव परिस्थितियों में भी विकसित होने वाली एवं बीजू पौधों से तैयार की जाने वाली आम की किस्मों से भी उनका अनूठा लगाव हो गया। श्री छोटे लाल कश्यप अपनी आमदनी का आधा हिस्सा पौधों से निर्मित बाग़ से प्राप्त करते हैं। श्री कश्यप पेड़ लगाने के लिए कलमी पौधों की तुलना में बीजू पौधों को प्राथमिकता देते हैं। आम के मौसम के दौरान वह अपना अधिकांश समय बाग़ में ही व्यतीत करते हैं। सिलाई का कार्य इनका दूसरा व्यवसाय है और यह कार्य ये तब करते हैं जब बाग में अधिक कार्य करने के लिए नहीं होता है।

[1]निदेशक

आम विविधता के रख-रखाव के मुख्य श्रोत एवं प्रेरणा

श्री छोटे लाल कश्यप ने व्यावसायिक किस्म के पौधों को लगाने का अथक प्रयास किया किन्तु बलुई मिट्टी, असमतल भूमि तथा सिंचाई की सुविधाओं के अभाव के कारण कलमी पौधों को लगाने में वे विफल रहे। उनकी मुलाक़ात मलिहाबाद, काकोरी और माल ब्लॉक में बीजू पौधे लगाने वाले लोगों से हुई और उनसे उन्होंने वृहत जानकारी प्राप्त की। तत्पश्चात वे स्वयं भी अपने प्रयास से बीजू पौधे लगाने में सफल हुए जिसका परिणाम है कि आज उनके पास सौ से भी अधिक किस्मों वाला आम का एक बाग है। प्रारंभ में उन्होंने मलिहाबाद की पौधशाला से लाकर 150 दशहरी के कलमी पौधे लगाने का प्रयास किया किन्तु उनमें से केवल 35 कलमी पौधे ही बच पाये। बाद में, उन्होंने सूखे पौधों को बीजू पौधों से बदल दिया। उन्होंने बेहतर किस्म के बीजू पौधों का चयन किया और शेष सभी को उनसे स्थानांतरित कर दिया। धीरे-धीरे वे एक ऐसे बाग़ के स्वामी हो गये जिसमें जैव विविधता थी। आनुवंशिक रूप से विविध किस्मों के वृक्षों का संकलन उनके परिवार की आजीविका का मुख्य श्रोत है। श्री छोटे लाल बीजू किस्मों की बागवानी करते हैं क्योंकि बलुई मिट्टी में इन पौधों की वृद्धि दर अधिक होती है। वर्षों तक उन्होंने देखा की दशहरी आम की तुलना में बीजू आम की पैदावार अधिक समय तक सम्भव है। इससे उनके परिवार को भोजन के लिए अधिक समय तक फलों की आपूर्ति होती रहेगी तथा देर तक उनकी बिक्री भी की जा सकेगी। उनकी आमदनी मई-जून महीने में ही अचार बनाये जाने वाले बीजू किस्मों की बिक्री से प्रारम्भ हो जाती है तथा दशहरी आम की बिक्री के साथ समाप्त हो जाने के बाद तक जारी रहती है। बीजू पौधे अलग-अलग समय पर परिपक्व होते हैं जिससे किसानों को दशहरी के समाप्त हो जाने के बाद भी आम की कमी नहीं होती है।

बागवान की विशेषता

श्री छोटे लाल कश्यप की आमदनी मुख्य रूप से कम मशहूर/प्रचलित किस्मों पर आश्रित है तथा वे चयनित बाज़ार में ही फल बेच कर आमदनी कमाते हैं। उनका कहना है कि ये बीजू पौधों वाली किस्में दिन-प्रतिदिन लाभकारी होती जा रही हैं जिससे किसान अव्यावसायिक किस्मों की ओर कम उन्मुख हो रहे हैं। उनके पास दशहरी और लखनऊ सफेदा व्यावसायिक किस्मों के सीमित पौधे भी हैं जिसका इस्तेमाल वे खुद के लिए करते हैं।

विशिष्ट संकलित किस्में

श्री छोटे लाल के पास देशी, दशहरी, बीजू तुकमी, देशी चौसा, तुक्मी हीरा, सुनहरा, बदम्बा, गोल, दिल पसंद आदि अन्य बीजू आम की 135 किस्में हैं। उनके पास दशहरी और लखनऊ सफेदा व्यावसायिक किस्में भी हैं पर उनके पौधे सीमित हैं।

(2) श्री मैकू लाल, सरसण्डा (काकोरी ब्लॉक, लखनऊ जिला, उत्तर प्रदेश)

श्री मैकू लाल ने लगभग 35 वर्ष पहले सरसण्डा गाँव में आम की बागवानी प्रारम्भ की थी। उनमें बीज से विकसित होने वाली बीजू किस्म के पौधों के प्रति रूचि जगी क्योंकि उनमें बहु-विधि विशिष्टता होती है तथा उनका अलग-अलग इस्तेमाल भी किया जाता है। ये बीजू पौधे उन भूमियों में भी लगाये जा सकते हैं जिनमें कलमी पौधों को लगने में दिक्कतें होती हैं तथा उनकी वृद्धि दर भी कम होती है। उन्होंने बलुई मिटटी में बीजू पौधों को लगाये जाने के अलावा अधिक पोषक तत्व एवं पानी वाली मिट्टी में भी व्यावसायिक किस्मों के कलमी पौधे लगाये हैं। श्री मैकू लाल अपने द्वारा बाग़ को प्रबंधित तथा सुव्यवस्थित किये जाने के तरीके से संतुष्ट हैं। उनके द्वारा लगाये गए व्यावसायिक कलमी किस्मों तथा कम प्रसिद्ध बीजू किस्मों से उन्हें अच्छी आमदनी होती है एवं परिवार की आजीविका के लिए भी लाभप्रद होता है।

प्रेरणा तथा आम विविधता के रखरखाव के मुख्य श्रोत

लगभग 50 वर्ष पूर्व मलिहाबाद, काकोरी तथा लखनऊ

के आस-पास के क्षेत्रों में आम की बागवानी महत्वपूर्ण व्यवसाय था। किन्तु सरसण्डा में कोई भी आम आदमी अनेक पर्यावरणीय एवं सामाजिक कारणों से आम के पौधे नहीं लगा पाता था। सरसण्डा में ग्रामीणों को आम के बाग नहीं लगाने दिये जाते थे तथा केवल जमींदार और प्रभावशाली लोग ही आम के बागों के स्वामी होते थे। अन्य ग्रामीणों को केवल बागों में कार्य करना होता था तथा परम्परा के अनुसार वे केवल परंपरागत फसलें ही पैदा कर सकते थे। इसके अलावा जल के कुओं का अभाव, असमतल बलुई मिट्टी आदि कुछ अन्य कारण भी थे जिससे इस गाँव में आम की बागवानी सीमित रही। श्री मैकू लाल को 35 वर्ष पूर्व कलमी तरीके से पौध लगाने के प्रयास में ज्यादा सफलता नहीं प्राप्त हुई। इसी कारण उन्होंने सारे कलम बंध पौधों को बीजू पौधों से स्थानांतरित कर दिया। बीजू पौधों की ज्यादा सफलता दर को देखते हुए उन्होंने उनके पास उपलब्ध रिक्त स्थानों या बलुई असमतल फार्म में बीजू पौधे लगाने शुरू कर दिये।

बागवान की विशेषता

वर्तमान समय में सरसण्डा में ज्यादातर कलमी तरीके से लगाए गए दशहरी के बाग़ ही हैं। इस कारण से किसानों को कुछ समय के लिए ही बाजार मे सघन प्रतिस्पर्धा झेलनी पड़ती है तथा किसानों को उनके उत्पादों की काफी कम कीमत मिलती है। श्री मैकू लाल उन चुनिन्दा किसानों में से हैं जो गाँव में दोमट एवं बलुई दोनों किस्मों की मिट्टी का प्रयोग करते हैं जबकि अन्य सभी किसान दोमट मिट्टी की ओर ध्यान देते हैं तथा व्यावसायिक किस्मों की कलमी लगाते हैं। श्री मैकू लाल अपने बाग में अप्रचलित किस्मों को बीजू तरीके से लगाते हैं।

विशिष्ट संकलित किस्में

श्री मैकू लाल के बाग में आम की लगभग 50 किस्में लगी हुई हैं। इन किस्मों में अधिकांशतः बीजू पौधे हैं। तुकमी चौसा, गुलाब जामुन, किस्म सफ़ेद, देशी तैमूरिया, गोल सेब, लम्बौरी चौसा, देशी लंगड़ा, तुकमी सुखएँ, लम्बौरी, सफेदा, चोन्हा गोल तथा अनेक बिना नाम वाली किस्में 2 हेक्टेयर भूमि में लगा रखी हैं। ये अपनी किस्मों का नाम प्रजातियों या मूलवृन्त को ध्यान में रख कर रखते हैं।

(3) श्री नवाब हसन, कसमण्डी कलां (मलिहाबाद, ब्लॉक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

श्री नवाब हसन ग्राम कसमण्डी कलां के निवासी है। इनके पास अपने पूर्वजों द्वारा शुरू की गयी आम की खेती की एक लंबी परंपरा है। श्री नवाब हसन के बाग में आम की 51 पारंपरिक किस्में हैं जिनका संग्रह अन्य जगहों से किया गया है। उनके बाग के वृक्ष 50 से 100 वर्ष पुराने हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि किस प्रकार दशकों से किस्मों की वृद्धि होती रही है। ये इस प्रकार किसान के क्षेत्र के प्रक्षेत्र जीन बैंक माने जा सकते हैं जो विशेषता लिये हुए विशिष्ट पौधों का एक संग्रह हैं। एक छोटे समूह के कम प्रसिद्ध पारंपरिक किसानों की किस्मों के बाजार में उपभोक्ताओं की रुचि को ध्यान में रखते हुए आप भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, लखनऊ के राष्ट्रीय प्रक्षेत्र जीन बैंक में उपलब्ध कुछ कम परंपरागत संकलन में रुचि रखते हैं।

आम विविधता के रख-रखाव के मुख्य श्रोत एवं प्रेरणा

श्री नवाब हसन के पिता श्री हसन अहमद ने 60 वर्ष पूर्व कसमण्डी कलां में कई गैर-व्यावसायिक आम की किस्मों वाला जमीन का एक टुकड़ा खरीदा। इस भू-खंड में मलिहाबाद के किसानों की परम्परागत किस्मों के संग्रह के अलावा लखनऊ से 160 किलोमीटर दूर स्थित शाहाबाद एवं संडीला के क्षेत्रों में पैदा किये जाने वाली आम की किस्मों का भी संकलन है। इन किस्मों का संकलन एवं रोपण लखनऊ के तत्कालीन भू-स्वामियों द्वारा किया गया था। उन्हें किस्मों को संकलित करने तथा बाग में लगाने का शौक था। सैकड़ों वर्ष पूर्व चयनित तथा परिवार के गौरव, लखनऊ के नवाब के भोज एवं आदान-प्रदान के लिए उस समय लगायी गयी आम की किस्में अभी भी बागों में लगी हुई हैं।

बागवान की विशेषता

श्री नवाब हसन जी द्वारा अनेक मलिहाबादी किस्मों को बाग़ में संरक्षित किया जाना कसमण्डी कलां के अन्य किसानों के लिये प्रेरणा का श्रोत रहा है। इसके कारण उन्होंने दशहरी, चौसा तथा लखनऊ सफ़ेद जैसे प्रख्यात व्यावसायिक किस्मों के होते हुए भी सैकड़ों वर्ष पुराने बीजू आम के वृक्षों को संरक्षित किया है। आपके बाग किसानों की 51 विभिन्न पौधों की कलमी किस्में की आम विविधता के संरक्षण का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। श्री हसन का मानना है की व्यावसायिक किस्मों के प्रति विगत दो-तीन दशकों में बढ़ी लोकप्रियता के कारण व्यावसायिक एवं परंपरागत किस्मों के अनुपात में काफी कमी आयी है क्योंकि किसानों की परंपरागत किस्मों से अच्छी कीमत प्राप्त की जा सकती है। इन किस्मों से जुड़ी हुई सांस्कृतिक मूल्यों के द्वारा भी इन फलों के व्यापार को बढ़ावा दिया जा सकता है।

विशिष्ट संकलित किस्में

श्री नवाब हसन के संकलन में कलमी किस्मों के पौधे हैं जिनमें फलत वाली अनेक विशेषतायें हैं। इन किस्मों का इस्तेमाल चूस कर, काट कर खाने तथा अचार बनाने के लिए किया जाता है। इनके द्वारा संकलित किस्में मलिहाबाद तथा अन्य क्षेत्रों के किसानों के लिए निधान का कार्य करती हैं इसलिए इनके प्रक्षेत्र को जीन बैंक की संज्ञा भी दी जा सकती है। बाग़ में उपलब्ध अनेक पुरानी किस्में यह दर्शाती हैं की इन कलमी किस्मों को बढ़िया मातृ वृक्षों से तैयार किया गया था। इनको तत्कालीन भू-स्वामी ने लगाया था। सुखऍ, पौदा गज, देशी बंबईया, मछली, पान, मटका गोल, चांदनी, भूरा, सुरखा मटियार, नज़ीर पसंद, कमल पसंद तथा अनेक अनूठी किस्में उनके संकलन में सम्मिलित हैं।

(4) श्री परमेश्वर शर्मा, कसमण्डी कलां (मलिहाबाद, ब्लॉक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

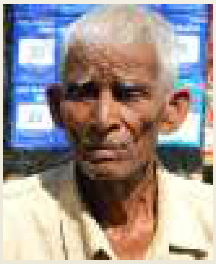

श्री परमेश्वर शर्मा 75 वर्ष के किसान हैं जो अपने बाग़ में आम की किस्मों का संरक्षण करते हैं। ये आम ही उनकी आजीविका का मुख्य श्रोत हैं। वे मुख्य रूप से आम उत्पादक हैं जिन्होंने अपने बाग में 40 देशी किस्मों सहित आम की 44 किस्में लगा रखी हैं। उनके बाग के वृक्षों की औसत आयु 30 वर्ष है। उनके द्वारा संरक्षित की गयी किस्मों में मुख्य रूप से गैर-व्यावसायिक किस्में हैं। आप एक हेक्टेयर में आम की बागवानी करते हैं। आपके पास सिंचाई के पर्याप्त साधन नहीं हैं। यदि इन्हें सिंचाई के साधन उपलब्ध कराये जायें तो आपके बागों में उपलब्ध व्यावसायिक किस्मों का उत्पादन बढ़ सकता है।

आम विविधता के रखरखाव के मुख्य श्रोत एवं प्रेरणा

आपके द्वारा आम की विविध किस्मों को संरक्षित करने के दो कारण हैं। आपके परिवार द्वारा वर्षों से आम की बागवानी की जाती रही है तथा आप स्वयं भी आम की बागवानी में रूचि लेते हैं। आपके बाग़ में लगी हुई आम की गैर परंपरागत किस्में आपके आय का महत्वपूर्ण श्रोत हैं। इस बाग के सभी किस्मों का लुफ्त आपके परिवार के लोग तथा रिश्तेदार उठाते हैं। यहाँ तक की आम के बाग के फल आस-पास के लोगों को भी दिये जाते हैं तथा सूखी लकड़ियों का इस्तेमाल जलावन के रूप में किया जाता है।

बागवान की विशेषता

आपके द्वारा मौसम के प्रारंभ तथा अंत में पैदा होने वाली किस्मों का भी रख-रखाव किया जाता है। इन गैर परंपरागत व्यावसायिक किस्मों को उनके परिवार के लोग पैतृक संपत्ति समझते हैं। आपने आम के बीजू पौधों को संरक्षित किया है तथा आम की विभिन्न कलमी पौधों का रोपण किया है किन्तु बीजू पौधे संकलन का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं।

विशिष्ट संकलित किस्में

सुरखा : फल का आकर मध्यम, मौसम के मध्य में होने वाला, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चूसने वाला, छिलके का रंग हरा पीला लाल सूर्ख, गूदा रेशेदार।

अमिन : फल का आकार मध्यम, मौसम के मध्य में होने

वाला फल, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, काट कर खाने वाली किस्म, छिलके का रंग पीला, गूदा में काम रेशा।

गोला : फल आकार मध्यम, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, काट कर खाने वाली किस्म, छिलके का रंग नारंगी पीला, गूदा रेशेदार।

खासुल-खास : फलों का आकार मध्यम, देर से पकने वाला, चूसने तथा काट कर खाने वाला, छिलके का रंग हरा-पीला, गूदा में प्रचुर मात्रा में जूस।

जर्द अमिन : फल आकार मध्यम, मौसम के मध्य में तैयार होने वाला, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, काट कर खाने वाली किस्म, छिलके का रंग नारंगी पीला, गूदा में कम रेशा।

तैमूरया : फल का आकार मध्यम, पकने का समय देर से, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चूसने तथा काट कर खाने वाली किस्म, छिलके का रंग हरा पीला, रेशा सामान्य मात्रा में।

(5) श्री नरेन्द्र शुक्ला, गोपरामऊ (काकोरी, ब्लॉक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

श्री नरेन्द्र शुक्ला जिनकी उम्र 40 साल है उनके पास 2.25 हेक्टेयर के एक आम के बाग को संरक्षित किये हुए हैं। यह बाग उनकी आजीविका का मुख्य श्रोत है। ये मुख्य रूप से आम के उत्पादक हैं जिनके पास आम की 40 देशी किस्मों सहित कुल 42 किस्मों का संकलन है। उनके बाग़ के आम के वृक्षों की औसत आयु लगभग 40 वर्ष है। संकलित आम के वृक्षों में मुख्य रूप से गैर-व्यावसायिक किस्में हैं।

आम विविधता के रख-रखाव के मुख्य श्रोत एवं प्रेरणा

आम की किस्मों से होने वाली आय, परिवार द्वारा अनेक किस्मों के स्वाद का आनंद लेना, परिजनों में फलों का वितरण, सूखी लकड़ियों का जलावन के रूप में इस्तेमाल आदि इन्हें आम विविधता के संरक्षण के लिए प्रेरित करती रही है।

बागवान की विशेषता

इनके पास गाँव के किसी भी किसान से ज्यादा संख्या में आम की किस्में हैं। इनके आम के बाग़ में शीघ्र एवं देर से पकने वाली दोनों तरह की किस्में हैं जिसके कारण काफी लम्बे समय तक फल बाग़ में उपलब्ध रहते हैं। समुदाय के लिये आवश्यक पौधों की किस्मों का फल का गुणन उन्होंने किया है। बीजू किस्मों का प्रयोग कर उन्होंने बलुई मिटटी वाले बाग की स्थापना की जिसमें सिंचाई के साधनों का अभाव होता है। कलमी पौधों की बलुई मिटटी में अधिक मृत्यु दर देखी गयी। इसलिए बीजू पौधों को ही नये बाग़ लगाने में प्रयोग किया गया। इससे बाग में आम की विविधता भी कायम रहती है। श्री शुक्ला द्वारा आम की बागवानी लगभग 2.25 हेक्टेयर क्षेत्र में की जा रही है। उन्होंने पौधशालाओं से कलमी किस्मों का संकलन किया है तथा बीजू किस्मों के बाग भी लगाये हैं।

विशिष्ट संकलित किस्में

पीला गोला, लम्बा गोला तथा गोला सुरखा बीजू आम की कुछ महत्वपूर्ण किस्में हैं।

पीला गोला : फल का आकार छोटा, गोल, मौसम के मध्य में पकने वाला, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चूसने के लिए उपयुक्त, फल का छिलका पीला, गूदा रेशेदार।

लंबा गोला : फलों का आकर मध्यम गोल एवं आयताकार, मौसम के मध्य में पकने वाला, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, चूसने के लिए उपयुक्त, फल का छिलका पीला लाल, गूदा रेशेदार।

गोला सुर्खा : फल का आकार छोटा एवं गोल, मौसम के मध्य में पकने वाला, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चूसने के लिए उपयुक्त, फल का छिलका पीला, गूदा रेशेदार।

अचार वाला : फल आकार छोटा एवं गोल, मौसम के मध्य में पकने वाला, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चसूने के लिए उपयुक्त छिलके का रंग नारंगी-पीला, गूदा रेशेदार।

लंबोई : फल का आकार मध्यम एवं अंडाकार, मध्य में पकने वाला, अपरिपक्व फल का स्वाद अम्लीय, चूस कर एवं काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग हरा पीला, गूदा कम रेशेदार।

इन्होंने समुदाय के लिए वांछित पौधों को किस्मों का गुणन कर उपलब्ध कराया है। उन्होंने बीजू पौधों के बाग को स्थापना के लिए सिंचाई की सुविधा नहीं होते हुए भी बलुई मिट्टी का इस्तेमाल किया। बलुई मिट्टी में कलम बंध प्रजातियों में मृत्यु की दर अधिक दर देखी गयी। बीजू पौधों को न केवल नये बाग के लगाने में प्रयोग किया जाता है अपितु विविध प्रकार के आम की उपलब्धता के लिए भी यह एक उपाय है।

पीला गोला, लंबा गोला एवं गोला सुखी महत्वपूर्ण बीजू किस्में हैं जिनके इनके पास 2.25 हेक्टेयर में आम के बाग हैं। इन्होंने पौधशालाओं से कलम बंध वाली प्रजातियों का संग्रह पौध रोपण के लिए किया है तथा बीजू किस्मों के बाग किस्मों के बाग भी लगाये हैं।

पीला गोलाः फल आकार छोटा, गोल, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चसूने के लिए उपयुक्त फल, छिलके का रंग नारंगी पीला, गूदा रेशेदार।

लंबा गोलाः फल का आकार मध्यम एवं आयताकार, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी पीला, गूदा रेशेदार।

गोला सुर्खाः फल का आकार मध्यम एवं गोल, मौसम के मध्य में हाने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, चूस कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलका का रंग नारंगी पीला लालिमायुक्त, गूदा रेशेदार।

अचार वालाः फल का आकार मध्यम, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, अचार बनाने एवं चूस कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी पीला, गूदा रेशदार।

लंबोईः फल का आकार मध्यम, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व, फल का स्वाद खट्टा, चूस कर एवं काट का खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी पीला, गूदा रेशेदार।

(6) श्रीमती कमला देवी, गोपरामऊ (काकोरी ब्लॉक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

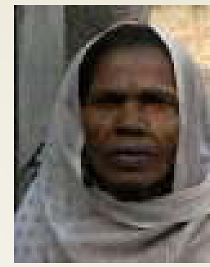

श्रीमती कमला देवी 55 वर्षीय आम उत्पादक हैं। उनके पास 2.25 हेक्टेयर आम के बाग हैं। यह उनकी आजीविका का मुख्य श्रोत है। इनके पास आम की देशी एवं बीजू किस्मों सहित आम की कुल 35 किस्में है। इनके बाग के वृक्षों की औसत आयु 25 वर्ष है। इनके बाग में उपलब्ध आम की विविधता में प्रधानतः गैर-व्यावसायिक किस्में हैं।

आम विविधता के रख-रखाव के मुख्य श्रोत एवं प्रेरणा

इनके लिए आम की विविधता संरक्षण के मुख्य प्रेरक हैं। फलों की बिक्री से प्राप्त होने वाली उनकी आय, आम की किस्मों के प्रति उनका अनुराग, आम की सूखी लकड़ियों से ईंधन एवं जलावन का मिलना, परिजनों द्वारा आम की विधि किस्मों का स्वाद लेना तथा अन्य रिश्तेदारों के बीच वितरण। इसमें से कुछेक किस्में अभिभावकों द्वारा लगायी गयी थीं।

बागवान की विशेषता

इनके आम के बाग में विविध किस्में हैं। ये अभी भी व्यावसायिक किस्मों की ओर उन्मुख नहीं हुई हैं। आपके पास मौसम के पूर्वाद्ध एवं उत्तरार्द्ध में होने वाली किस्में हैं। इनके बाग में उपलब्ध किस्मों के पौधे इनके द्वारा अपने समुदाय में वितरित की है। सिंचाई व्यवस्था के अभाव के बावजूद इन्होंने एक उत्तम बाग विकसित की है।

विशिष्ट संकलित किस्में

सुर्खीः फल आकार मध्यम मौसम के मध्य में होने वाली किस्में अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, चूसकर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी पीला लालिमा लिए हुए, गूदा रेशेदार।

देशी दशहरीः यह दशहरी का एक बीजू रूप है। फल आकार मध्यम आयताकार, मौसम के मध्य में होने वाला फल,

अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग पीला नारंगी, गूदा कम रेशेदार।

देशी गोलाः फल का आकार मध्यम एवं गोल, गणवत्ता मध्यम, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, चूसकर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग पीला नारंगी, गूदा रेशेदार।

देशी लखनवाः लखनऊ सफेदा का बीजू किस्म, फल का आकार छोटा एवं देरी से पकने वाला, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, अचार एवं काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग पीला नारंगी, गूदा रेशेदार।

कलुआः फल का आकार मध्यम, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, अचार एवं चूस कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नांरगी पीला, गूदा रेशेदार।

खूबसूरत लंबोईः फल का आकार मध्यम आयताकार, मौसम के मध्यम में पैदा होने वाला एवं अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चूस कर एवं काट कार खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग हरा, पीला, गूदा कम रेशेदार।

(7) श्री मोनीस अहमद, कसमंडी कला(मलिहाबाद ब्लॉक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

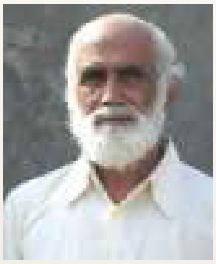

यह 52 वर्ष के किसान हैं जिनके पास 1.5 हेक्टेयर का आम का एक बाग है। ये बाग ही इनकी आजीविका का मुख्य श्रोत हैं। ये मुख्य रूप से आम उत्पादक हैं जिनके पास 25 देशी एवं 03 बीजू सहित 28 आम की किस्में हैं। इनके बाग के वृक्षों की औसत आयु 30 वर्ष है। बाग में उपलब्ध विविधता में मुख्य रूप से गैर-व्यावसायिक किस्में हैं।

आम की विविधता वाले बाग के संरक्षण के प्रमुख प्रेरक हैं। इनके लिए फलों की बिक्री ही वार्षिक आय का श्रोत। आम की किस्मों से अनुराग, ईंधन एवं जलावन की प्राप्ति, परिवार के सदस्यों द्वारा किस्मों का स्वाद लेना तथा अन्य रिश्तेदार से प्रेम बढ़ता है। इनमें से कुछेक किस्में पूर्वजों द्वारा लगाये गये हैं। प्रारंभ एवं अन्त में आने वाली किस्में लम्बे समय तक पके फलों को उपलब्ध कराती है।

बागवान की विशेषता

इनके द्वारा मलिहाबाद को लुप्तप्राय अनेक परंपरागत किस्में संरक्षित की जाती हैं। इनके द्वारा खासुल-खास, मुर्शिदाबाद तथा गैर-व्यावसायिक किस्मों को कलमी तरीके से लगाया जाता है। इन्होंने समुदाय में पौधों को वितरित किया है।

विशिष्ट संकलित किस्में

खासुल-खासः फल का आकार मध्यम, फलों का पकाना देर से, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काट कर एवं चूस कर खाने के लिए उपयुक्त किस्म, छिलके का रंग हरा, गूदे में जूस प्रचुर मात्रा में।

मुर्शिदाबाद अमिनः फल का आकार मध्यम आयाताकार, पकने का समय देर से अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग हरा पीला, गूदा कम रेशेदार।

हुशनाराः फल का आकार मध्यम एवं आयताकार, मौसम के मध्य में पकने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद अम्लीय, काट कर एवं चूस कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नांरगी, पीला, लालिमा लिए हुए, गूदा मे रेशा औसत।

सुर्खीः फल का आकार मध्यम, पकने का समय देर से, अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी पीला लालिमा युक्त, गूदा रेशेदार।

लंबोरी : फल का आकार मध्यम एवं आयताकार, पकने का समय दर से, अपरिपक्व फल का स्वाद अम्लीय, काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग हरा पीला, गूदा कम रेशेदार।

(8) श्री राम आसरय शर्मा, कसमंडी कला (मलिहाबाद ब्लॉक, लखनऊ जिला, उत्तर प्रदेश)

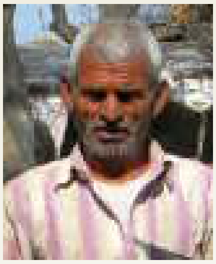

श्री शर्मा एक आम उत्पादक किसान है जिनके पास 01 हेक्टेयर का बाग है। यही इनकी आजीविका का मुख्य श्रोत है। इनके बाग में 22 देशी एवं 03 बीजू किस्म सहित कुल 25 किस्म के आम हैं। इनके बाग के वृक्षों की आयु 25 से 60 वर्ष तक है। बाग में उपलब्ध अधिकाशतः आम व्यावसायिक किस्म के हैं। इनमें से फकीरा, मोहन भोग, रंगीन गोला, जर्द अमीन आदि प्रमुख हैं।

आम की विविधता के संरक्षण के लिए इनके मुख्य प्रेरक हैं। फलों को बेचकर वार्षिक आय की प्राप्ति, आम को किस्मों से अनुराग, जलावन एवं ईंधन का श्रोत, अनेक किस्मों के स्वाद का परिवार के सदस्यों द्वारा लिया जाना चाहिए तथा किस्मों की रिश्तेदारों के मध्य वितरण।

बागवान की विशेषता

ये गैर-व्यावसायिक किस्मों को संरक्षित करते हैं। इन्होंने कलमी एवं बीजू किस्मों को अन्य बागों में प्रसारित किया है। ये अपने बाग में परंपरागत मलिहाबादी किस्मों को भी संरक्षित करते हैं। इनके पास शुरूआती तथा देर से होने वाली दोनों किस्में हैं। इनके बाग में लगी अनेक किस्में इनके पूर्वजों द्वारा लगायी गयी थी।

विशिष्ट संकलित किस्में

फकीराः फल का आकार बड़ा, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काटकर खाने में उपयुक्त, छिलके का रंग पीला, गूदा रेशेदार।

मोहन भोगः फल का आकार बड़ा, आकार गोल मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग हरा पीला, गूदा थोडा रेशेदार।

रंगीन गोलाः फल का आकर छोटा, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काट कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी पीला, लालिमा लिए हुए, गूदा रेशेदार।

गोलाः फल का आकार मध्यम गोल, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों को स्वाद खट्टा, चूस कर खाने के लिए उपयुक्त, छिलका नारंगी पीला, गूदा रेशेदार।

जर्द अमीनः फल का आकार बड़ा, आयताकार, गुणवत्ता अच्छी, देर से पकने वाली किस्म, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काटकार खाने के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग पीला, गूदा कम रेशेदार।

(9) श्री महादीन, सरसंडा (काकोरी ब्लॉक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

ये 65 वर्षीय किसान हैं जिनके पास आम का एक बाग है। यह बाग ही इनकी आजीविका का मुख्य श्रोत है। यह मुख्य रूप से आम उत्पादक हैं जिनके पास 35 देशी एवं 03 बीज सहित आम की 38 किस्में हैं। उनके बाग के वृक्षों की औसत आयु 30 वर्ष है। उनके बाग की विविधता, गैर-व्यावसायिक किस्मों का समूह है। उनके बाग में तुकमी, चौसा, देशी गोला, लंबोई, तुहुए, सुर्खी आदि प्रमुख हैं।

उनके लिए आम के बाग संरक्षण के मुख्य प्रेरक हैं। आम के बाग में सिंचाई की सुविधा के बावजूद बलुई मिट्टी का प्रयोग, उनकी फलों से वार्षिक आय ही प्राप्ति, आम से अनुराग, आम की सुखी टहनियों से जलावन की प्राप्ति, उनके परिवार द्वारा आम की विविध किस्मों के स्वाद का लाभ लेना है।

बागवान की विशेषता

उन्होंने आम की विविध किस्मों के बाग बलुई मिट्टी में सिंचाई की सुविधा के बिना हैं तथा उसमें अनेक किस्मों को संरक्षित किये हुए हैं उनके बाग में मौसम के प्रारंभ तथा अन्त दोनों में होने वाली किस्में उपलब्ध हैं। उन्होंने अपने समुदाय के मध्य तुकमी चौसा किस्म पौध रोपण के लिए वितरित किये हैं।

अपने समुदाय के लिए वांछित पौधों को किस्मों का गुणन कर उपलब्ध कराते हैं। उन्होंने बीजू पौधों के बाग को स्थापना के लिए सिंचाई की सुविधा नहीं होते हुए भी बलुई मिट्टी को इस्तेमाल किया जबकि बलुई मिट्टी में कलम बंध प्रजातियों में मृत्यु की दर अधिक देखी गयी है। बीजू पौधों का न केवल नये बाग के लगाने में प्रयोग किया जाता है अपितु विविध प्रकार के आम की उपलब्धता के लिए भी यह एक उपाय है।

विशिष्ट संकलित किस्में

पीला गोला, लंबा गोला एवं गोला सुखी महत्वपूर्ण बीजू किस्में हैं। इनके पास 2.25 हेक्टेयर में आम के बाग हैं। इन्होंने पौधशालाओं से कलम वाली प्रजातियों का संग्रह पौध रोपण के लिए किया है तथा बीजू किस्मों के बाग किस्मों के बाग भी लगाये हैं।

पीला गोलाः फल का आकार छोटा, गोल, मौसम के मध्य में होने वाला अपरिपक्व फल का स्वाद खट्टा, चूसने के लिए उपयुक्त फल, छिलके का रंग नारंगी पीला, गूदा रेशेदार।

लंबा गोलाः फल का आकार मध्यम, अंडाकार, मौसम के मध्य में होने वाला फल।

(10) श्री मुनेश्वर, गोपरामऊ (काकोरी ब्लॉक, जिला लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

श्री मुनेश्वर गोपरामऊ के 30 वर्षीय किसान है। उनके पास 0.75 हेक्टेयर का आम की विविध किस्मों एक बाग है जो उनकी आजीविका का प्रमुख श्रोत है। इनके बाग में 20 देशी एवं 05 बीज किस्म सहित कुल 25 किस्में व्याप्त है। आपके बाग की औसत आयु 35 वर्ष है। इनके बाग में मुख्यत गैर-व्यावसायिक किस्में है।

आम की विविधता के संरक्षण के लिए इनके लिए मुख्य प्रेरक हैं। परिजनों को फल उपलब्ध कराना, किस्मों का संरक्षण, अन्य आम की किस्मों के संकलन के प्रति अनुराग, फलों के विपणन द्वारा वार्षिक आय प्राप्त करना।

बागवान की विशेषता

उन्होंने बलुई मिट्टी में सिंचाई की सुविधा के बिना जहाँ उत्तरजीविता स्थापना दर कम है। आम की विविधता को संरक्षित करने के लिए प्रयास किया। उनके बाग में मौसम के शुरूआत एवं अन्त में होने वाली दोनों ही किस्में है। उनके द्वारा समुदाय के अन्य लोगों को गुणन द्वारा पौध सामग्री उपलब्ध करायी।

विशिष्ट किस्मों का संकलन

दूधिया गोलाः फलों का आकार मध्यम एवं गोल, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काट कर एवं चूस कर खाने के लिए उत्तम एवं उपयुक्त किस्म, छिलके का रंग हरा-पीला, गूदा कम रेशेदार।

लंबोईः फल का आकार आयताकार एवं मध्यम, मौसम के मध्य में होने वाली किस्म, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काट कर एवं चूस कर खाने के लिए उत्तम एवं उपयुक्त, छिलके का आकार हरा-पीला, गूदा कम रेशेदार।

गोलाः फल का आकार मध्यम एवं गोल, मौसम के मध्य में होने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, काटकर खाने के लिए उत्तम एवं उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी-पीला, गूदा रेशेदार।

काला गोलाः फल का आकार मध्यम एवं गोल, पकने का समय देर से, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, चूसकर खाने तथा अचार के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नारंगी-पीला, गूदा रेशेदार।

तुहएः फल का आकार छोटा, गुणवत्ता निम्न, मौसम के मध्य में पकने वाला फल, अपरिपक्व फलों का स्वाद खट्टा, चूस कर खाने तथा अचार के लिए उपयुक्त, छिलके का रंग नांरगी-पीला गूदा रेशेदार।

नयी पीढ़ी का आम की किस्मों के प्रति कम लगाव है तथा दशहरी एवं लखनऊवा जैसी व्यावसायिक किस्मों के दबदबे के कारण गैर-व्यावसायिक किस्मों के संरक्षण पर ध्यान देना आज एक महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया है। सम्भवतः भविष्य में किस्मों के संरक्षण हेतु प्रयासों के लिए बागवानों को आर्थिक सहायता मिलेगी जिससे वे बिना किसी आर्थिक हानि के संरक्षण में अपना भरपूर सहयोग दे सकेंगे।

आम के बाग में अन्तःफसल एवं उसका लाभ

वी.के. सिंह[1], मनोज कुमार सोनी[2], अनुराग सिंह[3], कामिनी सिंह[4], पूजा सक्सेना[5] एवं कैलाश कुमार[6]

[1,2,3,4,5,6]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

आम उष्ण तथा उपोष्ण दोनों प्रकार की जलवायु में सफलतापूर्वक उत्पादन किया जा सकता है। भारत में इसकी खेती समुद्र तल से लेकर 800 मीटर की ऊँचाई तक हिमालय क्षेत्र में की जा सकती है। लेकिन व्यावसायिक दृष्टि से इसे 600 मीटर तक ही अधिक सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। तापक्रम में उतार-चढ़ाव, समुद्र तल से ऊँचाई, वर्षा एवं आँधी आदि इसकी उपज पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

आम की अधिकतम किस्में वार्षिक वर्षा तथा शुष्क वातावरण वाले क्षेत्रों में अच्छी होती हैं। इसके लिए वर्षा का वार्षिक समुचित वितरण अधिक महत्वपूर्ण है। बौर आने के समय शुष्क मौसम एवं वृक्ष में आंतरिक तनाव बहुत उपयुक्त पाया गया है। फल लगने के पश्चात बाग की मिट्टी में नमी एवं हल्की वर्षा इसके लिए उपयोगी होती है। आम की सकल खेती के लिए दोमट भूमि, उचित जल निकास वाली भूमि, 5.5-7.5 के मध्य मान वाली मृदा को उपयुक्त माना गया है। उपयुक्त भूमि में आरम्भ से ही खाद्य और उर्वरक की उचित व्यवस्था कर ही आम का पौधा लगाना चाहिए जिससे पौधे को स्थापित होने में सुविधा हो।

आम के पौधों के पूर्ण उत्पादक क्षमता के होने तक उनके बीच काफी भूमि रिक्त रहती है। इस भूमि के उचित उपयोग हेतु आम के बागों की 8-10 वर्ष तक उम्र के पौधों के बीच खाली स्थान में किसान सफलतापूर्वक अन्तःफसलें उगाकर अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। बागवान भली-भाँति परिचित हैं कि आम की ज्यादातर व्यावसायिक प्रजाति वर्ष में केवल एक बार अनियमित फलन के तहत फल देता है तथा पूरे वर्ष आम के पौधों के बीच के खाली स्थान में उचित अन्तः फसलें उगाकर अतिरिक्त आय किसान प्राप्त कर सकते हैं। इसके साथ रिक्त स्थान में प्रायः खरपतवार आता है जो अतिरिक्त उर्वरक बागों से लेता है एवं उसका नियंत्रण करना भी अतिरिक्त खर्च है। अन्तःफसल उगाने से बाग से अधिक आमदनी प्राप्त होने के साथ-साथ आम के पौधों का रख-रखाव भी सुचारु रूप से खर-पतवार विहीन एवं समुचित पोषण प्रबंधन भी साथ-साथ होता रहता है।

आम के बाग में उगाई जाने वाली अन्तः फसलों में फसल चक्र का महत्वपूर्ण स्थान है। आम के बागों में ली जाने वाली अन्तःफसलों में दलहनी फसलों का समावेश उत्तम पाया गया है क्योंकि दलहनी फसलों के द्वारा मृदा में नाइट्रोजन (वायुमण्डलीय नत्रजन) का स्थिरीकरण होता रहता है। अतः अन्तःफसलों के रूप में उगाई जाने वाली फसलों में दलहनी फसलों का समावेश होने से उर्वरक की मात्रा बढ़ने के साथ-साथ अकार्बनिक नाइट्रोजन का उपयोग भी कम किया जा सकता है। आम के बागों में अन्तःफसलों को ऋतुओं/मौसम के आधार पर पूरे वर्ष उगाकर अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि गन्ना, मक्का एवं बाजरा जैसी फसलें जो आम को ढक लेती हैं एवं बागों की उर्वरक की मात्रा भी अधिक शोषित करती अन्तःफसल के रूप में नहीं लगाना चाहिए। आम के बाग में उगाई जाने वाली अन्तःफसलों को उगाते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है।

1. उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। उस फसल चक्र में पूरे वर्ष में एक दलहनी फसल होना अति आवश्यक है।
2. अन्तः फसलों का चुनाव मिट्टी की बनावट, मिट्टी की भौतिक स्वास्थ, जलवायु विशेष एवं आवश्यकताओं के आधार पर करना चाहिए।
3. अन्तः फसल के रूप में ऐसी फसलें नहीं लगाया जाता है जो पोषक तत्वों के लिए मुख्य फसल (आम) के साथ प्रतियोगी हो।

[1,6]प्रधान वैज्ञानिक, [2,3]अनुसंधान सहायक एवं [4,5]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता

4. बाग की फसलों के लिए सिंचाई की व्यवस्था अलग रखनी चाहिए ताकि विभिन्न क्रान्तिक अवस्थाओं पर फल वृक्षों की अलग से एवं आवश्यक रूप से सिंचाई की जा सके इसके लिए टपक सिंचाई प्रणाली एवं पालीथीन पलवार उचित पाया गया है।

5. अधिक पानी की जरूरत वाली फसलें अन्तः फसल के रूप में नहीं लगानी चाहिए।

6. वर्ष पर्यन्त अतिरिक्त आय प्राप्त करने हेतु बगीचे में अन्तःफसलों को ऋतुओं के अनुसार उगाना अत्यन्त लाभदायक है।

7. बाग की फसलें प्राथमिक महत्व की है तथा अन्तः फसले द्वितीय महत्व की है। अतः बाग में मुख्य पौधे को फूलने एवं फलने के लिए पर्याप्त जगह के साथ-साथ उसकी पोषण आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना चाहिए। अन्तःफसलों को मुख्य फसल के पंक्तियों के बीच खाली स्थान में ही उगाना चाहिए।

8. इस संस्थान में पी.एफ.डी.सी. द्वारा किये गये प्रयोगों के आधार पर आम के नये बागों में अन्तः फसल के रूप में पूरे वर्ष उगाई जाने वाली सब्जियों की फसलों को विभिन्न ऋतुओं के आधार पर पूरे वर्ष निम्न प्रकार से उगाया जा सकता है।

(अ) जाड़े वाली (रबी फसलें)

क्रम संख्या	फसल	प्रजाति
1.	फूलगोभी	गिरिजा, अर्ली पूसी
2.	पत्ता गोभी	इण्डम–296
3.	ब्रोकली	ऐश्वर्या

(ब) गर्मी वाली (जायद फसलें)*

क्रम संख्या	फसल	प्रजाति
1.	लौकी	अदिती, वरद
2.	कद्दू	सदाबहार

*उपरोक्त फसलों को अन्तः फसल के रूप में ड्रिप एवं पालीथीन मल्च का उपयोग करने पर ज्यादा उपयुक्त पाया गया है।

(स) बरसात वाली (खरीफ फसलें)

क्रम संख्या	फसल	प्रजाति
1.	बैंगन	बी.एस.एस.–32
2.	तरोई	चिकनी स्पेशल
3.	करेला	बी.जी.एच.–110
4.	लौकी	अदिती, वरद
5.	लोबिया	कासी कंचन

आय-व्यय का लेखा-जोखा

फल वृक्षों के साथ सह-फसली खेती करने से अकेले फल वृक्ष लगाने की अपेक्षा अधिक आय प्राप्त होती है। उदाहरण के तौर पर सारणी-2 में आय-व्यय के लेखा-जोखा

सारणी 1: आम के बाग के मृदा में अन्तःफसल लगाने के उपरान्त उर्वरक तत्वों का स्तर

क्रम सं.	फसलें	उपचार	पोषक तत्वों का मृदा में स्तर (पी.पी.एम.)					
			जैविक कार्बन	पोटैशियम	जिंक	कॉपर	मैग्नीज	लौह तत्व
1.	आम के बागों में अन्तः फसल लगाने के पहले	पालीथीन मल्चिंग	0.642	356.25	1.24	2.54	20.28	9.56
		पालीथीन मल्चिंग रहित	0.311	334.50	1.14	2.08	20.14	8.80
2.	फूलगोभी अन्तः फसल	पालीथीन मल्चिंग	0.428	421.50	1.56	6.40	20.36	8.78
		पालीथीन मल्चिंग रहित	0.545	294.75	1.22	9.24	20.96	8.72
3.	पत्तागोभी अन्तः फसल	पालीथीन मल्चिंग	0.565	291.0	1.14	1.04	21.04	12.66
		पालीथीन मल्चिंग रहित	0.506	441.50	1.56	1.18	20.44	9.78
4.	बैंगन अन्तः फसल	पालीथीन मल्चिंग	0.623	243.25	1.02	1.10	17.46	11.84
		पालीथीन मल्चिंग रहित	0.350	293.50	1.52	1.02	19.34	13.50
5.	लौकी अन्तः फसल	पालीथीन मल्चिंग	0.603	358.75	1.94	4.22	15.52	8.72
		पालीथीन मल्चिंग रहित	0.448	289.75	1.12	1.42	19.30	8.30

का विवरण दिया गया है। यही आम के साथ रबी में फूलगोभी, पत्तागोभी, ब्रोकली एवं मटर तथा खरीफ में लोबिया, बैंगन, तरोई, करेला एवं जायद में लौकी, कद्दू, भिंडी, तरबूज, खरबूज, बैंगन आदि की खेती सफलतापूर्वक करके आम के बागों के बीच के स्थान का सदुपयोग कर अतिरिक्त आय प्राप्त कर अधिकतम लाभ कमा सकते हैं।

आम के बाग में अन्तः फसलें (क. बैंगन, ख. ब्रोकली, ग. फूलगोभी, घ. पत्तागोभी, ङ. तरोई एवं च. लौकी)

अन्तःफसलों का दैनिक जीवन में महत्व

आम के बाग में उगायी जाने वाली अन्तःफसल के रूप में सब्जियों का हमारे दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। अपने दैनिक आहार में प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन 300 ग्राम सब्जियों का सेवन करना चाहिए। परन्तु वर्तमान समय में 145 ग्राम सब्जियाँ प्रतिदिन प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध हो पा रही हैं जो आवश्यकता से काफी कम है। जबकि सब्जियों के उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान चीन के बाद भारत का स्थान दूसरा है। परन्तु बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यकता के अनुरूप सब्जियों की उपलब्धता कम हो पा रही है। अतः आम के बाग में सब्जियों से अतिरिक्त आय प्राप्त करने के साथ-साथ दैनिक जीवन में इनके महत्व को इनमें पाये जाने वाले (प्रचुर मात्रा में) पोषक तत्वों को सारणी-3 के माध्यम से दर्शाया गया है।

सारणी 2: आम 6 वर्ष आधारित अन्तःफसल पद्धति के आय-व्यय का विवरण

क्रम सं.	फसल/किस्म	औसत उपज (कुन्तल/हेक्टेयर)	खेती में लागत प्रति हेक्टेयर (रुपये में)	अन्तःफसलों से आय (रुपये में)		मुख्य फसल आम से आय (रुपये में)	कुल आय शुद्ध लाभ (रुपये में)
				कुल लाभ	शुद्ध लाभ		
1.	फूलगोभी (गिरिजा, अर्ली पूसी)	140	20000	35000	15000	37000	52000
2.	पत्तागोभी (इण्डम–296)	113	18000	25000	7000	37000	44000
3.	ब्रोकली (ऐश्वर्या)	130	22000	40000	18000	37000	55000
4.	बैंगन (बी.एस.एस.–32)	184	13000	18000	5000	37000	42000
5.	लोबिया (कासी कंचन)	40	8000	12000	4000	37000	41000
6.	लौकी (अदिती, वरद)	110	13000	18000	5000	37000	42000

सारणी 3: लगाये गये अन्तःफसलों में पोषक तत्वों की मात्रा

क्रम सं.	फसल/किस्म	पोषक तत्व (100 ग्राम खाद्य योग्य भाग में)							
		जल (प्रतिशत)	कैलोरी (किलो कै.)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कोर्बोहाइड्रेट (ग्राम)	विटामिन–ए (आई.यू.)	विटामिन–सी (मिग्रा.)	रेशा (ग्राम)
1.	फूलगोभी (गिरिजा, अर्ली पूसी)	93	23	1.8	0.5	4.1	17	44	2.7
2.	पत्तागोभी (इण्डम–296)	94	22	1	0.4	4.5	132	20	2.3
3.	ब्रोकली (ऐश्वर्या)	91	28	3	0.4	5.1	1388	75	2.9
4.	बैंगन (बी.एस.एस.–32)	92.7	24	1.4	0.3	4.0	–	12	1
5.	लोबिया (कासी कंचन)	–	116	7.73	0.53	20.76	–	–	6.5
6.	लौकी (अदिती, वरद)	96.1	12	0.2	0.1	2.5	0	14	1.2

मधुशाला

मैं कायस्थ कुलोदभव मेरे पुरखों ने इतना ढ़ाला,
मेरे तन के लोहू में है पचहत्तर प्रतिशत हाला,
पुश्तैनी अधिकार मुझे है मदिरालय के आँगन पर,
मेरे दादों परदादों के हाथ बिकी थी मधुशाला।

-हरिवंशराय 'बच्चन'

फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारक

देवेन्द्र पाण्डेय[1], धीरू कुमार तिवारी[2], शिल्पा सिंह[3] एवं अवनीश पाण्डेय[4]
[1,2,3,4]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अच्छी गुणवत्ता के साथ फलों का अधिकतम उत्पादन किसानों का प्रथम उद्देश्य होता है जिससे वे अपने बाग से अधिक-से-अधिक लाभ प्राप्त कर सके। गुणवत्ता फलों की श्रेष्ठता का एक महत्वपूर्ण सूचक होता है जिसके आधार पर ग्राहक उनको खरीदने को प्राथमिकता देते हैं। ग्राहक उसी फल को खरीदना चाहते हैं जो दिखने में आकर्षक, सुगठित एवं अच्छी सुगंध वाले हो। फलों की सम्पूर्ण गुणवत्ता का निर्धारण तुड़ाई के बाद नहीं हो सकता है। सस्यन क्रियाओं से ही अधिकांश गुणवत्ता को दो तरह से निर्धारित किया जा सकता है जो निम्नलिखित हैं।

(क) बाहरी कारकः फलों को खरीदते समय ग्राहक बाहरी कारकों को देखता है किन्तु ये कारक अस्थायी होते हैं। इन्हें मानक नहीं माना जा सकता है। ये कारक हैं फलों का रंग-रूप, उसकी चमक, वजन, सुगठितता एवं सुगंध इत्यादि।

(ख) आंतरिक कारकः फलों के अंदर पाये जाने वाले रासायनिक संगठन को निर्धारित करने वाले कारक फलों की गुणवत्ता को भी निर्धारित करते हैं। इनके अंतर्गत फलों में पाये जाने वाले कुल घुलनशील पदार्थ (टी.एस.एस) की मात्रा, खट्टापन, विटामिन, प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, कुल घुलनशील पदार्थ एवं खट्‌टेपन का अनुपात, फलों में पाये जाने वाले लोहा, मैग्नीशियम, कैल्सियम, फास्फोरस, जस्ता इत्यादि महत्वपूर्ण कारक हैं। ये कारक बाहरी कारकों की तुलना में स्थायी होते हैं।

फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता अनेक प्रकार से प्रभावित होती है जिसके कारण किसानों को समुचित लाभ नहीं मिल पाता है। उत्पादकता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले मुख्यतः दो कारक होते हैं जिनमें पहला तुड़ाई पूर्व तथा दूसरा तुड़ाई उपरान्त कारक है। तुड़ाई के बाद वाले कारकों में तुड़ाई की अवस्था एवं तरीका, तुड़ाई उपरांत रख-रखाव, प्रतिशीतलन, फलों की धुलाई, श्रेणीकरण, रसायनिक छिड़काव, पैकेजिंग, भंडारण, रोग एवं व्याधियाँ तथा उनके ट्रांसपोर्ट इत्यादि तक के क्रियाकलाप आते हैं।

[1]प्रधान वैज्ञानिक एवं [2,3,4]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता

उत्पादकता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले तुड़ाई पूर्व कारकः निम्नलिखित कारक फलों की तुड़ाई से पहले उनकी उत्पादकता एवं गुणवत्ता को निर्धारित करते हैं तथा तुड़ाई के बाद भी उनकी गुणवत्ता को बनाये रखने में सहायक होते हैं।

फल वृक्ष लगाने के लिए भूमि का चयनः किसी भी बाग को लगाने से पूर्व भूमि का चयन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। बाग लगाने के लिए समतल, उपजाऊ, शहर के समीप की भूमि का चयन करना चाहिए। ऊबड़-खाबड़ भूमियों में कम फल उत्पादित होना, शहर के समीप न होने की वजह से बाजार पहुँचने में देरी होने के कारण फलों की गुणवत्ता खराब हो जाती है।

1. मृदा प्रबंधनः विभिन्न फलों के रोपण के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की मृदा की आवश्यकता होती है क्योंकि मृदा पौधों की जल एवं खनिज पोषण के अवशोषण की क्षमता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। आम के लिए काली मृदा हानिकारक होती है। वहीं नीबूवर्गीय फलों को चूनेदार काली मिट्टी रास आती है। आँवला तथा बेल को अधिक पी.एच वाली मृदा पर भी उगााया जा सकता है। शुष्क क्षेत्रों वाली मृदाओं में नमी की कमी होती है। अतः उसमें खजूर, अमरूद, अनार, बेर इत्यादि भी सफलतापूर्वक अच्छी गुणवत्ता वाले फल अधिक मात्रा में उगाये जा सकते हैं। मृदा में उपस्थित नमी, खनिजों की मात्रा तथा कार्बन-नाइट्रोजन का अनुपात फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को निर्धारित करते हैं।

2. किस्म तथा आनुवंशिकीयः यह कारक किस्म के प्रकार

पर निर्भर करता है कि किस्म विशेष के अन्दर किस प्रकार की विशेषता है। कुछ किस्में समस्याग्रस्त भूमियों पर भी गुणवत्ता युक्त उत्पादन देती हैं जबकि कुछ किस्में विशेष परिस्थितियों में ही अच्छा उत्पादन देती हैं। कुछेक किस्में किसी रोग, कीट अथवा अजैव पीड़ा के प्रति संवेदनशील होती है। कुछ किस्मों के अंदर किसी पदार्थ की कमी अथवा बहुलता होती है। आम की प्रजाति आम्रपाली में बीटा कैरोटीनायड्स प्रचुर मात्रा में होती है। लंगड़ा में विटामिन-सी की अधिकता होती है। आम्रपाली आम की नियमित फल देने वाली प्रजाति है जबकि दशहरी एवं लंगड़ा एकांतरित फल वाली किस्में हैं। ये सभी फलों की उत्पादकता तथा गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं।

3. तापमानः फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को निर्धारित करने में तापमान का महत्वपूर्ण योगदान है। फल वृक्षों तथा फलों की वृद्धि एवं विकास के लिए उचित तापमान का होना अत्यन्त ही आवश्यक होता है। पौधों की जड़ों से लेकर पुष्पन, पत्तियों तथा फलों के विकास तक में तापमान का अनेक महत्व है। आम में पुष्पन के लिए 15/8 डिग्री सें.ग्रे. दिन/रात का तापमान होना आवश्यक होता है। एक निश्चित सीमा से अधिक तापमान हो जाने से एंथोसायनिन और कैरोटेनायड्स के विकास की गति रूक जाती है। बहुत अधिक तापमान की वजह से फलों की त्वचा ढीली हो जाती है तथा विभिन्न रसायनिक तत्वों का अपघटन शुरू हो जाता है। इसके विपरीत कम तापमान पर फलों की कोशिकाएँ फटने लगती हैं तथा लिपिड का अपघटन होने लगता है। इस कारण चिलिंग इंजरी की समस्या उत्पन्न हो जाती है। तापमान की निम्नता अथवा अधिकता के कारण भिन्न-भिन्न प्रकार के दैहिक विकार की भी समस्या उत्पन्न होती है। सामान्यतया यह देखा गया है कि वृक्षों में छत्रक के बाहरी आवरण में लगने वाले फलों की संख्या अधिक होती है तथा फल पहले भी पकते हैं। इसके विपरीत अन्दरूनी हिस्से में कम फल लगते हैं तथा फल देरी से भी पकते हैं।

4. प्रकाश : प्रकाश भी फलों की उत्पादकता तथा गुणवत्ता को प्रभावित करता है। पत्तियों में प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया के लिए प्रकाश की आवश्यकता होती है जिससे फलों के विकास के लिए आवश्यक खाद्य-पदार्थों का निर्माण होता है। इसके अतिरिक्त फलों में रंगीन वर्णकों का निर्माण होता है और शर्करा भी बनती है जो फलों में मीठेपन के लिए आवश्यक होती है। प्रकाश की उपलब्धता की दृष्टि से फलों को अल्पावधि प्रकाश चाहने वाले, उदासीन तथा दीर्घावधि प्रकाश चाहने वाले पौधों में वर्गीकृत किया जाता है।

5. सिंचाई : अधिक उपज तथा उत्तम गुणवत्तायुक्त फलों के लिए सिंचाई का उचित प्रबंधन बहुत ही आवश्यक होता है। साथ ही उच्च गुणवत्ता वाले फलों के लिए उत्तम गुणवत्ता वाले जल से उचित समय पर सिंचाई करने की जरूरत होती है। नमी की अल्पता एवं अधिकता से भी विभिन्न प्रकार के रोग, कीट तथा दैहिक विकारों का आगमन होता है जो उत्पादकता एवं गुणवत्ता को प्रभावित भी करता है।

6. खाद एवं उर्वरक : कम उत्पादकता तथा निम्न गुणवत्ता वाले फलों के लिए खाद एवं उर्वरकों का अनुचित प्रयोग जिम्मेदार होता है जो एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण कारक है। फल वृक्षों में वृद्धि पर मृदा तथा पौधों में उपस्थित तत्वों का सीधा प्रभाव पड़ता है। पोषक तत्वों की कमी से विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न होती है। पोषक तत्वों की कमी को खाद तथा उर्वरकों के द्वारा ही पूर्ण किया जा सकता है। अधिक नाइट्रोजन की मात्रा लैंगिक वृद्धि के सापेक्ष प्ररोही वृद्धि को बढ़ावा देती है तथा फलों की गुणवत्ता को कम करती है। फास्फोरस की आवश्यकता फलों के लगने समय होती है। कैल्सियम का आदर्श स्तर एन्जाइमों की क्रिया को रोक देता है जो फलों के भूरेपन के लिए जिम्मेदार होता है। जैसे जिंक, बोरॉन आदि जैसे कुछ सूक्ष्म पोषक तत्व भी फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। पोटैशियम फलों की गुणवत्ता (फलों के रंग, सुगंध तथा आकार) बनाये रखने के लिए जिम्मेदार होता है। यह पौधों तथा फलों में रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। इसकी कमी से केले का गुच्छा अच्छी तरह से भर नहीं पाता है। बोरॉन की कमी से लीची, अनार आदि में फलों के फटने की समस्या, आँवला में फलों का परिगलन, नेक्रोसिस इत्यादि समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

7. अनियमित सधाई एवं कँटाई-छँटाई: पौधों को उचित आकार एवं संतुलन बनाये रखने के लिए सधाई की जाती है। फलों के उत्पादन तथा गुणवत्ता के लिए कटाई-छँटाई तथा सधाई की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अंगूर, अनार, अमरूद इत्यादि कुछ फलों में अधिक उत्पादन तथा उच्च गुणवत्ता के लिए सधाई एवं कटाई-छँटाई के द्वारा अवांछित, रोग शाखाओं को हटा दिया जाता है जिससे प्रकाश, पोषण तथा तापमान का उचित उपयोग फल निर्माण एवं विकास में हो पाता है। इसके अतिरिक्त कटाई-छँटाई की कुछ नयी तकनीकियों जैसे कि शाखाओं से छल्ले निकालना, फलों का विरलीकरण करना इत्यादि क्रियाओं से फलों की उत्पादन क्षमता तथा गुणवत्ता प्रभावित होती है। छिलके का छल्ला बनाकर उतारने से शाखाओं के शीर्ष भाग का पोषण नयी फूल कलिकाओं द्वारा उपभोग कर लिया जाता है। इसी प्रकार फल विरलीकरण से फसल का वजन कम हो जाता है तथा फलों की गुणवत्ता में वृद्धि होती है। अधिक फसल भार होने से टहनियों के टूटने का डर भी बना रहता है। शीतोष्ण फलों, जिनमें कि सुसुप्तावस्था को तोड़ने के लिए कम तापमान की आवश्यकता पड़ती है, सुसुप्तावस्था के समय ही कटाई-छँटाई करना आवश्यक होता है।

8. कीट, रोग एवं दैहिक विकार : बागों में कीट, रोग तथा दैहिक विकारों का प्रकोप फल उत्पादन के साथ-साथ फलों की गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं जिस कारण फलों का बाजार मूल्य कम हो जाता है। कभी-कभी इन कारकों के कारण तो पूरा बाग ही प्रभावित हो जाता है जिससे उत्पादन तथा गुणवत्ता में भारी कमी आ जाती है। कुछ कीट पत्तियों को काटकर नुकसान पहुँचाते हैं जिससे पत्तियों में प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। फल-मक्खी फलों को छेदकर उनके अन्दर ही अपने अण्डे देती हैं जो बाद में अंदर-ही-अंदर फलों को खराब कर देते हैं। आम, पपीता, अमरूद इत्यादि फलों में फल-मक्खी का भयानक प्रकोप होता है। वातावरण में नमी अधिक होने से कीटों के प्रकोप की आशंका ज्यादा बनी रहती है। अनेक प्रकार की फफूँद, जीवाणु और विषाणुओं की सक्रियता भी उत्पादन तथा गुणवत्ता को प्रभावित करती है। इन रोगों की वजह से फल सड़ने तथा गिरने लगते हैं। दैहिक विकारों जैसे फलों का गिरना, फटना इत्यादि से भी अधिक मात्रा में फलों को नुकसान पहुँचता है।

9. पादप वृद्धि नियामक: कुछ वृद्धि नियामक जैसे एब्सिसिक एसिड, इथिलीन इत्यादि की अधिकता के कारण फलों में सठियाव की अवस्था तथा पकने की प्रक्रिया समय से पहले शुरू हो जाती है। एब्सिसिक एसिड के कारण फलवृन्त में एक परत बन जाती है जिसे अपच्छेदन परत (एब्सीसन लेयर) कहते हैं जो फलों को गिराने में सहायक होती है। 2, 4 डी (2, 4-डी) तथा नेफ्थेलिन एसिटिक अम्ल के प्रयोग द्वारा फलों के झड़ने की प्रक्रिया को कम किया जा सकता है। इन वृद्धि नियामकों की अति अल्प मात्रा में प्रयोग मात्र से पौधे फलों पर प्रभाव दिखायी देने लगता हैं। जिब्रेलिक अम्ल का प्रयोग अंगूर की बेरी को समान रूप से बढ़ाने में किया जाता है। नेफ्थेलिन एसिटिक अम्ल के प्रयोग द्वारा पौधों में फलों की संख्या को भी बढ़ाया जा सकता है।

मधुशाला

धर्मग्रन्थ सब जला चुकी है, जिसके अंतर की ज्वाला,
मंदिर, मसजिद, गिरिजे, सब को तोड़ चुका जो मतवाला,
पंडित, मोमिन, पादिरयों के फंदों को जो काट चुका,
कर सकती है आज उसी का स्वागत मेरी मधुशाला।

-हरिवंशराय 'बच्चन'

अमरूद में उपज एवं गुणवत्ता बढ़ाने का विकल्प-बहार नियंत्रण

प्रमोद कुमार सिंह[1] एवं शैलेन्द्र राजन[2]

[1,2]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अमरूद (*सिडियम ग्वाजावा* एल) एक महत्वपूर्ण फल है। इसकी उत्पत्ति अमेरिका के उष्ण कटिबंधीय भाग में मानी जाती है। भारत की जलवायु के अनुकूल होने के कारण अमरूद का पौधा 17वीं शताब्दी में यहाँ लाया गया था। तब से यहाँ इसकी खेती व्यावसायिक रूप से की जा रही है। अधिक सहिष्णु होने के कारण अमरूद की खेती अनेक प्रकार की मिट्टी तथा जलवायु में की जा सकती है। सामान्यतः अमरूद का पौधा वर्ष में तीन बार फल देता है। लेकिन जाड़े की ऋतु में इसका उत्पादन प्रचुरता में होने के कारण यह लोगों को आसानी से उपलब्ध हो जाता है। सस्ता होने के कारण इसे गरीबों के सेब की भी संज्ञा दी गयी है। सामान्यतः यह देखा गया है कि जब लोग फल खरीदने जाते हैं तो उनकी नजर में सेब, संतरा, अंगूर, केला आदि फल ही पोषक तत्वों वाले होते हैं। अमरूद जैसा सस्ता एवं सुलभ फल उच्च वर्ग के लोगों में कम लोकप्रिय है तथा उन्हें गरीबों के खाने योग्य ही माना जाता है। परन्तु वास्तविकता इससे बिलकुल विपरीत है। अमरूद में सेब से भी अधिक पोषक तत्व विद्यमान होते हैं। जब से आहार विशेषज्ञों ने इसके गुणों को प्रकाशमान किया है, तब से अमरूद ने भी उच्च मध्यम वर्ग तथा उच्च वर्ग की डाइनिंग टेबल पर अपना स्थान बनाया है। इसमें विटामिन-सी तथा पेक्टिन अधिक मात्रा में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रति-ऑक्सीकारक (ऐंटीऑक्सीडेंट), विटामिन-ए और बी, लोहा, फास्फोरस, प्रोटीन तथा रेशा भी इसमें अधिक मात्रा में पाया जाता है। इसके फल के साथ-साथ इसकी पत्तियों एवं फूलों का भी औषधीय महत्व है।

अमरूद नाम संस्कृत के अमरूद्ध शब्द का अपभ्रंश है जिसका तात्पर्य है आम के प्रभाव को रूद्ध (रोकने) करने की ताकत रखने वाला फल। यही प्रचलित शब्द अमरूद है।

बहार नियंत्रणः भारत के उत्तर एवं पूर्वी हिस्सों में प्रति वर्ष दो बार तथा पश्चिमी और दक्षिणी भारत में वर्ष में तीन बार इसके फल आते हैं। शरद ऋतु में आने वाले इसके फल को मृग बहार कहते हैं जबकि वर्षा ऋतु में जो फल आते उसे अम्बे बहार कहा जाता है। बसंत/ग्रीष्म ऋतु में आने वाले फल को हस्त बहार की भी संज्ञा दी गयी है। शरद ऋतु के फल उच्च कोटि के मीठे एवं अधिक गुणवत्ता वाले होते हैं। इस बहार को प्राप्त करने के लिए वर्षा ऋतु वाली फसल के फूलों को नियंत्रण करना आवश्यक होता है क्योंकि अनियंत्रित अवस्था में फल की गुणवत्ता अच्छी नहीं रहती और ये फल-मक्खी से भी ग्रस्त रहते हैं। साथ ही इनका बाजार मूल्य कम होता है। इस बहार नियंत्रण का नियम क्षेत्र एवं तरीकों के भिन्न-भिन्न जलवायु कारकों, फसल पद्धति तथा प्रजाति पर निर्भर करता है। अतः इस प्रक्रिया को बहार नियंत्रण कहते हैं।

cgkj dk idkj	Qy yxu dk le;	Qyu dk le;	x|.koRrk
शीतकालीन (मृग बहार)	जून–जुलाई (वर्षा ऋतु)	नवम्बर–जनवरी (शरद ऋतु)	फल उच्च कोटि के मीठे एवं बड़े होते हैं। उपज एवं बाजार मूल्य अधिक प्राप्त होता है।
वर्षाकालीन (अम्बे बहार)	फरवरी–मार्च (बसंत ऋतु)	जुलाई–सितम्बर (वर्षा ऋतु)	फल स्वाद में कम भी हैं एवं गुणवत्ता अच्छी नहीं रहती है।
बसंत/ग्रीष्म कालीन (हस्त बहार)	अक्टूबर–नवम्बर (शरद ऋतु)	फरवरी–अप्रैल (बसंत/ग्रीष्म ऋतु)	फलों का स्वाद अच्छा लेकिन ऊपज कम मिलती है।

[1]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता एवं [2]निदेशक

उद्देश्य

1. इसका वृक्ष एक ऋतु की फलत के बाद अगली फलत के लिए सुसुप्तावस्था में चला जाता है।
2. फलों की समानता में सुधार लाने के लिए।
3. फलों की उच्चतम गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए।
4. उत्पादन क्षमता में वृद्धि के लिए जिससे उत्पादक को लाभ हो सके।
5. रोग एवं कीट मुक्त वृक्ष और फल की प्राप्ति के लिए।
6. फलों की अच्छी भंडारण क्षमता के लिए।
7. बाजार में अधिक मूल्य प्राप्त करने के लिए।
8. निर्यात हेतु गुणवत्ता वाले फलों के उत्पादन के लिए।

वर्षाकालीन या मानसून फसल (अम्बे बहार): इस बहार में पुष्पन फरवरी-मार्च के महीने में आता है जो एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। लेकिन इस बहार में कुछ दोष भी होते हैं। उत्तर भारत में जहाँ उपोष्ण जलवायु होती है वहाँ पर फलत ग्रीष्म ऋतु में आती है। उस समय पानी की माँग अधिक होती है। इस मौसम की जलवायु फल के लिए अनुकूल नहीं होती है। फल के परिपक्व होने के समय जब मानसून आता है तब बादल छाये रहते हैं जिस कारण अधिक आर्द्रता रहती है। इस कारण फल की गुणवत्ता एवं रंग आदि प्रभावित होते हैं। इस बहार के फल लीफ स्पॉट तथा फल बंधक आदि विभिन्न प्रकार के रोगों तथा कीटों से प्रभावित रहते हैं।

शीतकालीन फसल (मृग बहार): प्राकृतिक नहीं होने के बावजूद कई मायनों में यह बहार सबसे अच्छी होती है। इसमें पुष्पन जून-जुलाई में आता है। इस मौसम में तनाव अप्रैल-मई महीने के दौरान होता है परन्तु इसके बाद भी सिंचाई की आवश्कता नहीं होती है। इस अवधि के मौसम में फलत अच्छी आती है। फल अधिक गुणवत्ता वाले होने के साथ ही इसका उत्पादन भी अधिक होता है।

बसंत/ग्रीष्म कालीन फसल (हस्त बहार): यह बहार पश्चिमी तथा दक्षिणी भारत में पायी जाती है। इसमें पुष्पन अक्टूबर-नवंबर महीने में आता है तथा फलत फरवरी-अप्रैल महीने में आती है। इसमें फलों की गुणवत्ता अच्छी होती है लेकिन उपज बहुत कम आती है। इस प्रकार इन बेमौसमी ऋतु के फलों से बाजार मूल्य अधिक प्राप्त हो जाता है।

बहार नियंत्रण की विधियाँ

बसंत ऋतु के फूलों को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न निम्नलिखित प्रक्रियाएँ अपनायी जाती हैं।

1. **सिंचाई के पानी को रोक कर:** इस प्रक्रिया के अन्तर्गत पौधों को गर्मी में (फरवरी मध्य से मई) पानी नहीं दिया जाता है जिससे पत्तियाँ गिर जाती है एवं पौधे सुसुप्तावस्था में चले जाते हैं। पानी रोकने की यह प्रक्रिया चार वर्ष से अधिक उम्र के पौधों में ही करनी चाहिए। इस समयावधि के दौरान पौधे अपनी शाखाओं में खाद्य पदार्थ का संरक्षण करते हैं। इसके बाद सिंचाई की जाती है जिससे मृग बहार में अधिक मात्रा में फूल खिलते हैं एवं शरद ऋतु में फल पक कर तैयार हो जाते हैं। इस कार्य हेतु स्थानीय अनुभवानुसार पानी रोकने की समय सीमा तय करनी चाहिए।
2. **जड़ों के पास की मृदा को निकालकर:** इस विधि में जड़ के आस-पास की ऊपरी मृदा को अप्रैल-मई में सावधानीपूर्वक खोद कर बाहर निकाल दिया जाता है। इससे जड़ों को सूर्य का प्रकाश अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। इसके परिणामस्वरूप मृदा में नमी की कमी हो जाती है एवं पत्तियाँ गिरने लगती है। साथ ही पेड़ सुसुप्तावस्था में भी चले जाते हैं। इसके 20-25 दिनों बाद जड़ों को मिट्टी द्वारा फिर से ढक दिया जाता है एवं खाद देकर सिंचाई कर दी जाती है। इसके प्रयोग से वृक्षों की आयु कम हो जाती है और उनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
3. **पेड़ों की शाखाओं को झुकाकर:** जिस पेड़ की शाखाएँ सीधी रहती हैं वे बहुत कम फल देती हैं। अतः ऐसे वृक्षों की शाखाओं को अप्रैल-जून माह में झुकाकर जमीन में बाँध दिया जाता है एवं शाखाओं की शीर्ष

ऊपरी 10-12 जोड़ी पत्तियों को छोड़ कर अन्य छोटी-छोटी शाखाओं, पत्तियों, फूलों एवं फलों को काट-छाँट कर अलग कर दिया जाता है जिससे झुकाने के बाद मुख्य शाखाओं में 10-15 दिनों के अन्दर सहायक छोटी शाखाएँ आ जाती है एवं निष्क्रिय कलियाँ भी सक्रिय हो जाती है। शाखा झुकाने के 40-45 दिनों बाद

	xzh"e _rq esa 'kk[kkvksa dks >qdkdj	'kjn _rq esa 'kk[kkvksa dks >qdkdj
शाखाओं को झुकाने का समय	अप्रैल–जून	सितंबर–नवंबर
नयी शाखाओं का निकलना	झुकाने के 8–10 दिन बाद	झुकाने के 20–25 दिन बाद
पुष्पन	झुकाने के 40–45 दिन बाद	झुकाने के 60–65 दिन बाद

अधिक मात्रा में फूल आने लगते हैं एवं फलत भी अच्छी प्राप्त होती है।

4. **खाद एवं उर्वरकों का प्रयोगः** सामान्यतः जून के महीने में उर्वरकों का प्रयोग कर आने वाली मृग बहार में फूलों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।

5. **हाथ द्वारा फूलों को तोड़कर (हैण्ड थिनिंग):** इस विधि में पौधे के फूलों या फलों को हाथों द्वारा तोड़कर अलग कर दिया जाता है जिससे वृक्ष से फिर से अगली बहार की शाखाएँ निकलने लगती हैं।

6. **पौधों की छँटाईः** फलन बहार का सबसे सस्ता, प्रभावी सस्य तकनीक है इसमें बसन्त ऋतु की फसल को हटाने के लिए पौधे की शाखाओं को काटकर अलग कर दिया जाता है जिससे अगली फसल के लिये नयी शाखाओं का विकास होगा जिससे उपज में वृद्धि होगी। अप्रैल के आखिरी सप्ताह में पेड़ के ऊपरी 20-30 सें.मी. शीर्ष शाखाओं को काटकर अलग कर देने से वर्षाकालीन फसल की हटाया जा सकता है।

7. **रासायनिक विधि**

- इस विधि में अमरूद के फूलों को रोकने के लिए 600 पी.पी.एम. नेप्थलीन एसिटिक एसिड (एन.ए.ए.) का छिड़काव करने से वर्षा ऋतु की फसल को नियंत्रित कर जाड़े की फसल को प्राप्त किया जा सकता है। यूरिया का 10 प्रतिशत छिड़काव करने से फूलों को नियंत्रित किया जा सकता है।
- फूलों को गिराने हेतु यूरिया (5-6 प्रतिशत), नेप्थलीन एसिटिक एसिड (20 पी.पी.एम.) का पुष्पन के समय दो छिड़काव करने से पत्तियाँ जल जाती हैं और फूल गिर जाते है। ऐसा करने से बरसात में भारी संख्या में पुष्प आते है जिन पर जाड़े की ऋतु में अच्छी फसल लगती है।
- बहार नियंत्रण के लिए 25 प्रतिशत यूरिया का एक छिड़काव तथा 10 प्रतिशत यूरिया के दो बार छिड़काव करने से इलाहाबाद सफेदा एवं सरदार प्रजाति में अच्छी अप्रैल-मई में गुणवत्ता एवं उपज प्राप्त की जा सकती है।

fLFkfr	iztkfr	jlk;u	mi;ksx dk le;
लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	इलाहाबाद सफेदा, सरदार	यूरिया (10 प्रतिशत)	30 अप्रैल व 10 मई (दो छिड़काव)
लुधियाना (पंजाब)	इलाहाबाद सफेदा	10 प्रतिशत यूरिया का घोल	मई के तीसरे सप्ताह में
पटियाला (पंजाब)	इलाहाबाद सफेदा	15 प्रतिशत यूरिया का घोल	अप्रैल के प्रथम सप्ताह या मई के प्रथम सप्ताह और छिड़काव के 10–15 दिन दूसरा छिड़काव
साबर बिहार	इलाहाबाद सफेदा	एन.ए.डी. 50 पी.पी.एम.	अप्रैल के चौथे एवं मई के दूसरे सप्ताह में कुल दो छिड़काव

बहार नियंत्रण के लाभ

1. उच्च गुणवत्तायुक्त फल प्राप्त होते हैं।
2. रोग रहित मुख्य रूप में फल-मक्खी रहित प्राप्त होते हैं।
3. प्रदर्शन हेतु उच्च गुणवत्ता वाले फल प्राप्त होते हैं।
4. फलों की भंडारण क्षमता में सुधार होता है।
5. बाजार मूल्य अधिक प्राप्त होता है।
6. पिछड़ी फसल में हुई हानि की क्षतिपूर्ति हो जाती है।

बहार नियंत्रण की हानियाँ

1. पौधों की कटाई-छँटाई में मानव श्रम की आवश्यकता होती है जिससे कार्य थोड़ा महँगा हो जाता है।
2. खाद, उर्वरक, रसायन एवं पादप वृद्धि नियामक की अधिक आवश्यकता होती है।
3. अधिक देखभाल एवं रख-रखाव की आवश्यकता भी पड़ती है।

निष्कर्ष

अमरूद भारत के उन मुख्य फलों में से एक महत्वपूर्ण फल है जिसमें अधिक उपज एवं गुणवत्ता प्राप्त करना आवश्यक है। अतः फसल उत्पादन के वांछित उद्देश्य और लाभ प्राप्त करने के लिए फसल बहार एक गुणवत्ता पूर्ण कार्य है। भारत में विभिन्न अनुसंधान संस्थान, कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र आदि अनुसंधान के द्वारा भिन्न-भिन्न प्रौद्योगिकियाँ विकसित कर रही हैं जिसकी सहायता से वांछित बहार को लेकर उच्च गुणवत्ता एवं अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

मंगलयान

मंगलयान भारत का प्रथम मंगल अभियान है। इसका औपचारिक नाम मंगल कक्षित्र मिशन है। यह भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन की एक अन्तरिक्ष परियोजना है। इस परियोजना के अन्तर्गत 5 नवम्बर 2013 को 2 बजकर 38 मिनट पर मंगल ग्रह की परिक्रमा करने के लिए एक उपग्रह आंध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा स्थित सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान (पी.एस.एल.वी.) सी-25 के द्वारा सफलतापूर्वक छोड़ा गया। इसके साथ भारत भी उन सभी देशों में शामिल हो गया है जिन्होंने मंगल पर अपने-अपने यान भेजे हैं। मंगल पर भेजे जाने वाले दो-तिहाई अभियान अब तक असफल रहे हैं। परन्तु 24 सितंबर 2014 को मंगल पर पहुँचने के साथ ही भारत विश्व में अपने प्रथम प्रयास में ही सफल होने वाला पहला देश बन गया है। इसके अतिरिक्त ये मंगल पर भेजा गया सबसे सस्ता मिशन भी है।

वस्तुतः यह एक प्रौद्योगिकी प्रदर्शन परियोजना है जिसका लक्ष्य अन्तरग्रहीय अन्तरिक्ष मिशनों के लिये आवश्यक डिजाइन, नियोजन, प्रबंधन तथा क्रियान्वयन का विकास करना है। आर्बिटर अपने उपकरणों के साथ कम-से-कम 6 माह तक कक्षा में दीर्घ वृत्ताकार पथ पर मंगल की परिक्रमा करता रहेगा तथा आंकड़े एवं तस्वीरें पृथ्वी पर भेजेगा। दुनिया की प्रतिष्ठित टाइम पत्रिका ने मंगलयान को 2014 के सर्वश्रेष्ठ आविष्कारों में शामिल किया।

महुआ के पोषक तत्व एवं उनकी उपयोगिता

ए.के. सिंह[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

महुआ सैपोटसी कुल का आर्थिक दृष्टि से एक बहुद्देशीय वृक्ष है। यह उत्तर भारत के जंगलों एवं सड़कों के किनारे छायादार वृक्ष के रूप में देखा जा सकता है। इसका जन्म स्थान भारत है। सामान्यतया महुआ धीमी गति से बढ़ने वाला वृक्ष है जिसकी ऊँचाई 20 से 25 मीटर तक की होती है। महुआ की बागवानी शुष्क क्षेत्र, कंकरीली एवं क्षारीय मिट्टी में की जाती है। दक्षिण भारत में महुआ का वृक्ष मंदिरों के किनारे पाया जाता है। महुआ की लकड़ी का गूदा, लकड़ी एवं पेपर बनाने के काम में आता है। महुआ के फूल में शर्करा, खनिज तत्व, विटामिन एवं कैल्सियम पाया जाता है। गन्ने के बाद महुआ का फूल ही ऐसा होता है जिसको किण्वित कर एल्कोहल एवं सिरका बनाया जा सकता है। इसके फूल को सुखाकर पालतू जानवरों को भी खिलाया जाता है। आदिवासियों द्वारा इसके फूल एवं फल को मुख्य भोजन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

महुआ के बीज में 20 से 50 प्रतिशत तक वसायुक्त अम्ल पाया जाता है जो साबुन बनाने में प्रयुक्त होता है। इसका तेल निकालने के बाद जो खली या केक बचता है उसे एक अच्छे कार्बनिक खाद के रूप में उपयोग किया जाता है। महुआ के तेल को जलाने से साँप और कीड़े दूर भाग जाते हैं। आदिवासी लोग महुआ के तेल को मछली मारने एवं साँप के काटे हुए मरीज के इलाज के लिए इस्तेमाल करते हैं। इसके बीज से जो तेल निकलता है उसे वानस्पतिक घी के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। महुआ का वसा पामिटिक एसिड का एक अच्छा श्रोत होता है जिसका कास्मेटिक उद्योग में प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त महुआ के तेल का प्रयोग साबुन, ग्रीस, फैटयुक्त एल्कोहल एवं मोमबत्ती बनाने में भी होता है। महुआ के कच्चे फल से सब्जी बनायी जाती है। इसकी लकड़ी का इस्तेमाल फर्नीचर एवं दरवाजा बनाने में होता है। महुआ के वृक्ष के विभिन्न अव्यवों में पाये जाने वाले तत्व निम्नलिखित हैं।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

फूलः महुआ का फूल (करोत्ना) गोलाकार/अंडाकार, खुशबूदार एवं मीठे स्वाद वाला होता है। यह मिठास (शुगर), विटामिन-ए एवं विटामिन-सी और खनिज (मिनरल) का अच्छा श्रोत होता है। इसके फूल में 20-25 प्रतिशत कुल शर्करा, 43 से 61 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम विटामिन-सी, 525 से 696 आई.यू. विटामिन-ए एवं 0.8 से 1.5 प्रतिशत खनिज होता है।

फलः महुआ का फल अंडाकार एवं 2.5 से 3.0 से.मी. लंबा होता है जो पकने के बाद पीला या नारंगी रंग का हो जाता है। फल का गूदा शर्करा एवं अल्कोहल का श्रोत होता है। महुआ के सूखे फल के हस्क से एक टन मात्रा में 130 लीटर तक अल्कोहल बनाया जा सकता है।

महुआ के फल में पाये जाने वाले तत्व इस प्रकार हैं।

टेबल-1

rRo	Ekk=k
हस्क	55–65 प्रतिशत
शर्करा	10–15 प्रतिशत
विटामिन–सी	51–72 मि.ग्रा./100 ग्राम
विटामिन–ए	586–890 आई.यू.
खनिज	1.8–2.4 प्रतिशत

बीजः महुआ के बीज में असंतृप्त फैटी एसिड (लिनोलिक एसिड) पाया जाता है जो खून में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को कम करता है। यह हृदय के मरीज के लिए लाभकारी है। महुआ का तेल पाल के तेल से अधिक कीमती होता है जिसका उपयोग वनस्पति घी, साबुन, ग्रीस एवं बायोडीजल के रूप में भी किया जाता है। महुआ के तेल में पाये जाने वाले फैटी एसिड का विवरण निम्नुसार है।

महुआ के केक/खली में पाये जाने वाले तत्व निम्नांकित हैं।

टेबल-2

mRikn	fooj.k	Ekk=k
फैटी एसिड	पामिटिक एसिड	16–28.2 प्रतिशत
	स्टीयरिक एसिड	20–25.1 प्रतिशत
	एरेडिमिक एसिड	0.0–3.3 प्रतिशत
	ओलिमिक एसिड	41–51 प्रतिशत
	लिनोसिक एसिड	8.9–13.7 प्रतिशत

महुआ का बीज पके हुए फल से निकाला जाता है। इसमें 8 प्रतिशत तक नमी होती है। अतः महुआ के बीज को सूखाकर संरक्षित किया जाता है। बीज को जूट की बोरी में संरक्षित करना चाहिए। सूखाकर रखा गया इसका बीज अनेक वर्ष तक खराब नहीं होता है। महुआ का ताजा एवं सूखा फूल पोषक खाद्य उत्पाद बनाने में प्रयुक्त होता है। इसे केक,

टेबल-3

mRikn	fooj.k	Ekk=k
महुआ केक	नमी/आर्द्रता	08–10 प्रतिशत
	फैट	08–13.3 प्रतिशत
	प्रोटीन	15–17 प्रतिशत
	रेशा	08–10 प्रतिशत
	आश	04–6 प्रतिशत
	सैवोमिन	06–8 प्रतिशत
	कार्बोहाइड्रेट	40–50 प्रतिशत

सिरका, जैम, सीरफ एवं शहद बनाने में भी प्रयोग किया जाता है। महुआ के तेल में पाया जाने वाला सैपोनिन का व्यावसायिक उद्योग में उपयोग होता है। महुआ के तने का छिलका बुखार, डाइरिया एवं अल्सर में प्रयोग होता है। इसका फूल एवं शीशम का बीज भूनकर कफ एवं कोल्ड में प्रयोग होता है।

इस प्रकार महुआ के पौधों का सभी भाग आर्थिक उत्पाद बनाने में प्रयोग होता है।

चन्द्रयान

चन्द्रयान भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के एक अभियान एवं यान का नाम है। चंद्रयान चंद्रमा की तरफ कूच करने वाला भारत का पहला अंतरिक्ष यान है। इस अभियान के अन्तर्गत एक मानव रहित यान को 22 अक्टूबर, 2008 को चन्द्रमा पर भेजा गया और यह 30 अगस्त, 2009, तक सक्रिय रहा। यह यान पोलर सेटलाईट लांच वेहिकल (पी.एस.एल.वी.) के एक परिवर्तित संस्करण वाले राकेट की सहायता से सतीश धवन अंतरिक्ष केन्द्र से प्रक्षेपित किया गया। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान केंद्र (इसरो) के चार चरणों वाले 316 टन वजनी और 44.4 मीटर लंबा अंतरिक्ष यान चंद्रयान प्रथम के साथ ही 11 और उपकरण एपीएसएलवी-सी11 से प्रक्षेपित किये गये जिनमें से पाँच भारत के हैं और छह अमरीका और यूरोपीय देशों के। इसे चन्द्रमा तक पहुँचने में 5 दिन एवं चन्द्रमा की कक्षा में स्थापित करने में 15 दिनों का समय लगा। इस परियोजना में इसरो ने पहली बार 10 उपग्रह एक साथ प्रक्षेपित किये।

चंद्रयान का उद्देश्य चंद्रमा की सतह के विस्तृत नक्शे और पानी के अंश और हीलियम की तलाश करना था। चंद्रयान-प्रथम ने चंद्रमा से 100 कि.मी. ऊपर 525 कि.ग्रा. का एक उपग्रह ध्रुवीय कक्षा में स्थापित किया। यह उपग्रह अपने रिमोट सेंसिंग (दूर संवेदी) उपकरणों के जरिये चंद्रमा की ऊपरी सतह के चित्र भेजें।

भारतीय अंतरिक्षयान प्रक्षेपण के अनुक्रम में यह 27वाँ उपक्रम है। इसका कार्यकाल लगभग 2 साल का होना था, मगर नियंत्रण कक्ष से संपर्क टूटने के कारण इसे उससे पहले बंद कर दिया गया। चन्द्रयान के साथ भारत चाँद को यान भेजने वाला छठा देश बन गया था। इस उपक्रम से चन्द्रमा और मंगल ग्रह पर मानव-सहित विमान भेजने के लिये रास्ता खुला।

कटहल की वैज्ञानिक खेती

घनश्याम पाण्डेय[1] एवं जय नरायण तिवारी[2]
[1,2]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

कटहल (*अर्टोकारपस हेटेरोफिलस*) को सबसे बड़े फल एवं गरीबों के भोजन के रूप में जाना जाता है। यह मोरेसी कुल का एक पौधा है जिसमें अंजीर, शहतूत, वड़हल, पीपल, गूलर एवं बरगद के छायादार वृक्ष सम्मिलित किये जाते हैं। उपयोग की दृष्टि से कटहल मुख्यतः सब्जी एवं पके हुए फल के रूप में प्रयोग किया जाता है। कच्चे कटहल से अचार, पापड़ आदि तथा पके हुए से जूस, जैम, जैली आदि बनाये जाते हैं। कटहल का फल शाकाहारी माँस के रूप में भी काफी लोकप्रिय है। इसके अवशेष एवं पत्तियों का प्रयोग जानवर के चारे के रूप में उपयोगी होता है। इसकी उपयोगिता पूरे भारत में देखी गयी है लेकिन मुख्य रूप से असम, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड एवं उड़ीसा उत्पादन की दृष्टि से इसके अग्रणी राज्य हैं। उत्तर प्रदेश के देवरिया, गोरखपुर, इलाहाबाद, बहराइच, बस्ती एवं कुशीनगर जनपदों में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है। कटहल का फल प्रचुर मात्रा में पोषक तत्वों से भरपूर होने के कारण स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होता है। इसमें व्याप्त पोषक तत्वों में मुख्य रूप में प्रोटीन (1.97 ग्राम), वसा (0.1 ग्राम), रेशा (1.1 ग्राम), कैल्सियम (20 मि.ग्रा.), फास्फोरस (30 मि. ग्रा.), पोटैशियम (500 मि.ग्रा.), कार्बोहाइड्रेट (18-25 ग्राम) तथा विटामिन भी पाया जाता है। इसके सेवन से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है तथा साथ ही पाचन क्रिया भी मजबूत होती है। यह कैन्सर (कर्क), उच्च रक्त चाप एवं अस्थमा जैसी बीमारियों से हमारे शरीर को बचाता है। कटहल की लकड़ी में दीमक प्रतिरोधक क्षमता होती है जिससे इस पेड़ की लकड़ी से निर्मित फर्नीचर में दीमक का प्रकोप कम होने के कारण यह बाजार में काफी कीमती भी होता है। कटहल के दूध में जीवाणु प्रतिरोधक गुण पाये जाते हैं।

[1]प्रधान वैज्ञानिक एवं [2]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता

भूमि एवं जलवायुः कटहल की खेती सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है लेकिन बलुई दोमठ भूमि जिसमें जल निकास की समुचित व्यवस्था और अधिक मात्रा में कार्बनिक पदार्थ हो के साथ इसकी खेती के लिए काफी उपयुक्त होती है। कटहल उष्ण-कटिबंधीय जलवायु का पौधा है। लेकिन इसकी खेती उपोष्ण जलवायु में भी सफलतापूर्वक की जाती है।

प्रमुख प्रजातियाँः कटहल की प्रमुख प्रजातियाँ में गुलाबी, चम्पा, सिंगापुर जैक, हजारी, रूद्राक्षी, सीलोन आदि प्रमुख किस्में हैं जो देश के विभिन्न भागों में पैदा की जाती है।

प्रवर्धनः कटहल को साधारणतया बीज द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। किन्तु बीज द्वारा रोपे गये पौधे अधिक समय बाद ही फल देना शुरू करते हैं। पैतृक वृक्ष की तुलना में इनकी गुणवत्ता शत-प्रतिशत अच्छी नहीं होती है। इसलिए वानस्पतिक प्रवर्धन व्यावसायिक रूप से अधिक उपयोगी होती है। इस बीज से उगाये गये पौधे की तुलना में जल्दी फल देना शुरू कर देते हैं तथा अधिक गुणवत्ता वाले पौधे भी होते हैं। कटहल का वानस्पतिक प्रसारण मुख्य रूप से पैच वडिंग (कलिकायन) तथा वेज कलम बंधन विधि द्वारा व्यावसायिक रूप से किया जाता है। इस वानस्पतिक प्रसारण का उत्तम समय जून से अगस्त महीना होता है। कटहल का बाग लगाने के लिए उच्च गुणवत्ता वाले वानस्पतिक पौधे प्रमाणिक मान्यता प्राप्त पौधशालाओं से ही लेना चाहिए।

पौध रोपणः इसके पौधों का रोपण 12×12 मीटर की दूरी पर की जाती है। रोपण का उपर्युक्त समय जून से अगस्त का होता है। यदि सिंचाई की समुचित व्यवस्था हो तो कटहल का पौध रोपण मार्च से अप्रैल के महीने में भी किया जा सकता है। बीज द्वारा रोपित पौधे 6-8 वर्ष बाद तथा वानस्पतिक

प्रवर्धन के 3 से 5 वर्ष बाद फल देना शुरू कर देते हैं। कटहल में फूल प्रायः दिसम्बर से मार्च महीनों के बीच में आता है। कटहल में नर एवं मादा दोनों प्रकार के फूल होते हैं। नर पुष्प (96 प्रतिशत) हमेशा ऊपर की सहशाखाओं तथा मुख्य शाखाओं में पाया जाता है जबकि मादा पुष्प (3-4 प्रतिशत) केवल पेड़ की मुख्य शाखाओं पर ही पायी जाती हैं। कटहल की फलत पेड़ की मुख्य शाखा पर होती है। कीटों एवं हवा द्वारा कटहल का परागण होता है। परागण की कमी तथा अधिक मात्रा में नर पुष्प होने के कारण शुरू के समय में बने फल काफी मात्रा में जमीन पर गिर जाते हैं।

पुष्पनः सामान्यतया कटहल में नर पुष्पों की संख्या (92-96 प्रतिशत) प्रायः ऊपर की द्वितीयक एवं संबंधित सहशाखाओं पर आती है। मादा पुष्पन मुख्य तने के साथ-साथ प्राथमिक एवं द्वितीयक शाखाओं पर ज्यादा होती हैं।

फल वृद्धिः कटहल का फल अन्य फलों की तुलना में आकार एवं वजन में काफी बड़ा होता है। इसलिए इसमें खाद एवं उर्वरकों की आवश्यकता भी अधिक होती है। कटहल में 40-45 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद के साथ उर्वरकों की संस्तुत मात्रा को प्रति वर्ष देना आवश्यक होता है। उर्वरकों की संस्तुति मात्रा पेड़ की आयु पर भी निर्भर करता है। एक से तीन वर्ष के वृक्षों में 200 ग्राम नाइट्रोजन, 120 ग्राम फास्फोरस एवं 60 ग्राम पोटैश की संस्तुति की जाती है। इसी प्रकार 4 से 7 वर्ष आयु वाले पौधों में 400 ग्राम नाइट्रोजन, 240 ग्राम फास्फोरस तथा 120 ग्राम पोटैश की आवश्यकता होती है और 07 वर्ष के ऊपर वाले वृक्षों को 600:300:240 ग्राम क्रमशः नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटैश की आवश्यकता होती है।

1. खाद तथा उर्वरक

खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करते समय बगीचे में समुचित नमी होनी चाहिए अन्यथा उर्वरकों के प्रयोग के उपरान्त सिंचाई करना आवश्यक होता है।

2. सिंचाई

कटहल की खेती के लिए सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। परन्तु नवस्थापित बगीचों में गर्मी के दिनों में नमी बनाये रखने के लिए समय-समय पर शुरू के 3-4 वर्ष तक सिंचाई करते रहना चाहिए जिससे वृक्षों का समुचित विकास हो सके। इसके अलावा खाद एवं उर्वरकों के प्रयोग के साथ सिंचाई करना आवश्यक होता है।

3. फलों की तुड़ाई

कटहल के फल की तुड़ाई उपयोग के ऊपर निर्भर करती है। सब्जियों के उपयोग हेतु अपरिपक्व एवं अर्द्धपरिपक्व अवस्था में मध्यम आकार के गहरे हरे रंग के फलों की तुड़ाई की जाती है तथा फलों के पूर्ण परिपक्वता का निर्धारण करने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखना चाहिए। सामान्यतया परागण के पश्चात फलों का विकास फरवरी से शुरू होकर जून माह तक होता है और 5-6 महीने के पश्चात यह पूर्ण हो जाता है। फलों की परिपक्वता तुड़ाई के लिये फूल आने के 90-110 दिनों के बीच उपर्युक्त मानी जाती है। लेकिन देर से पकने वाली किस्में उत्तर भारत में पुष्पन के बाद अगस्त तक तैयार होती है।

परिपक्वता निर्धारण के लक्षणः सामान्य परिस्थिति में पकने पर कटहल के फल हल्के पीले रंग लिए हुए होते हैं तथा उनसे मिठासयुक्त सुगंध आती है। उसके ऊपर लगे हुए काँटे हल्के से चपटे होते हुए देखे जा सकते जो कटहल की पूर्ण परिपक्वता को दर्शाते हैं। इस प्रकार से कटहल के परिपक्व फलों को डंठल के तुड़ाई करने पर 5-7 दिन के अन्दर खाने योग्य हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त फलों के ऊपर थपथपाने से पूर्ण रूप से भी पहचाना जा सकता है।

ऊपजः कटहल की पैदावार पेड़, मिट्टी, प्रजाति, पेड़ की आयु एवं फलों के आकार के ऊपर काफी निर्भर करती है। पूर्ण रूप से विकसित औसत वृक्ष में औसत आकार के 20 से 80 फल प्रति पेड़ प्रति वर्ष अथवा 30-40 टन फल प्रति हेक्टेयर प्राप्त किये जाते हैं।

4. रोग एवं कीट

रोग

मृदु गलन रोग: यह फफूँदी से लगने वाला गंभीर रोग है जिसकी शुरूआत पुष्प की अवस्था में ही होती है। नये बने फल काले पड़कर जमीन पर गिर जाते हैं। इस रोग के कारण उपज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इस रोग की रोकथाम के लिए डाइथेन एम.-45 (0.02 प्रतिशत) तथा बेवस्टीन (0.01 प्रतिशत) फफूँदनाशक को 15 दिन के अन्तराल पर फल की वृद्धि के समय छिड़काव करें।

कीट

तना वेधक कीट: इस कीट का प्रकोप असम, उत्तर प्रदेश और बिहार राज्यों के फल में पाया जाता है। ये कीट कटहल की कोमल शाखाओं और कलिकाओं को हानि पहुँचाते हैं। इस कीट की रोकथाम के लिए कार्वेरियल नामक कीटनाशक को 4 ग्राम प्रति लीटर की दर से फूल आने से पूर्व छिड़काव करें।

चकोतरा-एक अनूठा नीबू

पूजा बोहरा[1], वामन अजित अरूण[2], करंजालकर गौरीश रंगनाथ[3] एवं प्रमोद कुमार सिंह[4]

[1]उद्यान विभाग, कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, जी.के.वी.के.-बैंगलुरू

[2]उद्यान महाविद्यालय, जी.के.वी.के. परिसर, उद्यान विश्वविद्यालय (बागलकोट)-बैंगलुरू

[3]सीएसआईआर-राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

[4]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

परिचय

चकोतरा वैज्ञानिक दृष्टि से ग्रेपफ्रुट का पूर्वज माना जाता है। यह एक नीबू वर्गीय फल है जिसे महानीबू, पुमेलो, सदाफल तथा शङ्काक आदि नामों से भी जाना जाता है। यह भारत में एक अल्प विकसित प्रजाति के रूप में पाया जाता है। इसका व्यापारिक उत्पादन बहुत छोटे स्तर पर होता है। यह मुख्यतः मलेशिया एवं थाइलेंड का देशज फल है। किन्तु वर्तमान समय में इसका उत्पादन विस्तार चीन, दक्षिण थाइलैण्ड, दक्षिण जापान, दक्षिण भारत, इंडोनेशिया एवं बांग्लादेश आदि राष्ट्रों में भी हो रहा है। इसके वृक्ष जंगली रूप में दक्षिण भारत के कर्नाटक राज्य में पाये जाते है। नम एवं गर्म जलवायु वाले क्षेत्रों में इसके व्यापारिक उत्पादन की असीम सम्भावनायें है। इस फल का वानस्पतिक नाम *सिट्रस ग्रैंडिस* या *सिट्रस मैक्जिमा* और यह रूटेसी कुल का सबसे बड़ा फल है।

वानस्पतिक विवरण

इसके वृक्षों की ऊँचाई 15-20 फुट तक होती है। इसकी पत्तियाँ गहरे हरे रंग की बड़ी एवं चौड़ी पंख नुमा डंठलयुक्त होती हैं। फूल अंडाकार या नाशपाती नुमा होते हैं। ये अपने बड़े आकार, मोटे छिलके एवं ठोस गूदे की वजह से आसानी से पहचाना जा सकता है। इसके गूदे सफेद या गुलाबी रंग के होते हैं।

[1, 2,3 एवं 4]अनुसंधान सहायक

देवनहल्ली पुमेलो गुलाबी गूदे वाला इसका इकोटाइप होता है जिसे भारत सरकार द्वारा भौगोलिक संकेतक का दर्जा भी दिया गया है। यह अपने अद्वितीय स्वाद के कारण कर्नाटक के किसानों के बीच अत्यन्त ही लोकप्रिय है। इस इकोटाइप की कुछ भौतिक-रासायनिक विशेषताओं को सारणी 1 और 2 में प्रस्तुत किया गया है। सामान्यतः यह फल पीले रंग का तथा काटने पर गुलाबी रंग के गूदे वाला होता है। इसके फल का औसत वजन 1.140 कि.ग्रा. तथा व्यास 13.4 सें.मी. होता है। इसके फल में छिलका 60 प्रतिशत फल वजन के अनुसार एवं 27 प्रतिशत तक रस होता है। इसके रस की श्यानता 4000 एम.पी.ए.एस., कुल घुलनशील ठोस 10.8° ब्रिक्स, अम्लता 0.95 प्रतिशत, पी-एच 3.60, एस्कार्बिक एसिड 36 मि.ग्रा. प्रति 100 मि.ली., अपचयी शर्करा (रिड्युसिंग शर्करा) 4.44 प्रतिशत, अनपचयी शर्करा (नान-रिड्युसिंग शर्करा) 2.90 प्रतिशत, कुल शर्करा 7.3 प्रतिशत तथा ब्रिक्स अम्ल का अनुपात 11:37 होता है।

सारणी 1: देवनहल्ली पुमेलो फल का भौतिक संरचना

Ø-l-	Hkkfrd laxBu	vkdkj@ek=k
1	आकार	अंडाकार से गोल
2	रंग	नीबू जैसा पीला (छिलका), गुलाबी (गूदा)
3	फल का वजन (कि.ग्रा.)	1.140
4	फल का व्यास (से.मी.)	13.4
5	छिलका (प्रतिशत)	60
6	रस (प्रतिशत)	27
7	श्यानता (एम.पी.ए.एस.)	4000

सारणी 2: देवनहल्ली पुमेलो फल का रासायनिक संगठन

Ø-l-	vo;o	ek=k
1	कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.) (°ब्रिक्स)	10.8
2	अम्लता (प्रतिशत साइट्रिक अम्ल)	0.95
3	पीएच (pH) मान	3.60
4	एस्कार्बिक एसिड (मि.ग्रा./100 मि.ली.)	36
5	अपचयी शर्करा (रिड्युसिंग शर्करा) (प्रतिशत)	4.44
6	अनपचयी शर्करा (नान-रिड्युसिंग शर्करा) (प्रतिशत)	2.90
7	कुल शर्करा (प्रतिशत)	7.34
8	ब्रिक्स एवं अम्ल का अनुपात	11.37

औषधीय महत्व

नीबू वर्गीय प्रजाति होने के कारण चकोतरा प्रभाविक रूप से विटामिन-सी का प्राकृतिक श्रोत होता है। इसके फाँकों को छीलकर या जूस बना कर उपयोग किया जाता है। इसका स्वाद खट्टा-मीठा होता है। दक्षिण पूर्व एशिया में इसके फूलों, फलों और बीजों का प्रयोग औषधि के रूप में किया जाता है। वियतनाम में इसके सुगंधित फूलों को इत्र के निर्माण में भी उपयोग किया जाता है। इसके बीज दमा एवं सास रोगों के उपचार के लिए उपयुक्त है। इसकी पत्तियों से भी एक प्रकार का सुगंधित तेल निकाला जाता है इसकी छाल भी कीटाणुनाशक की तरह प्रयुक्त की जाती है। यह भूख बढ़ाता है, आमाशय

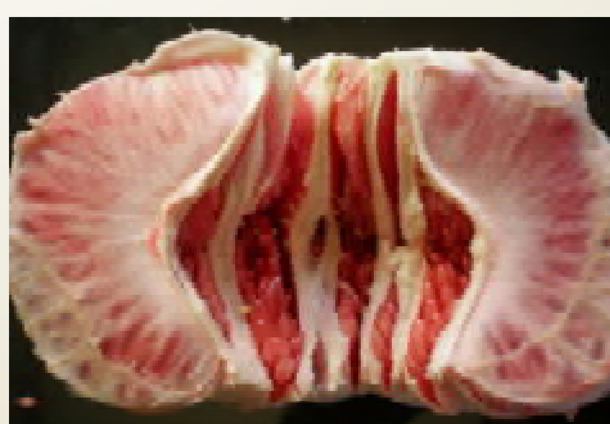

को बलवान बनाता है। इसको खाने से व्यक्ति स्वयं को ऊर्जावान महसूस करता है। यह मधुमेह को नियंत्रित करने में मदद करता है। इसमें नारिंगेनिन नामक ऐंटीऑक्सीडेंट पाया जाता है। यह लीवर के लिए लाभकारी है। यह ट्यूमर तथा कैंसर जैसी बीमारियों के खतरे को कम करता है। इसका छिलका मूर्छा, बेहोशी एवं उन्माद (पागलपन) को मिटाता है तथा चेहरे के रंग को भी साफ करता है। इसके फल पोषक एवं तृषा शामक होते हैं तथा पत्ते अपस्मार तथा कंपवात में दिये जाते हैं।

चीनी समुदायों में इसके फलों को मंदिर का फल कहा जाता है और धार्मिक तथा सांस्कृतिक उत्सवों में इसका आदान-प्रदान शुभ माना जाता है।

निष्कर्ष

चकोतरा एक ऐसा फल है जो न केवल पोषक तत्वों से भरपूर है बल्कि अपने औषधीय गुणों के कारण जनमानस में लोकप्रिय है। यह फल भारत में बहुत कम क्षेत्रफल पर, कम लागत में इसकी बागवानी की जाती है। अतः इस विशिष्ट वृक्ष को बड़ी लागत में लगाने हेतु प्रयास की जरूरत है। विशेष रूप से उत्तर भारत में जहाँ पर इसकी बागवानी बहुत अच्छी हो सकती है।

मैं नीर भरी दुख की बदली!

स्पंदन में चिर निस्पंद बसा,
क्रंदन में आहत विश्व हँसा,
नयनों में दीपक से जलते,
पलकों में निर्झणी मचली!

मेरा पग पग संगीत भरा,
श्वासों में स्वप्न पराग झरा,
नभ के नव रंग बुनते दुकूल,
छाया में मलय बयार पली!

मैं क्षितिज भृकुटि पर घिर धूमिल,
चिंता का भार बनी अविरल,
रज-कण पर जल-कण हो बरसी,
नव जीवन-अंकुर बन निकली!

पथ न मलिन करता आना,
पद चिह्न न दे जाता जाना,
सुधि मेरे आगम की जग में,
सुख की सिहरन हो अंत खिली!

विस्तृत नभ का कोई कोना,
मेरा न कभी अपना होना,
परिचय इतना इतिहास यही,
उमड़ी कल थी मिट आज चली!

- महादेवी वर्मा

ब्रोकली का उपोष्ण जलवायु में उत्पादन

वी.के. सिंह[1], कामिनी सिंह[2], मनोज कुमार सोनी[3], अनुराग सिंह[4] एवं पूजा सक्सेना[5]
[1,2,3,4,5]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

भारत में लगभग 40-50 तरह की भिन्न-भिन्न प्रकार की सब्जियों की खेती बहुत पहले से की जाती रही हैं। किन्तु अभी भी कुछ ऐसी सब्जियाँ हैं जिनसे किसान बहुत कम परिचित हैं। ये आर्थिक और पौष्टिकता की दृष्टि से बहुत ही अधिक महत्व रखती हैं। ऐसी ही एक सब्जी है ब्रोकली (गोभी-हरे रंग की)। गोभी वर्ग की यह महत्वपूर्ण सब्जी कभी-कभी बैंगनी या सफेद रंग की भी होती है। इसका खाने योग्य हरे रंग का शीर्ष के अलावा मांसल पुष्पदंड भी सलाद, सूप के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। हमारे देश में इसकी खेती विगत कुछ वर्षों से शुरू की गयी है। इस सब्जी की मांग बड़े-बड़े होटलों एवं पर्यटक स्थलों पर बहुत तेजी से बढ़ी है।

पोषक मूल्य

ब्रोकली में फूलगोभी, पत्ता गोभी, गांठ गोभी की अपेक्षा अधिक मात्रा में प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज पदार्थ होते हैं। इसके अलावा थियोमिन, राइबोफलेविन, नियासिन आदि भी पर्याप्त मात्रा में मौजूद होते हैं। इसके अलावा इस सब्जी का और भी महत्व है क्योंकि अनुसंधान से पता चला है कि ब्रोकली में मौजूद आईसोथियोसिनेट्रस श्रेणी के रसायन फाइटोकैमिकल्स के रूप में पाये जाते हैं जो कैंसर रोगियों के लिए बचाव करते हैं तथा स्वस्थ्य लागों में कैंसर होने की संभावना बहुत कम हो जाती है। इसके खाने से रक्त में सीरम कोलेस्ट्राल का स्तर घटता है जो हृदय रोगियों के लिए लाभदायक है। ब्रोकली के सूखे हुए अंकुर मूत्राशय में ट्यूमर के खतरे को भी कम करते हैं। ब्रोकली में प्रचुर मात्रा में पौष्टिक तत्व (प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग) दूसरी गोभियों से तुलना में अधिक पाये जाते हैं।

जलवायु

ब्रोकली शीतोष्ण जलवायु की फसल है परन्तु इसे अन्य हिस्सों/प्रदेशों/क्षेत्रों में भी आसानी से पैदा किया जा सकता है। अधिकांश भागों में इसकी खेती रबी मौसम में की जाती है जबकि ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी खेती गर्मी के मौसम में ही की जाती है। इसकी पैदावार अच्छी होने के लिए 20-25 डिग्री सेल्यिस एवं शीर्ष के विकास के लिए 12-18 डिग्री सेल्यिस तापमान की आवश्यकता होती है।

क्यारियों को रोगमुक्त करना

4 प्रतिशत फॉरमल्डीहाइड से (4 ली. प्रति वर्ग मी.) क्यारियों को गीला किया जाता है। सभी क्यारियों को चार दिनों तक काली पॉली इथीलिन फिल्म की चादरों से ढ़क दिया जाता है ताकि हानिकारक रोगाणुओं का नाश हो जाये। चार दिनों के बाद पॉलीथीन की चादर हटा देते हैं जिससे फॉरमल्डीहाइड का धुआँ पूरी तरह से निकल जाये।

ब्रोकली एवं अन्य गोभी प्रजाति की तुलनात्मक पोषक मूल्य

सब्जियाँ	मि.ली. ग्राम विटामिन सी	प्रोटीन (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कैलोरीज़	कैल्सियम (ग्राम)	ए (आई.यू.) विटामिन ए
ब्रोकली	137	3.3	5.5	0.2	3.7	1.29	9000
फूलगोभी	75	2.4	4.9	0.2	3.1	0.35	60
पत्तागोभी	100	1.4	5.3	0.2	2.9	0.75	400
गाँठगोभी	56	2.1	6.7	0.1	3.6	1.95	20

[1]प्रधान वैज्ञानिक, [2,5]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता एवं [3,4]अनुसंधान सहायक

भूमि तथा खेती की तैयारी

सबसे पहले मिट्टी की खुदाई के उपरान्त ढेलों को तोड़कर जमीन को समतल एवं मुलायम बनाया जाता है। नीम की खली 100 कि.ग्रा. और ट्राइकोडर्मा 01 कि.ग्रा. का मिश्रण (200 ग्रा. प्रति वर्ग मी.) डालकर अच्छी तरह मिलाते हैं। पौध लगाने के पहले प्रति वर्ग मीटर नाइट्रोजन 05 ग्राम, फास्फोरस 05 ग्राम एवं पोटैश 05 ग्राम की संस्तुति मात्रा डाली जाती है। 100 सें.मी. चौड़ी और 15 सें.मी. ऊँची क्यारियाँ बनायी जाती हैं तथा कतारों के मध्य 50 सें.मी. का फासला छोड़ दिया जाता है। सड़ी हुई गोबर की खाद 20 कि. ग्रा. प्रति वर्ग मी. में डालकर मिट्टी में अच्छी तरह मिलाया जाता है।

किस्में: ब्रोकली की सफल खेती के लिए बुवाई का समय एवं उगाए जाने वाले क्षेत्र के अनुसार उन्नत किस्मों का चयन करते हैं। मुख्यत: ब्रोकली की तीन किस्में होती हैं - हरी, बैंगनी और सफेद। हरे रंग की गढ़ी हुई शीर्ष वाली किस्मों को अधिक पसंद करते हैं। परिपक्वता के आधार पर इन किस्मों को तीन भागों में विभाजित किया जाता है।

1. **अगेती किस्में:** ये किस्में रोपाई के पश्चात 40-50 दिनों में तैयार हो जाती है। ये मध्यम ठंड में ही पकती हैं। इनमें मुख्य हैं: ऐश्वर्या, डीसिम्को, ग्रीनबड और स्पार्टन अली।
2. **मध्यावधि किस्में:** ये किस्में लगभग 100 दिन में तैयार हो जाती हैं - सकाटा, अर्या, ग्रीन स्प्राउटिंग, मीडियम अच्छी मध्यावधि किस्में हैं।
3. **पिछेती किस्में:** ये किस्में लगभग 120 दिन में तैयार हो जाती हैं। ग्रीन स्प्राउटिंग के अलावा भारत में कुछ हरी ब्रोकली भी विकसित की गयी है। इनमें मुख्य है पूसा ब्रोकली केटी सेलेक्शन-1 जो 90-105 दिन में तैयार हो जाती है।

संकर: निजी बीज कंपनियों द्वारा ब्रोकली की अच्छी संकर किस्में विकसित की गयी हैं।

अगेती संकर किस्में: प्रीमियम क्रॉप, लेसर, कलियर।

मध्यावधि संकर किस्में: लौर सायर, कुइजर, एक्स कैलिबर।

पिछेती संकर किस्में: स्टिफ कायक, ग्रीन सर्फ आदि।

बुवाई: मैदानी भागों में ब्रोकली के बुवाई का समय मध्य सितंबर से नवंबर के प्रथम सप्ताह एवं पहाड़ी क्षेत्रों में सितंबर-अक्टूबर होता है। मध्यावधि किस्मों के बीच की बुवाई सितंबर-अक्टूबर मास में पौधशाला में करनी चाहिए। पिछेती किस्मों के बीज की बुवाई का उचित समय अक्टूबर के अन्त में मध्य नवंबर तक है। अधिक ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में बीज की बुवाई मार्च-अप्रैल में करते हैं।

नर्सरी तैयार करना: 98 छिद्रों वाली प्रो-ट्रे (प्लास्टिक की ट्रे) का प्रयोग पौध तैयार करने के लिए किया जा सकता है। इस प्रो-ट्रे का आकार सामान्यत: 54 से.मी. लम्बा तथा 27 सें. मी. चौड़ा होता है।

सड़ी हुई गोबर की खाद एवं निर्जीवीकृत मिश्रण को रोगमुक्त पौध उगाने के लिए किया जाना आवश्यक होता है। परंपरागत मिश्रण, मिट्टी, गोबर की खाद, बालू के स्थान पर कोको पीट, वरमीकुलाइट, बालू या परलाइट मिश्रण का प्रयोग किया जा सकता है। यह रोगमुक्त होने के साथ-साथ अत्यन्त भुरभुरा होता है। जिससे जड़ों का विकास अच्छे प्रकार होता है। सामान्यत: 100 कि.ग्रा. कोकोपीट से लगभग 100 प्रो-ट्रे भरा जा सकता है। प्रो-ट्रे के एक छिद्र में एक बीज डालकर कोकोपीट से बीज को ढ़क देना चाहिये। इसके उपरान्त हजारे की सहायता से हल्की सिंचाई कर इसे प्लास्टिक फिल्म से ढ़क देना चाहिये जिससे बीज का अंकुरण आसानी से हो सके। अंकुरण सामान्यत: 6-8 दिनों में हो जाता है। अंकुरण के उपरान्त पॉलीथीन फिल्म को हटा देना चाहिये। पौध 4 से 6 सप्ताह मे रोपण हेतु तैयार हो जाती है।

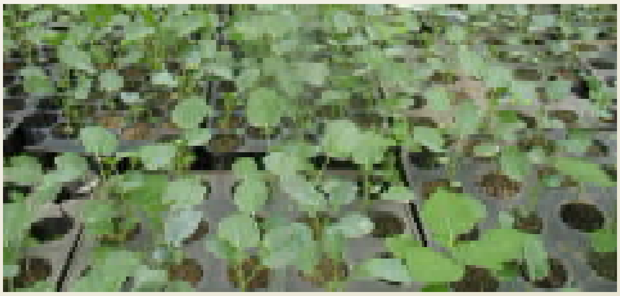

ब्रोकली के सीड लिंग तैयार करने की प्रक्रिया

ब्रोकली की प्रबंधित खेती

संकर नस्ल के पौधों को प्लास्टिक की ट्रे में तैयार कर बाद में रोपण किया जाता है। पौधों को रोगों एवं कीटों से बचाने के लिये रोपण के एक दिन पहले एक लीटर पानी में 0.3 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड का घोल बनाकर छिड़काव किया जाता है।

रोपाईः उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में पौधों की रोपाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक तथा पहाड़ी क्षेत्रों में मई में की जाती है। नर्सरी में जब पौधे 10-12 सें.मी. या 4-5 सप्ताह के हो जाते हैं तो उनकी खेत में रोपाई कर देनी चाहिए। रोपने से पहले 1 लीटर पानी में 1 ग्राम फफूंदी नाशक (कार्बेन्डाजिम) के मिश्रण से जड़ों को उपचारित करना चाहिए।

पौधों को पॉलइथीलीन के छिद्रों के मध्य में लगाया जाता है जिससे पौध कहीं भी प्लास्टिक की चादर से नहीं छुए। रोपण के तत्काल बाद हजारे से हल्की सिंचाई की जाती है। पौध स्थापित होने तक प्रतिदिन इसी तरह हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

इसकी रोपाई पंक्तियों में की जाती है। इसके लिए किस्मों के अनुसार पंक्ति की दूरी 45-60 सें.मी. तक रखते हैं। यह ध्यान रहे कि पौध 3-4 सें.मी. से अधिक गहरी नहीं लगानी चाहिए।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधनः खाद एवं उर्वरकों का उपयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। सामान्यतः 150-200 क्विंटल गोबर की खाद, 120-125 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60-80 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट एवं 25-50 कि.ग्रा. पोटैश प्रति हेक्टेयर अनुशंसित है। गोबर की खाद, सुपर फास्फेट एवं पोटैश की पूरी मात्रा एवं नाइट्रोजन की शेष मात्रा को दो बराबर निर्माण के पूर्व टाप ड्रेसिंग विधि से दें। टॉप ड्रेसिंग करने के बाद सिंचाई अवश्य करें। इसके अलावा इस फसल में कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों की भी आवश्यकता है जैसे बोरॉन मोलिब्डेनम इन सूक्ष्म तत्वों की कमी दूर करने के लिए रोपाई के पहले खेत की तैयारी करते समय 10-15 कि.ग्रा. बोरेक्स तथा 500 ग्राम अमोनियम मोलिब्डेट का प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करते हैं।

मल्चिंग

तैयार क्यारियों को 100 गेज (25 माइक्रोन) की काली पोली इथीलीन फिल्म से ढ़क देना चाहिए और दोनों तरफ किनारों को मिट्टी से दबा देना चाहिए।

सिंचाई जल प्रबंधन

पहली हल्की सिंचाई रोपाई के तुरन्त बाद तथा पौध की रोपाई के 6-7 दिन बाद ही करें। इसके बाद फिर हल्की सिंचाई कर दें। इस तरह से 5-6 सिंचाई की आवश्यकता होती है। खेत में पानी अधिक समय तक रुका नहीं रहना चाहिए। ध्यान देने योग्य बात है कि जब फसल की प्रारंभिक वृद्धि अवस्था तथा शीर्ष (हेड) विकास अवस्था, क्रांतिक अवस्था कहलाती है, इस समय पानी की कमी नहीं होनी चाहिये।

खर-पतवार प्रबंध

खर-पतवार नियंत्रण के लिए बासलिन 2.0 ली. प्रति हेक्टेयर की दर से रोपाई के पहले खेत में छिड़काव कर मिट्टी में मिला दें। इसके अलावा दो-तीन निराई-गुड़ाई 15 दिन के अंतर पर करते रहना चाहिए।

कटाई

अगेती किस्मों की फसल दिसंबर में कटाई योग्य हो जाती है। मध्यावधि वाली प्रजातियाँ जनवरी-फरवरी में तथा

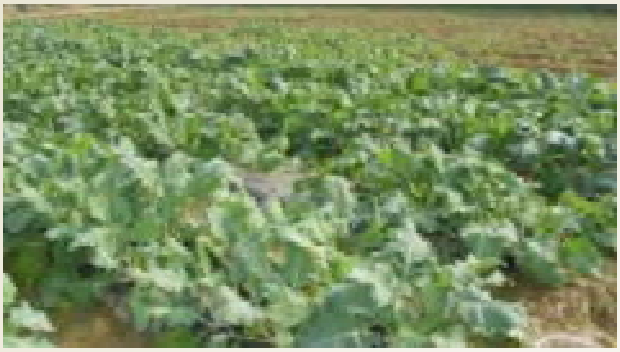

ब्रोकली की खेती

पिछेती वाली प्रजातियाँ फरवरी के बाद कटाई लायक हो जाती है। अर्थात् रोपाई के 60-120 दिनों के बाद हरा खाने योग्य भाग पूर्ण विकसित शीर्ष गढ़े हुए हो, पूरी तरह बढ़ जाएं तथा उनकी कलियाँ खिलनी आरंभ न करें तथा फसल की कटाई करनी चाहिए। यह ध्यान रखें कि शीर्ष की कटाई के लिए 12-15 सें.मी. लम्बे डंठल उसके काटना अति आवश्यक है।

ब्रोकली का उत्पादन

उपज

यदि ब्रोकली की खेती वैज्ञानिक विधि से करते हैं तो साधारणतः 100-150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

विवेकानन्द

विवेकानन्द का जन्म कलकत्ता के एक कुलीन बंगाली परिवार में 12 जनवरी, 1863 को हुआ था। उनका वास्तविक नाम नरेन्द्र नाथ दत्त था। बचपन से ही विवेकानंद का आध्यात्म की ओर झुकाव था। वे अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस से काफी प्रभावित थें। रामकृष्ण परमहंस ने उन्हें शिक्षा दी थी कि सारे जीव स्वयं परमात्मा का ही एक अवतार हैं। इसलिए मानव जाति की सेवा द्वारा परमात्मा की भी सेवा की जा सकती है। रामकृष्ण की मृत्यु के बाद विवेकानंद ने बड़े पैमाने पर भारतीय उपमहाद्वीप का दौरा किया और ब्रिटिश भारत में मौजूदा स्थितियों का पहले हाथ का ज्ञान हासिल किया। बाद में विश्व धर्म संसद 1893 में भारत का प्रतिनिधित्व करने, संयुक्त राज्य अमेरिका गये। विवेकानंद के संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड और यूरोप में हिंदू दर्शन के सिद्धांतों का प्रसार किया। सैकड़ों सार्वजनिक और निजी व्याख्यानों का आयोजन किया।

वे दर्शन, धर्म, इतिहास, सामाजिक विज्ञान, कला और साहित्य सहित विषयों के एक पाठक थे। इनकी वेद, उपनिषद, भगवद् गीता, रामायण, महाभारत और पुराणों के अतिरिक्त अनेक हिन्दू शास्त्रों में गहन रूचि थी। नरेन्द्र नाथ दत्त ने पश्चिमी तर्क, पश्चिमी दर्शन और यूरोपीय इतिहास का अध्ययन जनरल असेंबली इंस्टिट्यूशन में किया।

विवेकानन्द वेदान्त के विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उन्होंने अमेरिका स्थित शिकागो में सन 1893 में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। भारत का आध्यात्मिकता से परिपूर्ण वेदान्त दर्शन अमेरिका और यूरोप के हर एक देश में स्वामी विवेकानन्द की वक्तृता के कारण ही पहुँचा। उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की थी जो आज भी अपना काम कर रहा है। भारत में, विवेकानंद को एक देशभक्त संत के रूप में माना जाता है और इनके जन्मदिन को राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाया जाता है। दिनांक 4 जुलाई, 1902 को विवेकानन्द का देहावसान हो गया।

चेस्टनट : एक बार लगायें, जीवनभर खायें

अजय कुमार त्रिवेदी[1], सुरेश कुमार वर्मा[2] एवं घनश्याम पाण्डेय[3]

[1,2]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केन्द्र भवली, जिला नैनीताल

[3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

चेस्टनट कैस्टेनिया कुल का एक पतझड़ी पौधा है जो फेगेसी वंश के अंतर्गत आता है। इसकी यूरोपीय प्रजाति *केस्टेनिया स्टाइवा* (स्टीव चेस्टनट) एशिया में अनेक पहाड़ी एवं ऊष्णकटिबंधीय प्रदेशों में सफलतापूर्वक उगायी जा रही है जो अच्छा उत्पादन भी दे रही है। इसके अलावा *केस्टेनिया क्रिनाटा* (जैपनीज चेस्टनट), *केस्टेनिया मोलिसिमा* (चाइनीज चेस्टनट) तथा *केस्टेनिया डेन्टाटा* (अमेरिकन चेस्टनट) चेस्टनट की कुछ अन्य प्रमुख प्रजातियाँ हैं। इसके पौधों की ऊँचाई अलग-अलग प्रजातियों में अलग-अलग होती है। उदाहरणार्थ *कैस्टेनिया डेन्टाटा* की ऊँचाई 60 मी., *केस्टेनिया क्रिनाटा* की 10 मी., *केस्टेनिया मोलिसिमा* की 15 मी. तथा *केस्टेनिया स्टाईवा* की 30 मी. तक होती है। चेस्टनट का पौधा उभयलिंगी होता है। इसमें नर एवं मादा कलियाँ एक साथ होती हैं जो बसन्त ऋतु के प्रारम्भ में फूटती हैं। इस ऋतु के अंत तक यह फूलों में परिवर्तित हो जाती है। अंततः पतझड़ में यही फूल फलों में परिवर्तित हो जाते हैं। इसमें परागण क्रिया प्रमुखतः हवा एवं कीटों द्वारा होती है। बीजों को रोपने का सही समय शीत ऋतु के अंत या बसन्त ऋतु के प्रारम्भ में होता है। इसके बीजों को बाहरी वातावरण में लगाने से पूर्व ग्रीन हाउस में 2-3 वर्ष तक रखकर अनुकूल परिस्थितयों में उगाना लाभदायक होता है। गर्मी या पतझड़ में इन पौधों को उपयुक्त स्थान पर रोप देना चाहिए। नये रोपित पौधों को चूहों और गिलहरियों से नुकसान हो सकता है। अतः पौधे लगाने से पहले बचाव का उचित प्रबंधन कर लेना चाहिए। कलम बंधन द्वारा बनाये गये पौधें पाँचवें वर्ष से फल देना प्रारम्भ कर देते हैं।

इसकी अच्छी उत्पादकता के लिए उचित जल निकास एवं पर्याप्त नमी वाली मिट्टी का होना आवश्यक है। चेस्टनट अम्लीय भूमि में उगने में सक्षम होता है। इसकी अच्छी उत्पादकता के लिए मिट्टी का पी.एच. मान 4.5 से 6.5 तक होना चाहिए। क्षारीय मृदा में देवदार (ओक) के रूटस्टॉक में ग्राफ्ट कर चेस्टनट का उत्पादन किया जा सकता है।

चेस्टनट के कलमबंध पौधों के बीच की दूरी 5 से 8 मी. तक होनी चाहिए जिससे सभी पौधों को पर्याप्त सूर्य का प्रकाश मिल सके। नजदीक रोपण करने से काट-छाँट की अधिक आवश्यकता होती है। अच्छी उत्पादकता हेतु 800 मि.मी. औसत वार्षिक वर्षा होना आदर्श माना जाता है। इसके अलावा समय-समय पर हल्की वर्षा होते रहने से पौधों का विकास एवं उत्पादन अच्छा होता है। यदि वर्षा की मात्रा 700 मि.मी. से कम हो तो ड्रिप विधि से सिंचाई की जा सकती है। वर्षा के अलावा नवजात पौधों को ग्रीष्म ऋतु और पतझड़ के प्रारंभ में पानी देते रहना चाहिए जिससे मिट्टी में नमी कायम रहे। एक बार पौधा स्थापित हो जाने पर चेस्टनट का पौधा सूखे की स्थिति को सहन करने में समर्थ होता है।

पर्वतीय क्षेत्रों के लिए चेस्टनट एक लाभकारी फसल है। उत्तम उत्पादक किस्मों द्वारा प्रति वर्ष 400-800 किलो प्रति

फलत में चेस्टनट का पौधा

[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक, [2, 3]प्रधान वैज्ञानिक

एकड़ उत्पादन हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों जैसे उत्तराखण्ड, हिमाचल, जम्मू कश्मीर की स्थानीय बाजारों में इसे 100-200 रुपये प्रति किलो की दर से आसानी से बेचा जा सकता है। लगभग 10-12 वर्ष में पौधा पूर्ण रूप से उत्पादन देने लगता है।

चेस्टनट के ताजे फलों को लगभग 12 सप्ताह या अधिक समय तक कमरे के सामान्य तापमान पर सुरक्षित एवं खाने योग्य रखा जा सकता है। भंडारण करने से पहले अच्छी तरह सुखाकर फलों की भंडारण अवधि को बढ़ाया जा सकता है। चेस्टनट को 10 प्रतिशत नमी तथा 4-5 सें.ग्रे. तापमान पर एक वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

चेस्टनट को नुकसान पहुँचाने वाले प्रमुख कीट एवं बीमारियाँ

कीट

- **चेस्टनट वीविलः** यह चेस्टनट में पाया जाने वाला प्रमुख कीट है जो इसके फल को खराब करता है। यह कीट फलों को खाकर नुकसान करता है। इसलिए यह जरूरी है पकते ही चेस्टनट के फल को तोड़ लिया जाये। इससे बचाव के लिए मिट्टी को बदल कर तथा रसायनों का भी छिड़काव करना चाहिए।
- **रेबीट और वालेबीसः** यह कीट नये वृक्षों को नुकसान पहुँचाते हैं। इससे बचाव के लिए वृक्षों के चारों ओर बाड़ लगानी चाहिए। इसके अलावा अन्य जानवरों से बचाव के लिए भी बाड़ का प्रयोग किया जा सकता है जिससे कि गिरे हुए फलों को बचाया जा सके।

पौधे पर लगे हुए पके चेस्टनट के फल

- **एकोर्न मॉथः** यह चेस्टनट वीविल की भाँति ही फलों को नुकसान पहुँचाता है। इससे बचाव हेतु कीटनाशक का स्प्रे करना चाहिए। समय पर यदि बचाव नहीं किया जाये तो यह कीट और भी घातक हो सकता है।
- **पालीफेमस मॉथः** यह कीट टहनियों और पत्तियों को नुकसान पहुँचाता है। इससे बचाव के लिए समय-समय पर कीटनाशक का प्रयोग करना आवश्यक है।
- **लीफ मॉथः** यह पत्तियों को अन्दर-ही-अन्दर खाकर उन पर सफेद धब्बे बनाता है। इससे बचने के लिए समय-समय पर कीटनाशक का प्रयोग करना जरूरी है।
- **बार्क साइनटः** यह चेस्टनट के फल को खाकर नुकसान पहुँचाता है। यह कीट बहुत जल्दी अपनी संख्या को बढ़ा लेने में सक्षम है। अतः इसके द्वारा कम समय में ज्यादा नुकसान होने की संभावना रहती है। धीरे-धीरे पूरा वृक्ष इस बीमारी की चपेट में आ आता है। इससे बचाव के लिए प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए।

बीमारियाँ

- **चेस्टनट ब्लाइटः** चेस्टनट में होने वाला यह प्रमुख रोग है। इस कवक का नाम *क्राफोनेट्रिया पैरासिटिका* है। *केस्टेनिया डेन्टाटा* (अमेरिकन चेस्टनट) को इस बीमारी द्वारा सर्वाधिक हानि होती है। अन्य प्रजातियाँ अभी तक इस बीमारी के संपर्क में नहीं आयी हैं। अतः इस रोग से मुक्त हैं। अनेक अन्य संकर किस्मों को अमेरिकन चेस्टनट और अन्य रोग मुक्त प्रजातियों के प्रवर्धन द्वारा उत्पन्न किया जा रहा है ताकि रोग मुक्त पौधे तैयार किये जा सकें।
- **ओक मिल्ड्यूः** यह बीमारी स्फीरोथीका नामक कवक से

पौधे से तोड़े हुए ताजे चेस्टनट के फल

कारण होती है। यह बीमारी मुखतः चेस्टनट के छोटे पेड़ों में ही होती है। चेस्टनट के पेड़ ठंडे वातावरण के प्रति संवेदनशील होते हैं। यह कवक की पत्तियों के ऊपरी भाग को हानि पहुँचाते हैं। नतीजतन पत्तियों में सफेद रंग की परत दिखायी देने लगती है। ज्यादातर यह सफेद परत गर्मियों में दिखायी देती हैं। इससे बचने के लिए क्षतिग्रस्त भागों को काट देना चाहिए। समय-समय पर रसायनों (सल्फर+बेनोमिल) का छिड़काव तथा कवकनाशी का प्रयोग लाभकारी सिद्ध होता है।

- **फाइटोथोरा रूट-रॉटः** यह चेस्टनट में पायी जानी वाली गंभीर बीमारी है। यह बीमारी ज्यादा नमी के कारण होती है। इसमें रोग ग्रस्त पत्तियाँ सूख कर हल्के पीले एवं हरे रंग की हो जाती हैं। जड़ों के ऊपरी भागों वाली छाल में गहरे रंग के भाग दिखायी देते है।

- **आर्मीलेरिया रूट-राटः** यह बीमारी आर्मीलेरिया मेलिया नामक कवक के कारण होती हैं। क्षतिग्रस्त भागों से गम निकलने लगता है। चेस्टनट के छोटे वृक्ष जिनके जड़ तंत्र भी छोटे होते हैं इस बीमारी से ज्यादा हानि का शिकार होते हैं। इससे बचाव के लिए अच्छी जल निकास वाली भूमि और प्रमाणित बीजों का प्रयोग करना चाहिए।

- **लीफ स्पॉटः** यह पत्तियों में होने वाली प्रमुख बीमारी है जो *मायकोस्पेहेरेला मकलीफारमीस* नामक कवक के कारण होती है। इस बीमारी में पत्तियों पर सफेद धब्बे पड़ जाते हैं जो कुछ समय पश्चात गहरे भूरे हो जाते हैं। जैसे-जैसे बीमारी बढ़ती है धब्बे भी आकार भी बढ़ते रहते हैं। ग्रीष्म ऋतु के बाद कोनिडिया बनते है जिन्हें *साइकलिनड्रोस्पोरियम केस्टेनी* कहते हैं। यह कोनिडिया ठंड से गिरी पत्तियों के सफेद धब्बों में रहते हैं और बसंत ऋतु में जब नयी पत्तियाँ आती हैं तब उनको भी प्रभावित करते हैं। इससे बचाव के लिए कवकनाशी का प्रयोग एवं प्रतिरोधी किस्मों को प्रयोग करना चाहिए।

- **सन स्काल्ड या साउथ वेस्ट डिसीजः** इसके लक्षण चेस्टनट ब्लाइट जैसे होते हैं। पौधे के दक्षिण-पश्चिम भाग में बार्क के मृत हो जाने से यह बीमारी होती है। लैटेक्स का लेप कर देने से इस बीमारी से बचाव किया जा सकता है।

पोषक तत्त्व

चेस्टनट अन्य फलों से कम कैलोरी वाला नट है जिसमें कम मात्रा में वसा होती है। इसमें स्वास्थ्य के लिए लाभदायक विटामिन, फाइटो न्यूट्रिऐंट एवं खनिज प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें स्टार्च की मात्रा अधिक होती है और साथ ही प्रोटीन एवं विटामिन-सी भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। चेस्टनट डाइटरी फाइबर का भी प्रमुख श्रोत है। चेस्टनट एक बेहतरीन ऐंटीऑक्सीडेंट की तरह कार्य करता है जिससे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक फ्री रेडीकल्स से बचाव हो सकता

पोषक तत्व		पोषक मान
ऊर्जा	:	213 किलो कैलोरी
कार्बोहाइड्रेट्स	:	45.54 ग्राम
प्रोटीन	:	2.42 ग्राम
वसा	:	2.26 ग्राम
कोलेस्ट्रोल	:	0 मिग्रा
डाइटरी फाइबर	:	8.1 ग्राम
विटामिन्स		
फोलेट्स	:	62–ग्राम
नियासिन	:	1.179 मिग्राम

पैंटोथेनिक एसिड	:	0.509 मिग्राम
पाइरिडाक्सिन	:	0.376 मिग्राम
राइबोफ्लेविन	:	0.168 मिग्राम
थाइमिन	:	0.238 मिग्राम
विटामिन ए	:	28 आईयू
विटामिन सी	:	43 मिग्राम
इलेक्ट्रोलाइट्स		
सोडियम	:	3 मिग्राम
पोटैशियम	:	518 मिग्राम
मिनरल्स		
कैल्सियम	:	27 मिग्राम
कॉपर	:	0.447 मिग्राम
आयरन	:	1.01 मिग्राम
मैग्नीशियम	:	32 मिग्राम
मैग्नीज	:	0.952 मिग्राम
फास्फोरस	:	93 मिग्राम
जिंक	:	0.52 मिग्राम
फाइटो न्यूट्रिएन्ट्स		
फाइटो-स्टीरोल्स	:	22 म्यू ग्राम

स्रोत : यू. एस. डी. ए. नेशनल न्यूट्रिएन्ट डाटा बेस

है। चेस्टनट *(कैस्टीनिया सटाइवा)* के बिना छिलका हटाये हुए प्रति 100 ग्राम फल में पाये जाने वाले प्रमुख पोषक तत्व, विटामिन, इलेक्टोलाइट, खनिज तत्व एवं फाइटो न्यूट्रिएन्ट्स निम्नलिखित हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में समतल भूमि की उपलब्धता कम होने के कारण खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा फलों के उत्पादन की प्रचुर संभावना रहती है। सीढ़ीनुमा खेतों में जलवायु की अनुकूलता के अनुसार उपयुक्त फलों का चुनाव कर उनके उत्पादन को बढ़ावा देने से यहाँ के किसानों की आर्थिक दशा को सुदृढ़ किया जा सकता है। फल उत्पादन में, पके हुए फल

बिक्री के लिए तैयार चेस्टनट के फल

पौधे से तोड़ने के बाद खराब हो जाने के कारण किसानों को काफी नुकसान होता है। चेस्टनट के फल को पौधे से तोड़ने के बाद काफी समय तक सुरक्षित खाने योग्य रखा जा सकता है। अतः इसके उत्पादन की समुचित जानकारी किसानों तक पहुँचाकर उन्हें दो तरह से लाभ पहुँचाया जा सकता है। पहला फल बेचने से उन्हें आर्थिक लाभ होगा तथा दूसरा कि पर्याप्त फल उत्पादन होने पर किसान एवं उनके परिवार के सदस्य स्वयं भी इनका उपयोग करेंगे जिससे कुपोषण की समस्या का भी निदान हो सकेगा।

चेस्टनट के पौधो में यदि किसी तरह की बीमारी नहीं लगे तो इसकी उत्पादक आयु 100 वर्ष तक हो सकती है। अतः एक बार पौधा लगा देने पर अनेक पीढ़ियाँ उसका लाभ उठा सकती है। चेस्टनट की बागवानी में देख-रेख की भी सामान्यतः कम आवश्यकता होती है। फल तोड़ने के बाद तुरन्त खराब नहीं होते है इसलिए पर्वतीय एवं दूर-दराज के क्षेत्रों में जहाँ निकट के क्षेत्र में बाजार उपलब्ध नहीं हैं, चेस्टनट बागवानी के लिए एक अच्छा एवं लाभदायक विकल्प साबित हो सकता है।

मधुशाला

मदिरालय जाने को घर से चलता है पीनेवला, किस पथ से जाऊँ ? असमंजस में है वह भोला भाला,
अलग-अलग पथ बतलाते सब पर मैं यह बतलाता हूँ, राह पकड़ तू एक चला चल, पा जाएगा मधुशाला।

-हरिवंशराय 'बच्चन'

पैशन फल की औषधीय उपयोगिता

विशम्भर दयाल[1], पवन सिंह गुर्जर[2] एवं प्राणनाथ वर्मन[3]
[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

प्रस्तावना

कृष्णकमल (पैशन फ्रूट) एक प्रकार का फल है जो वेलयुक्त पौधा होता है। इसका वानस्पतिक नाम *पैसीफ्लोरा इडुलिस* है जो पैसीफ्लोरेसी कुल का होता है। इस फल की बागवानी के लिए उष्णकटिबंधीय जलवायु सबसे उपयुक्त मानी जाती है। इसे 650-1300 मीटर की ऊँचाई पर आसानी से जा सकता है। यह महत्वपूर्ण पोषक तत्वों से युक्त फल है जिसकी उत्पत्ति दक्षिण ब्राजील में हुई मानी जाती है। ब्राजील में इसे माराकुजा नाम से जाना जाता है। इसका फल अंडानुमा या गोल आकार का होता है। इसका फल लगभग 80-85 दिन में पक जाता है। इस फल की लगभग 350 किस्में हैं। पैशन फल दो प्रकार का होता है।

1. सुनहरा पैशन फल बड़े आकार का होता है।
2. बैंगनी पैशन फल छोटे आकार का होता है।

इसके पौधे की आयु लगभग 5 से 7 वर्ष तक की होती है। पैशन फल पोषक तत्वों से भरपूर एवं स्फूर्तिदायक होता है। इसमें विटामिन ए और सी की प्रचुर मात्रा होती है। पैशन के फल में बीटा कैरोटीन, फाइबर, पोटैशियम और फास्फोरस भी प्रचुर मात्रा में होते हैं। पैशन फल की पत्ती का उपयोग उत्तर-पूर्वी पहाड़ी क्षेत्रों में सब्जी के रूप में किया जाता है। इस फल की ताजी मुलायम पत्ती का उबला हुआ रस बहुत उपयोगी होता है जो मधुमेह, तनाव, अतिसार, पेचिस, जठरशोथ, पेट फूलने और लीवर की समस्या में फायदा करता है। इसके बीज में 23 प्रतिशत तेल होता है जो सूर्यमुखी और सोयाबीन के तेल की तरह ही उपयोग किया जाता है।

इसकी बागवानी के लिए बलुई दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। इसकी अच्छी उपज के लिए जल निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए तथा इसका पी.एच. मान 6.5 से 7.5 होना चाहिए।

औषधीय उपयोगिता

1. पाचन तंत्र

स्वस्थ शरीर के लिए पाचन तंत्र का ठीक होना अत्यन्त आवश्यक होता है। मनुष्य के शरीर को भोजन के पाचन के लिए मुख्यतः किण्वक (एंजाइम), घुलनशील फाइबर, प्रोबायोटिक्स तथा फिनोल की आवश्यकता होती है। पैशन फल में यह सभी पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। यह पेट को साफ रखने में भी सहायक होता है तथा कब्ज आदि पाचन के विकारों को रोकता है। यह कोलोनिक (आँत) ट्यूमर को भी रोकने में सहायक होता है।

2. मोटापा

पैशन फल शरीर के वजन को नियंत्रित करता है। आज के परिवेश में मोटापा बहुत बड़ी समस्या बन गया है और यह शरीर में विभिन्न प्रकार के रोगों को जन्म देता है जिससे मधुमेह, उच्च रक्त चाप, वास फूलना, जोड़ों का दर्द होते हैं। पैशन फल इन्हें नियंत्रित करता है।

3. अस्थमा

औद्योगीकरण के युग में आज वायु प्रदूषण एक मुख्य समस्या बन गयी है जो वास से संबंधित अनेक रोगों को जन्म देती है। यातायात के अनेक साधनों से निकलने वाले धुएँ में उपस्थित अधजले कार्बन एवं हाइड्रोजन के तत्व कैंसर या फेफड़ों से संबंधित समस्याओं को जन्म देते हैं। अनुसंधान के दौरान यह पाया गया है कि बैंगनी पैशन के फल के छिल्के का रस पीने से घबराहट, खाँसी, वास फूलने आदि समस्याओं के निराकरण में लाभ होता है।

[1,2,3]वैज्ञानिक

4. हृदय रोग

पैशन फल पोटैशियम का एक अच्छा स्रोत है। पोटैशियम की कमी हृदय को प्रभावित करती है। इसमें उपलब्ध पोटैशियम अनियंत्रित हृदय गति को नियंत्रित करता है। उपयुक्त मात्रा में पोटैशियम का सेवन करने से इस समस्या का समाधान हो जाता है। पैशन फल कोलेस्ट्राल रहित फल है। पैशन फल के सेवन से हृदय रोग की समस्या से बचा जा सकता है।

5. उच्च रक्त चाप

पैशन के फल में इलेक्ट्रोलाइड (सोडियम, पोटैशियम) उचित मात्रा होने के कारण यह उच्च रक्त चाप को नियंत्रित करने में बहुत लाभदायक है।

6. कैंसर

इसके फल के पेरीकार्य (बीज-कोष) में लाइकोपीन पाया जाता है। इसके जूस का सेवन करने से कैंसर की कोशिकाओं की वृद्धि रुकती है।

7. मधुमेह

भारतीय समाज में मधुमेह एक तेजी से बढ़ती हुई स्वास्थ्य समस्या है। पैशन फल में पाये जाने वाले एल्कालाइड टाइप-2 प्रकार के मधुमेह को नियंत्रित करते हैं।

8. रक्ताल्पता

लौह तत्व की कमी मुख्यतः लड़कियों और गर्भवती महिलाओं में देखी गयी है जो खून की कमी के रूप में देखा जाता है। पैशन फल लौह तत्व का अच्छा स्रोत होता है जो रक्ताल्पता (एनीमिया) में लाभदायक होता है।

9. प्रतिरक्षा

पैशन फल के सेवन से प्रतिरक्षा क्षमता बढ़ती है। पैशन फल विटामिन-सी का अच्छा स्रोत है। विटामिन-सी शरीर को रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करता है।

10. हमारी आँखे

पैशन फल विटामिन-ए एवं सी का उत्तम स्रोत है जो हमारे नेत्रों के ऊतकों के विकास और रख-रखाव के लिए सर्वाधिक आवश्यक है। अतः इस फल के सेवन से नेत्र विकार से बचा जा सकता है।

11. गर्भावस्था

गर्भावस्था के दौरान गर्भवती महिलाओं के खान-पान में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है जिससे माँ और बच्चा दोनों स्वस्थ रहें। गर्भवती महिलाओं को अधिक कैलोरी की आवश्यकता होती है। इसके लिए आहार में माँस, मछली, दूध, अण्डा और दालों को प्रोटीन की पूर्ति के लिए हरी सब्जियाँ फोलिक अम्ल की पूर्ति के लिए, आयरन की गोलियाँ आदि को सम्मिलित किया जाता है।

पैशन फल में यह सभी पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें फोलिक अम्ल प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो मुख्यतः नयी कोशिकाओं के लिए आवश्यक है।

12. जोड़ों का दर्द

पैशन फल के छिल्के का रस जोड़ों के दर्द में लाभदायक होता है।

पैशन फल के 100 ग्राम खाने योग्य भाग में पोषक तत्वों की मात्रा

?kVd	Ekk=k
ऊर्जा	97 कैलोरी
जल	73 ग्राम
प्रोटीन	2.0 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	23 ग्राम
वसा	0.7 ग्राम
रेशा	10 ग्राम
विटामिन–ए	1272
राइबोफ्लेविन	0.13 मिली ग्राम
नियासीन	1.5 मिली ग्राम
विटामिन–सी	30 मिली ग्राम
विटामिन–इ	0.02 मिली ग्राम
विटामिन–के	0.7 माइक्रोग्राम
फोलेट	14 माइक्रोग्राम
कैल्सियम	12 मिली ग्राम
मैग्नीशियम	29 मिली ग्राम
पोटैशियम	348 मिली ग्राम
फास्फोरस	68 मिली ग्राम
लौह	1.6 मिली ग्राम
जिंक	0.1 मिली ग्राम
सोडियम	28 मिली ग्राम

कमरख की बागवानी और उसकी उपयोगिता

विशम्भर दयाल[1] एवं पंकज कुमार सिन्हा[2]

[1,2] भा.कृ.अनु.प.-उत्तर पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र, उमियाम, मेघालय

प्रस्तावना

कमरख एक उष्णकटिबंधीय फल वृक्ष है जिसका वानस्पतिक नाम *एवोरहोइया कैरेम्बोला* है। यह अवेरोहोइसी कुल का पौधा है। इसे अलग-अलग भाषाओं में भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है। अँग्रेजी में इसे फारेन पीच, कैरेम्बोला, फाइव कार्नर फ्रूट, स्टार पिकल तथा स्टार फ्रूट तथा हिन्दी में कमरख और कमरंगा नाम से जाना जाता है। इस फल वृक्ष का जन्म स्थान दक्षिण-पूर्वी एशिया के उप-उष्णकटिबंधीय जलवायु में होता है। यह सदाबहार श्रेणी का फल वृक्ष है। इसके फल में 3-5 धारियाँ पायी जाती हैं। इसका फल सुनहरे पीले तथा हरे रंग का होता है। इसका फल अंडाकार एवं दीर्घवृत्तीय आकार का होता है। इसके फल का आकार 5 से 15 सें.मी. लम्ब होता है। फल की त्वचा पतली, चिकनी, कोमल, लचीली तथा मोमी होती है जो पकने पर हल्के पीले तथा गहरे पीले रंग में बदल जाती है। इसके फल का गूदा अर्द्ध-पारदर्शी, हल्का पीला से पीले रंग का तथा स्वाद खट्टा-मीठा होता है। इसके फल से व्लम, अनन्नास और नींबू के फल जैसी सुगंध आती है।

उपयोगिता

वजन कम करने में

इसके फल में अधिक रेशा, पानी, कम ऊर्जा तथा कार्बोहाइड्रेड होता है जो शरीर के वजन को कम करने में सहायता करता है। कमरख के फलों के गूदे में पाया जाने वाला रेशा हानिकारक कोलेस्ट्राल को कम करता है।

पाचन क्रिया में सहायक

इसके फल में रेशा की प्रचुर मात्रा होने से यह पाचन क्रिया में सहायक होता है। इसके फल का सेवन करने से वायु रस बनना बढता है जो पाचन क्रिया में सहायक और कब्ज को दूर करता है। यह कोलोरेक्टल कैंसर से भी बचाता है। रेशा कोलेस्ट्राल को धमनियों और रक्त धमनी से हटाता है। इसके फल का सेवन करने से उच्च रक्त चाप की स्थिति में लाभ होता है। कमरख के फल में पोटैशियम की प्रचुर और सोडियम की अल्प मात्रा पायी जाती है जो उच्च रक्त चाप को नियंत्रित करती है। इसके फल में विटामिन सी की भी प्रचुरता होती है। यह फल में प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ता है। इसके फल में प्रतिदिन की निर्धारित मात्रा की 50 प्रतिशत विटामिन सी पायी जाती है जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है। इसके फल में अधिक पोटैशियम और सोडियम की मात्रा कम होने से यह हृदय रोग में अत्यन्त ही लाभकारी होता है।

मधुमेह

इसके फल के सेवन से रक्त शर्करा नियंत्रित रहती है जिससे मधुमेह में लाभ होता है।

त्वचा रोग

कमरख का फल त्वचा रोग में भी लाभकारी होता है। यह शरीर के विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालता है। शरीर पर पड़ी झुर्रियों को कम कर त्वचा को निखारता है।

खांसी

कमरख के फल को शहद में मिलाकर खाने से खाँसी और खाँसी के दौरान होने वाले दर्द को दूर किया जा सकता है। यह गले संबंधी समस्या को भी दूर करता है। इसके पत्ती, फल, फूल को आधा घंटा पानी में उबाल कर और ठंडा कर पीने से खाँसी में अत्यधिक लाभ मिलता है।

[1,2]वैज्ञानिक

अच्छी नींद

आज के परिवेश में नींद न आने या नींद कम आने की समस्या बढ़ती जा रही है। इसके फल का सेवन करने से अच्छी नींद आती है और उपापचय क्रिया में भी सहायता मिलती है।

कैंसर

इसके फल के सेवन से कैंसर जैसी असाध्य रोगों में भी लाभ होता है। यह विषाक्त पदार्थों को कम करता है। विषाक्त पदार्थ कोशिकाओं को नष्ट करते हैं जो आनुवंशिक पदार्थो (डी.एन.ए.) को नुकसान पहुँचाते हैं।

कमला रोग (पीलिया)

इस फल के सेवन से पीलिया रोग को ठीक करने में सहायता मिलती है।

बुखार

इसके फल का उपयोग बुखार को ठीक करने में लाभकारी पाया गया है।

जलवायु एवं भूमि

कमरख गर्म आर्द्र जलवायु वाला फल वृक्ष है। इसके वृक्षों को भारत में 1200 मीटर ऊँची पहाड़ियों पर भी देखा गया है। गुणवत्तायुक्त उच्च उत्पादन के लिए अच्छे जल निकास वाली काली दोमट गहरी एवं उपजाऊ भूमि इसकी बागवानी के लिए उपयुक्त होती है। 5.5 से 6.5 पी.एच. मान वाली मृदा इसके लिए उपयुक्त होती है।

प्रजातियाँ

इसकी मुख्य रूप से दो प्रकार की प्रजातियाँ पायी जाती है।

1. खट्टी प्रजातियाँ
2. मीठी प्रजातियाँ

खट्टे स्वाद की प्रजातियाँ

खट्टे स्वाद की प्रजातियों में जिसमें 1 प्रतिशत से अधिक अम्ल पाया जाता है। इसके फल अत्यन्त सुगंधित होते हैं।

मीठे स्वाद की प्रजातियाँ

इस प्रकार की प्रजातियाँ मीठे स्वाद की होती है जिसमें 0.4 प्रतिशत अम्ल और 5 प्रतिशत शर्करा पायी जाती है। इसका फल मध्यम सुगंध लिए होता है।

प्रसारण/प्रवर्धन

इसका प्रवर्धन, बीज, चश्मा लगाना, कलम लगाना तथा गूँटी बाँधना आदि विधियों से किया जा सकता है। बीज द्वारा प्रवर्धन के लिए इसके बीज को ताजा बोना चाहिए क्योंकि इसके बीज की जमने की क्षमता नष्ट हो जाती है। इसके बीज को प्लास्टिक थैले में रखना चाहिए।

पौध लगाने की विधि

हमारे देश में जागरूकता तथा फल की उपयोगिता के ज्ञान के अभाव में इसको खेत की मेंड़ों तथा अनुपजाऊ जमीन में लगाया जाता है। अच्छी देखभाल नहीं होने के कारण अच्छी पैदावार नहीं मिल पाती है। वैज्ञानिक खेती के लिए गर्मियों के दिनों (मई के महीने) में 8×8 मीटर की दूरी पर 1×1×1 मीटर लम्बाई, चौड़ाई, गहराई आकार के गड्ढे खोद लिये जाते हैं। गड्ढों को महीने भर के लिए खुला छोड़ देते हैं जिससे हानिकारक कीटाणु नष्ट हो जायें। मानसून की बारिश आने से पहले 20-25 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद और बराबर मात्रा में मिट्टी को मिलाकर गड्ढों में मिट्टी एवं पानी भर देते हैं। जब गड्ढे की मिट्टी भुरभुरी हो जाये तब तैयार उन्नत किस्म के पौधों को गड्ढों के बीचों-बीच रोपकर तुरन्त सिंचाई कर देते हैं।

खाद एवं उर्वरक

अच्छी उपज एवं गुणवत्ता के लिए 10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 100 ग्राम यूरिया, 150 ग्राम सुपर फॉस्फेट एवं 100 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटॉश की एक साल के पौधे के लिए सिफारिश की जाती है। यह मात्रा इसी दर से दस साल तक बढ़ाते रहना चाहिए। गोबर की खाद, नाइट्रोजन का पूरा

जून में दें। नाइट्रोजन की बची हुई आधी मात्रा अगस्त में देनी चाहिए। इसकी बागवानी के लिए मृदा में कार्बनिक पदार्थ की अच्छी मात्रा होनी चाहिए।

सिंचाई

जब पौधे छोटे होते हैं तब 10-15 दिन के अन्तराल पर जीवन रक्षक सिंचाई की आवश्यकता होती है। बड़े होने पर ये वृक्ष कुछ दिनों तक बिना सिंचाई के भी रह सकते हैं। यदि लम्बे समय तक सूखा पड़ता है तो सिंचाई कर देनी चाहिए जो अच्छी उपज के लिए लाभदायक होता है।

निराई-गुड़ाई

इस फसल में समय-समय पर निराई-गुड़ाई करनी चाहिए।

कटाई-छँटाई

इस फल वृक्ष के लिए विशेष कटाई-छँटाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसके सूखे एवं रोग ग्रस्त शाखाओं को हटा देना चाहिए।

कीड़े एवं बीमारियाँ

कमरख फल के वृक्षों में मुख्यतः कीड़े एवं बीमारियों का प्रकोप कम देखा गया है। इस फल वृक्ष में मुख्यतः फल-मक्खी का प्रकोप पाया जाता है।

- मेलाथियान 50 ई.सी. या फेनथियान 100 ई.सी. या मिथाइल डिमेआन 25 इसी को 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।
- बीमारियों में मुख्यता पत्ती धब्बा रोग पत्तियों पर अनियमित आकार के गहरे भूरे रंग के हल्के धब्बे पड़ जाते हैं। इन धब्बों के ऊपर कभी-कभी हल्के भूरे रंग के धब्बे बन जाते है। इस रोग के उपचार के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव पन्द्रह दिन के अन्तराल पर करें।

फलों की तुड़ाई

यदि कलम द्वारा पौधे तैयार किये गये हैं तो 3-4 साल में फल आने शुरू हो जाते हैं। इसके फल वृक्ष के तनों के चारों ओर फूलता-फलता है। इसके फलों की तुड़ाई सावधानीपूर्वक करनी चाहिए जिससे कि फलों के छाल में दरार नहीं आये। यह फल वृक्ष पूरे वर्ष फल देता है लेकिन मुख्य फसल सितंबर एवं अक्टूबर और दिसंबर-जनवरी में आती है।

उपज

कमरख फल की उपज पौधे की आयु, वृद्धि और उसकी प्रजाति पर आधारित होती है। कमरख के पूर्ण विकसित वृक्ष की औसत उपज 80-100 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष होती है।

कमरख के पोषक तत्वों की मात्रा - प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग में

घटक	मात्रा
ऊर्जा	128 कैलोरी
जल	89 ग्राम
प्रोटीन	1.04 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	6.73 ग्राम
वसा	0.33 ग्राम
रेशा	2.8 ग्राम
विटामिन-ए	61 आई.यू.
विटामिन-बी 6	0.017 मिली ग्राम
विटामिन-सी	34.4 मिली ग्राम
विटामिन-ई	0.15 मिली ग्राम
कैल्सियम	3 मिल ग्राम
मैगनीशियम	10 मिली ग्राम
पोटैशियम	133 मिली ग्राम
लौह	0.08 मिली ग्राम
जिंक	0.12 मिली ग्राम
फास्फोरस	12 मिली ग्राम
सोडियम	2 मिली ग्राम
कॉपर	1 मिली ग्राम

खुबानी की खेती

दिनेश कुमार[1], नजीर अहमद[2] एवं कंचन कुमार श्रीवास्तव[3]
[1,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ
[2]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय शीतोष्ण बागवानी संस्थान, श्रीनगर

खुबानी उच्च पोषक तत्वों से भरपूर एक फल है। इसमें विटामिन-ए, कार्बोहाइड्रेट, फास्फोरस तथा कैल्सियम भरपूर मात्रा में पाया जाता है। वर्तमान समय में व्यापारिक तौर पर इसकी खेती तुर्की, इरान, अल्जीरिया तथा पाकिस्तान में व्यापक पैमाने पर की जाती है। हालांकि इसकी सर्वाधिक उत्पादकता आस्ट्रिया (28 टन प्रति हेक्टेयर) में है। भारत में खुबानी की उत्पादकता (4.16 टन प्रति हेक्टेयर) बहुत कम है। इसका प्रमुख कारण विभिन्न जलवायु प्रक्षेत्रों तथा क्षेत्रों के लिये अधिक उपज वाली उपयुक्त किस्मों की अनुपलब्धता तथा उपयुक्त उत्पादन एवं संरक्षण प्रौद्योगिकी की जानकारी का अभाव है।

केन्द्रीय शीतोष्ण बागवानी संस्थान, श्रीनगर ने पिछले कुछ वर्षों के दौरान ऐसी प्रौद्योगिकियों तथा किस्मों का विकास किया है जिसकी सहायता से 12-15 टन प्रति हेक्टेयर तक का उत्पादन किया जा सकता है। यह संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों की उत्पादकता के बराबर है। शीतोष्ण क्षेत्रों के लिए पहचानी गयी किस्में तथा तकनीकें निम्नलिखित हैं।

उन्नत किस्में: बाग लगाने के लिए पहचानी गयी सर्वोत्तम किस्में इस प्रकार है।

सी.आई.टी.एच. खुबानी-01

यह एक उन्नत किस्म है जो केन्द्रीय शीतोष्ण बागवानी संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित की गयी। इस किस्म में पुष्पन मार्च के दूसरे सप्ताह में होता है तथा पूर्ण पुष्पन से तुड़ाई तक की अवधि 105-110 दिन तक की होती है। इसका उत्पादन 12-15 टन प्रति हेक्टेयर होता है।

सी.आई.टी.एच. खुबानी-02

यह किस्म भी केन्द्रीय शीतोष्ण बागवानी संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित की गयी है। इस किस्म का वृक्ष मध्यम आकार का तथा इसका पुष्पन मार्च के दूसरे सप्ताह में होता है। पूर्ण पुष्पन से तुड़ाई तक की अवधि 104-108 दिन तक की होती है। इसकी उपज क्षमता 8-10 टन प्रति हेक्टेयर तक पायी गयी है।

सी.आई.टी.एच. खुबानी-03

यह किस्म भी केन्द्रीय शीतोष्ण बागवानी संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित की गयी है। इसके वृक्ष मध्यम आकार के होते हैं। इसमें पुष्पन मार्च के दूसरे सप्ताह में होता है। इसका फल 104-108 दिन में पककर तैयार हो जाता है। इसकी उत्पादकता 7-8 टन प्रति हेक्टेयर होती है।

न्यू कैसल

यह सबसे कम अवधि में तैयार होने वाली किस्म है। पूर्ण पुष्पन से पकने तक कुल 90 दिन की अवधि लग जाती है। इसकी उत्पादकता 5-6 टन प्रति हेक्टेयर देखी गयी है।

हरकाट

इस किस्म में पुष्पन मार्च के दूसरे सप्ताह में होता है तथा पूर्ण पुष्पन से पकने तक की अवधि 110-115 दिन की होती है। इस किस्म की उत्पादकता 8-10 टन प्रति हेक्टेयर पायी गयी है।

मृदा एवं जलवायु

साधारणतः खुबानी की खेती कई प्रकार के मिट्टी में की जा सकती है। लेकिन गहरी दोमट तथा अच्छे जल निकास वाली मिट्टी इसके खेती के लिए सर्वोत्तम होती है। किन्तु

[1]प्रधान वैज्ञानिक, [2]निदेशक एवं [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक

औसत मृदा में भी गोबर की खाद मिलाकर प्रयोग करने से खुबानी की खेती की जा सकती है।

खुबानी की खेती के लिए हल्की गर्मी वाली जलवायु सर्वाधिक उपयुक्त होती है। इसके उत्पादन के लिए 30-35 डिग्री सेल्सियस तापमान को पौधे की वृद्धि, पुष्पन तथा फलों के विकास के लिए उपयुक्त पाया गया है।

उन्नत रोपण सामग्री का उत्पादन

सामान्यतः ताजे तोड़े गये बीजों से मूलवृन्तों को उगाया जाता है। बीजों को मार्च में रोपा जाता है जो एक वर्ष के पश्चात वांछित आकार के मूलवृन्त उत्पादित करते हैं। कलिकायन टी वडिंग द्वारा जुलाई तथा अगस्त के दौरान पेंसिल आकार के मोटाई वाले मूलवृन्तों पर की जाती है।

रोपण

इसका रोपण फरवरी-मार्च में किया जाता है। वृक्ष लगाने के लिए सितंबर-अक्टूबर में 90×90×90 सें.मी. आकार का गड्ढा खोदना चाहिए। उसमें 20-25 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद तथा वांछित कीटनाशकों, जैवकारकों को मिलाकर भर देना चाहिए। साधारणतः अधिक उपज के लिए मध्यम घनत्व वाली रोपण प्रणाली जिसमें 5×5 मीटर की दूरी पर प्रति हेक्टेयर 400 पौधे लगाना उत्तम पाया गया है।

सधाई और कटाई

कश्मीर की जलवायु में जहाँ बर्फबारी होती है, सधाई रूपांतरित अग्र प्ररोह प्रणाली (माडिफाइड लीडर सिस्टम) सर्वश्रेष्ठ पाया गया है। अधिक शाखाओं के लिए लम्बी शाखाओं की कटाई आवश्यक है। पर्याप्त विरलीकरण द्वारा वृक्ष को खुला रखा जाना चाहिए ताकि शाखाओं पर फल लगने वाली गाठें (बड़) पर्याप्त मात्रा में बनें। खुबानी के फल एक वर्ष पुराने प्ररोह पर तथा अधिकतर दलपुटों (स्पर) पर लगते हैं। छोटे दलपुटों का जीवन काल भी कम होता है। इसलिए अच्छी फसल प्राप्त करने हेतु दलपुटों का विकास बहुत जरूरी है।

जल प्रबंधन

खुबानी में सिंचाई करने से फलों का विकास अच्छा होता है। अतः उत्तम फलों की अधिक संख्या में प्राप्ति के लिए फल-विकास की इन अवस्थाओं में सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। करेवा दशाओं में बूँद-बूँद सिंचाई द्वारा कम पानी से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इस पद्धति के प्रयोग से 25-30 प्रतिशत पानी बचाया जा सकता है।

पोषण प्रबंधन

खुबानी की अच्छी फसल के लिए खाद तथा उर्वरक दोनों ही प्रकार के खाद को संतुलित मात्रा में देने की आवश्यकता है। अतः यह संस्तुति की जाती है कि सुसुप्तावस्था के दौरान दिसंबर-जनवरी के महीने में 30-40 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष सड़ी गोबर की खाद दी जानी चाहिए। इसके साथ नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैश भी पेड़ की आयु के अनुसार देना चाहिए। सम्भवतः बौर आने से लगभग 15 दिन पहले यूरिया की आधी खुराक, डी.ए.पी. तथा एम.ओ.पी. की पूरी खुराक के साथ दी जानी चाहिए। यूरिया की दूसरी खुराक (1/4 भाग) को फल बनने के तीन सप्ताह पश्चात तथा जहाँ पानी उपलब्ध है वहाँ यूरिया की तीसरी खुराक (1/4 भाग) मई में दी जानी चाहिए।

फलों की तुड़ाई

खुबानी के फल एक ही समय में परिपक्व नहीं होते हैं। अतः फलों को उनकी अनुकूलतम परिपक्वता की अवस्था तीन-चार बार में तोड़ा जाता है। तुड़ाई के समय फलों में न्यूनतम मिठास 10^0 ब्रिक्स होना चाहिए। फल लगने के 100-110 दिन बाद तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। भंडारण के लिए फलों को उस समय तोड़ा जाता है। जब खुबानी के फल की बाहरी त्वचा विशिष्ट रंग में विकसित हो तथा फल ठोस एवं पके हों।

तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन

ताजे तोड़े गये फलों को कम गहरे वाले डिब्बों में रख दिया जाता है जिससे उन्हें दबने या छिलने से बचाया जा सके। सूखे खुबानी के फलों को बाद में (पूरी तरह पकने के

बाद) तोड़ा जाता है। जबकि विपणन योग्य फलों को पहले तोड़कर उन्हें उपचारित किया जाता है जिससे उनमें किसी प्रकार के तुड़ाई उपरान्त रोग नहीं हो। सुखाई का अनुपात 5.5:1 (ताजा फलः सुखा अनुपात) रखना चाहिए। फलों को प्राकृतिक रूप से धूप में या बड़े डीहाइड्रेटरों में सुखाया जाता है।

भंडारण

खुवानी के फलों को शून्य डिग्री तापमान तथा 90 प्रतिशत सापेक्षित आर्द्रता पर जीवनकाल बहुत कम अर्थात एक से दो सप्ताह तक होता है। इसलिए इसके फल को सुखाकर लम्बे समय तक रखा जा सकता है।

सखि, वे मुझसे कहकर जाते

सखि, वे मुझसे कहकर जाते,
कह, तो क्या मुझको वे अपनी पथ-बाधा ही पाते?

मुझको बहुत उन्होंने माना
फिर भी क्या पूरा पहचाना?
मैंने मुख्य उसी को जाना
जो वे मन में लाते।
सखि, वे मुझसे कहकर जाते।

स्वयं सुसज्जित करके क्षण में,
प्रियतम को, प्राणों के पण में,
हमीं भेज देती हैं रण में -
क्षात्र-धर्म के नाते।
सखि, वे मुझसे कहकर जाते।

हुआ न यह भी भाग्य अभागा,
किसपर विफल गर्व अब जागा?
जिसने अपनाया था, त्यागा;
रहे स्मरण ही आते!
सखि, वे मुझसे कहकर जाते।

नयन उन्हें हैं निष्ठुर कहते,
पर इनसे जो आँसू बहते,
सदय हृदय वे कैसे सहते?
गये तरस ही खाते!
सखि, वे मुझसे कहकर जाते।

जायें, सिद्धि पावें वे सुख से,
दुखी न हों इस जन के दुख से,
उपालम्भ दूँ मैं किस मुख से?
आज अधिक वे भाते!
सखि, वे मुझसे कहकर जाते।

गये, लौट भी वे आवेंगे,
कुछ अपूर्व-अनुपम लावेंगे,
रोते प्राण उन्हें पावेंगे,
पर क्या गाते-गाते?
सखि, वे मुझसे कहकर जाते।

- मैथिली शरण गुप्त

करौंदा एक बहुपयोगी फल

पवन सिंह गुर्जर[1], ज्योतिर्मयी लेंका[2], मुरलीधर बी.एम.[3] एवं इसरार अहमद[4]
[1,2,3,4]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

परिचय

करौंदा एपोसाइनेसी कुल का एक पौधा है जिसका वानस्पतिक नाम *कैरिसा कैरण्डस* है। यह एक सदाबहार कटीली झाड़ी है जिसमें लाल तथा हरे रंग के आकर्षक फल लगते हैं। यह शुष्क उष्णकटिबंधीय तथा उप उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले क्षेत्रों में लगाने के लिए उपयुक्त पौधा है। यह छोटे तथा सीमान्त किसानों के लिए अत्यन्त ही लाभकारी फल है जिसको न्यूनतम प्रबंधन के साथ वर्षा सिंचित फसल के रूप में आसानी से लगाया जा सकता है। इसके पौधे को फल लेने के अलावा इससे खेतों, बागों एवं उद्यानों में जीवित बाड़ के लिए भी उपयोग में लाया जाता है। भारत में महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, बिहार एवं उत्तर प्रदेश राज्यों में करौंदा लगाया जाता है।

पोषक गुण

मलिक एवं साथियों (2010) के अध्ययन के अनुसार करौंदा के पोषक गुण तालिका 1 एवं 2 में दिये गये हैं।

औषधीय गुणः करौंदा का औषधीय पौधे के रूप में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। इसका प्रयोग आयुर्वेदिक, होम्योपैथी तथा यूनानी चिकित्सा पद्धति में प्रचलित है। इसके पौधे के जड़, तना, पत्ती तथा फल आदि सभी भाग का औषधि के रूप में उपयोग किया जाता है।

[1,2,3,4] वैज्ञानिक

तालिका 1. ताजा फल के 100 ग्राम वजन में

Øe l[;k	Ikk"kd rRo	Ekk=k ifr 100 xke rktk Qy
1.	प्रोटीन	0.39–0.66 ग्राम
2.	वसा	2.57–4.83 ग्राम
3.	कार्बोहाइड्रेट	0.51–2.94 ग्राम
4.	रेशा	0.62–1.81 ग्राम
5.	लोहा	38–39.1 मिली ग्राम
6.	कैल्सियम	21–24.5 मिली ग्राम
7.	फॉस्फोरस	36–38 मिली ग्राम
8.	एस्कोर्बिक अम्ल	9–11 मिली ग्राम
9.	विटामिन ए	1619 IU (आई.यू.)
10.	ऊर्जा	42.5 (किलो कैलोरी)

तालिका 2. शुष्क फल के 100 ग्राम वजन में पोषक तत्व

Øe l[;k	ik"kd rRo	ek=k ifr 100 xke 'k"d Qy
1.	प्रोटीन	2.3 ग्राम
2.	वसा	9.6 ग्राम
3.	कार्बोहाइड्रेट	67.1 ग्राम
4.	लोहा	39.1 मिली ग्राम
5.	कैल्सियम	0.16 मिली ग्राम
6.	फॉस्फोरस	0.06 मिली ग्राम
7.	ऊर्जा	364 किलो कैलोरी

1. **जड़ः** इसका जड़ कृमिनाशक होता है। यह आँत के कीड़े, मधुमेह, अल्सर, सूजाक तथा बदहजमी को कम करता है।
2. **तना छालः** आयुर्वेद में छाल का उपयोग त्वचा से संबंधित रोगों की चिकित्सा में किया जाता है।
3. **पत्तीः** पत्ती के काढ़े का उपयोग ज्वर, दस्त तथा गले की पीड़ा को ठीक करने में किया जाता है।
4. **फलः** फलों का रस जीवाणुरोधी तथा कवकरोधी होता है। यह पुराने घावों को साफ करने के काम आता है। रस में लोहा की अधिकता होने के कारण यह रक्त क्षीणता के उपचार में भी काम आता है।

विभिन्न जातियाँ: इसकी कैरिसा वंश में लगभग 30 जातियाँ सम्मिलित है जिनका उद्‌भव भारतीय उपमहाद्वीप, दक्षिण अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया तथा मलेशिया में हुआ है। इनमें से कैरिसा इनरमिस, कैरिसा करण्डस, कैरिसा स्पाइनेरम, कैरिसा कनजेस्टा तथा कैरिसा ग्रान्डीफ्लोरा (नेटल प्लम) प्रमुख हैं।

किस्में: पन्त सुवर्ग, पन्त मनोहर, पंत सुदर्शन, कोंकन बोल्ड, सी.आई.एस.एच. करौंदा 11, थार कमल।

जलवायु एवं मृदा: करौंदा रूढ़ तथा सूखा एवं सहनीय पौधा है। यह सभी शुष्क उष्णकटिबंधीय तथा उप उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में खूब वृद्धि करता है। यह खारे तथा अधिक सोडियम युक्त मृदाओं में भी उगाया जा सकता है। किन्तु अत्यधिक वर्षा तथा जल ग्रस्त क्षेत्र करौंदा के लिए उपयुक्त नहीं होता है।

प्रवर्धन: इसका प्रवर्धन सामान्यत: बीज से किया जाता है बीजों को पौधशाला में अगस्त-सितंबर माह में लगाया जाता है। बीज लगाने के एक वर्ष के पश्चात पौधे वांछित जगह पर रोपण के लिए तैयार हो जाते है।

रोपण: बाग की बाड़ लगाने के लिए रोपण 1 से 1.5 मीटर तथा एकांतिक रोपण के लिए 2×2 मीटर की दूरी पर किया जाता है। एक हेक्टेयर में 300-400 पौधे लगाये जा सकते हैं।

फलों की तुड़ाई: बीज द्वारा प्रवर्धित पौधे रोपण के तीसरे वर्ष फल देने लगते हैं। करौंदा में पुष्पन मार्च में होता है। पुष्प आने के 110-120 दिन बाद जुलाई-अगस्त माह में फल परिपक्व हो जाते हैं। एक पौधा औसतन 3-5 किलोग्राम फल देता है।

फलों का भण्डारण: परिपक्व अवस्था पर तोड़े गए फलों को एक सप्ताह तक भंडारित किया जा सकता है जबकि पके हुए फलों को केवल 2-3 दिन तक ही भंडारित किया जा सकता है। रासायनिक उपचार जैसे कि 200 पी.पी.एम. सल्फर डॉईआक्साइड के घोल से उपचारित फलों को 6 महीने तक भंडारित किया जा सकता है।

तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन: चूँकि करौंदा के फलों को अधिक समय तक भंडारित नहीं कर सकते इसलिए इसके प्रसंस्कृत उत्पाद बनाने की सम्भावनाएँ काफी कम हैं। करौंदा के कच्चे एवं पके फलों से विभिन्न उत्पाद बनाये जाते हैं।

1. **जैम:** करौंदा का जैम पके फलों से बनाया जाता जिसकी विधि निम्नलिखित है।

पके फल
⇩
फलों की सफाई
⇩
फल भित्ति अलग करना
⇩
बीज एवं गूदा पृथक करना
⇩
चीनी एवं अम्ल मिलाना
⇩
68 प्रतिशत टी.एस.एस. तक गर्म करना
⇩
विसंक्रमित जार में भरना
⇩
ठंडा करना
⇩
भंडारण करना

2. **जैली:** करौंदा में पैक्टिन प्रचुर मात्रा में होता है। इसलिए इसकी जैली उच्च्य गुणवत्ता की बनती है। जैली बनाने की निम्नलिखित विधि है।

दृढ़, अर्द्ध पके फल
⇩
फलों की सफाई
⇩
फाँके काटना तथा बीज निकालना
⇩
पानी में 20-30 मिनट तक उबालना
⇩
छानना
⇩

पैक्टिन परीक्षण

⇩

चीनी मिलाना (65% टी.एस.एस.)

⇩

उबालना

⇩

झाग निकालना

⇩

रंग तथा साइट्रिक अम्ल मिलाना

⇩

निर्जर्मीकृत बोतल में भरना

⇩

भंडारण

3. **परासरणी निर्जलीकृत करौंदाः** परासरणी निर्जलीकृत विधि से तैयार उत्पाद का स्वाद तथा सुवास ताजा फल के समान होती है। उत्पाद बनाने की विधि निम्नलिखित है।

दृढ़, पके फलों का चयन

⇩

फलों को पानी धोना

⇩

फल के दो समान भाग के फाँके बनाना

⇩

बीज निकालना

⇩

5 प्रतिशत नमक का घोल बनाना

⇩

3 घंटे तक परासारणी उपचार

⇩

नमक घोल तथा फांके पृथक करना

⇩

हांट एयर ओवन में सुखाना

⇩

पैक करना

⇩

भंडारण

4. **अचारः** करौंदा का अचार बहुत ही स्वादिष्ट होता है। इसका अचार दो प्रकार से बनाया जाता है - साबूत करौंदा का अचार और करौंदा का दो फांक बनाकर। दोनों ही तरीके से आचार के मसाले बनाने की विधि एक ही है।

5. **अन्य उत्पादः** इन उत्पादों के अलावा करौंदा से चटनी, स्क्वश, करौंदा चैरी, रेडी टू सर्व पेय बनाया जाता है।

करौंदे का भविष्यः भारत में करौंदा की आनुवंशिक विविधता मुख्यतः राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश राज्यों में प्रचुर मात्रा पायी गयी है। इस विविधता को अधिक उत्पादन देने वाला तथा उच्च गुणवत्ता का जीन प्रारूप का चयन करने में उपयोग करना चाहिए। करौंदा का फल लोहा, कैल्सियम फॉस्फोरस एवं विटामिनों आदि पोषक तत्वों का प्रचुर स्रोत है इसलिए मूल्यवर्धित तथा निर्यातोन्मुख प्रसंस्कृत उत्पादों को विकसित करने तथा उनको प्रचलित करने पर अधिक बल देना चाहिए। इसके अलावा करौंदा पर आधारित छोटे पैमाने की प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना को बढ़ावा देना चाहिए।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति के मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटन न हिय को भूल।।
अंग्रेजी पढ़ीके जदपि, सब गुण होत प्रवीण। पर निज भाषा ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन।।
-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

उत्तर प्रदेश में गौड़ फलों की उपलब्धता, विविधता एवं व्यावसायिक काश्त की सम्भावनायें

सुशील कुमार शुक्ल[1], घनश्याम पांडेय[2] एवं मनीष मिश्र[3]
[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

उत्तर प्रदेश की मिट्टी, जलवायु एवं प्राकृतिक रूप से उपलब्ध विविधता को देखते यहाँ आम, अमरूद, केला, पपीता आदि मुख्य फलों को छोड़कर शरीफा, बेल, जामुन, शहतूत, कमरख, इमली, चिरोंजी, खिरनी, कैंथ, लोकाट, बड़हल, आमड़ा/अम्बार, लसोढ़ा, फालसा एवं गूलर की खेती की अच्छी सम्भावनायें हैं। ये फल पौष्टिकता से भरपूर होने के साथ-साथ अपेक्षाकृत ऊसर, बंजर एवं अन्य सीमांत भूमियों में भी अच्छा उत्पादन देने की क्षमता रखते हैं। बेल, जामुन, शरीफा, चिरोंजी एवं मीठा कमरख आदि फलों की व्यावसायिक खेती की भी अपार सम्भावनायें हैं। संस्थान में उत्तर प्रदेश कृषि अनुसंधान परिषद, लखनऊ द्वारा वित्त पोषित परियोजना के अंतर्गत वित्त पोषित परियोजना में इनमें से निम्नलिखित फलों में उपलब्ध विविधता एवं इनमें से उन्नत जीनोटाइप्स के चयन, प्रवर्धन एवं संकलन पर काम किया गया है। इन फलों के उपयोग, उपलब्ध विविधता, उन्नत जननद्रव्यों का विवरण एवं उत्तर प्रदेश में इनकी सम्भावनायें निम्नवत हैं।

1. शरीफा

शरीफा के पौधे के सहिष्णु स्वभाव एवं लगभग हर प्रकार की शुष्क, बंजर एवं पथरीली भूमि में उग सकने की क्षमता होने के कारण उत्तर प्रदेश में इसकी खेती की अपार सम्भावनायें हैं। शरीफा के फलों को मुख्य रूप से ताजे खाने के रूप में ही प्रयोग किया जाता है लेकिन सीमित स्तर पर इसे आइस्क्रीम या जैम बनाने में भी प्रयोग किया जाता है। इसकी पत्तियों में कीटनाशी गुण भी होते हैं और इसी कारण पौधे को जानवर भी नहीं खाते हैं। इसके कारण इसे अक्सर बगीचे के चारों तरफ बाड़ के रूप में लगाया जाता है। शरीफा की व्यावसायिक काश्त लखनऊ के पास सीतापुर रोड पर रैंथा, कठवारा एवं चनवांतारा आदि गांवों में देखने को मिलता है। पूरे उत्तर प्रदेश एवं विशेष रूप से बुंदेलखंड क्षेत्र में शरीफा की खेती की प्रबल सम्भावनायें हैं। इस परियोजना के दौरान, शरीफा के 10 उन्नत जननद्रव्यों एवं किस्मों का संकलन लखनऊ के आस-पास के क्षेत्रों तथा फल शोध केन्द्र, संगारेड्डी, मेडक, आंध्र प्रदेश से एकत्र कर प्रक्षेत्रजीन बैंक में संरक्षण हेतु लगाये गये हैं। शुरुआती फलत के आधार पर संगारेड्डी से लाये गये आठ किस्मों एवं संकर प्रजातियों में से एटीमोया एवं आईलंड जेम की अपेक्षा, एटीमोया × बालानगर, रेड सीताफल × पोंड्स एपल संकर प्रजातियाँ फलत एवं फलों की गुणवत्ता की दृष्टि से इस क्षेत्र के लिये काफी बेहतर पायी गयी। इनका आंकलन अभी जारी है।

लखनऊ की दशाओं में शरीफा का वानस्पतिक प्रवर्धन फरवरी-मार्च महीने में क्लेफ्ट विधि द्वारा एक वर्ष पुराने शरीफा के पालीथीन की थैलियों में उगाये लगभग पेंसिल की मोटाई के बराबर तने वाले बीजू मूलवृंतों पर आसानी से किया जा सकता है। बीजू पौधों को उगाने के लिये ताजे निकले बीजों का ही प्रयोग करना चाहिये। इसके बीजों को बुआई के पूर्व रात भर बहते पानी में रखने से अंकुरण बेहतर होता है। खुले या नेट हाउस की अपेक्षा पॉलीहाउस में ग्राफ्टिंग करने से अच्छी सफलता (83.32 %) मिलती है। इसी तरह 15 फरवरी के आस-पास करने से ग्राफ्ट सफलता 88.32 प्रतिशत होती है जो फरवरी अंत में 81.65 प्रतिशत और

[1,2,3]प्रधान वैज्ञानिक

मार्च में 71.65 प्रतिशत ही रह जाती है।

2. शहतूत

शहतूत की मुख्य रूप से सफेद, लाल एवं काला तीन प्रकार की प्रजातियाँ पायी गयी हैं। इनमें से काली या गहरे लाल रंग की प्रजातियों की व्यावसायिक खेती की उत्तर प्रदेश में अच्छी सम्भावनायें हैं। इसकी व्यावसायिक खेती कानपुर एवं सहारनपुर की आस-पास देखी गयी है। शहतूत ऐंटीऑक्सीडेंट का अच्छा स्रोत है। इसके फलों का प्रयोग ताजा खाने, शर्बत, स्क्वेश, जैम या किण्वित पेय बनाने में किया जाता है। परियोजना के दौरान लखनऊ, कानपुर एवं सहारनपुर के बागों का सर्वेक्षण कर एवं केंद्रीय रेशम जननद्रव्य संसाधन केंद्र, होसूर, तमिलनाडु से शहतूत के 17 जननद्रव्यों का संकलन, प्रवर्धन एवं मूल्यांकन किया गया एवं इन्हें फील्डजीन बैंक में संरक्षण हेतु लगाया गया। जननद्रव्यों के भौतिक-रासायनिक विविधता के अध्ययन में फलों का वजन 0.59 से 2.66 ग्रा., लम्बाई 16.92 से 69 मि.मी., फलों कि चौड़ाई 7.8 से 10.8 मि. मी., टी.एस.एस. 13 से 20.9° ब्रिक्स, अम्लता 0.19 से 0.69 प्रतिशत, एस्कार्बिक अम्ल 9.8 से 15.68 मि.ग्रा./100 ग्रा., रिड्यूसिंग शर्करा 7.98 से 14.09 प्रतिशत एवं कुल शर्करा 10.71 से 17.53 प्रतिशत के बीच पायी गयी। इनमें से सी.आई.एस.एच.-उपकार मलबेरी-2 एवं सी. आई.एस.एच.-उपकार मलबेरी-8 को फलों के आकार एवं मिठास के कारण बेहतर पाया गया।

शहतूत के तने की 6 से 9 इंच लम्बी कलमों को काट कर जुलाई-अगस्त के महीने में पॉली हाउस में पालीथीन की थैलियों में मिट्टी खाद एवं बालू के मिश्रण से भरी थैलियों में लगाकर 75 से 80 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता तथा 25 से 35 प्रतिशत तापमान पर रखकर आसानी से शहतूत के पौधे तैयार किये जा सकते हैं।

3. कमरख

कमरख विशेष तौर पर मीठी प्रजाति की खेती भी उत्तर प्रदेश में अपार सम्भावनायें हैं। इसको ताजा खाने के अलावा सलाद के रूप में या मुरब्बा, कैंडी, जैम, चटनी, अचार या पेय बनाकर भी प्रयोग में लाया जा सकता है। कमरख के 5 जननद्रव्यों का भौतिक-रासायनिक मूल्यांकन किया गया। जननद्रव्यों के भौतिक-रासायनिक अध्ययन में फलों का वजन 81 से 109.8 ग्रा./फल, लंबाई 8.25 से 12.17 सें.मी., टी.एस. एस. 5.9 से 8.2° ब्रिक्स, एस्कार्बिक अम्ल 11 से 16 मि. ग्रा./100 ग्रा., रिड्यूसिंग शर्करा 2.17 से 2.92 प्रतिशत एवं कुल शर्करा 4.91 से 5.71 प्रतिशत के बीच पायी गयी। इनमें से सी.आई.एस.एच.-उपकार कैरम्बोला-1 (मीठी) एवं सी.आई.एस.एच.-उपकार कैरम्बोला-2 (खट्टी-मीठी) को बेहतर पाया गया।

कमरख को फरवरी-मार्च के महीने में एक वर्ष पुराने बीजू मूलवृंतों पर क्लेफ्ट विधि द्वारा आसानी से प्रवर्धित किया जा सकता है। बीजू मूलवृंतों को तैयार करने के लिये पके फलों से निकाले ताजे बीज मिट्टी एवं खाद की बराबर मात्रा से भरी थैलियों में जाड़े के दिनों में ही बोकर पॉलीहाउस में रख देना चाहिये। एक वर्ष पुराने पौधे कलम बांधने योग्य हो जाते हैं। कलम बांधने के बाद ऊपर के भाग को पॉलीथीन कि नलिका से ढककर 20 से 25 दिनों तक पॉलीहाउस में रखकर जब नये कल्ले निकल जायें तब शेड नेट हाउस में स्थानांतरित कर देना चाहिये। इस प्रकार से करने पर 88 से 100 प्रतिशत तक सफलता मिली है।

4. लोकाट

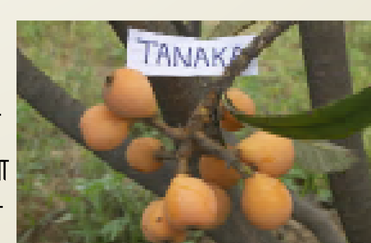

लोकाट एक उपोष्ण जलवायु का पौधा है। इसकी खेती भारत में उत्तर प्रदेश,

उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली एवं पंजाब के कुछ भागों में की जाती है। उत्तर प्रदेश में इसकी खेती को बढ़ाने की प्रबल सम्भावना है। ताजे उपभोग के अतिरिक्त लोकाट से जैम, जेली भी बनायी जा सकती है तथा साथ ही इसकी डिब्बाबंदी भी की जा सकती है।

लोकाट के बागों का सर्वेक्षण कानपुर, लखनऊ एवं सहारनपुर में किया गया। इसकी दस विभिन्न किस्मों का भौतिक-रासायनिक विश्लेषण करने से फलों का वजन 10.66 से 26.33 ग्रा./फल, लम्बाई 30.49 से 42.59 मि.मी., फलों में गूदा 5.83 से 19 ग्रा./फल., बीज का वजन 2 से 4.66 ग्रा./फल, बीजों की संख्या 1.66 से 5/फल, गूदाःबीज अनुपात 2.63:5.15, अम्लता 0.269 से 0.845 प्रतिशत, टी.एस.एस.: अम्लता अनुपात 15.81 से 56.99, एस्कार्बिक अम्ल 3.23 से 4.16 मि.ग्रा./100 ग्रा., रिड्यूसिंग शर्करा 4.82 से 7.35 प्रतिशत एवं कुल शर्करा 7.74 से 9.98 प्रतिशत के बीच पायी गयी। ये दस किस्में गोल्डन येलो, इम्प्रूव्ड गोल्डन येलो, पेल येलो, बतिया सफेदा, बतिया सुर्ख, टनाका, थेम्स प्राइड, मैचलेस ड्वार्फ, सहारनपुर स्पेशल एवं कैलिफोर्निया एडवांस थीं। इनमें से टनाका एवं सहारनपुर स्पेशल के फल अपेक्षाकृत बड़े आकार के थे जबकि बतिया सफेदा, गोल्डन येलो एवं उन्नत गोल्डन येलो मिठास के मामले में बेहतर होने से व्यावसायिक काश्त की अच्छी सम्भावनायें हैं।

5. बड़हल

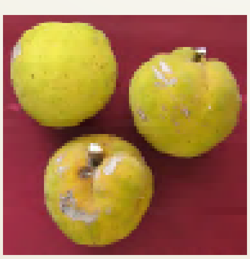

बड़हल का महत्व इसके फल, लकड़ी एवं इसकी पत्तियों के चारे के रूप में प्रयोग के कारण काफी अधिक है। पके फल ताजे उपभोग के अतिरिक्त मुख्य रूप से अचार, जैम, स्क्वैश या पेय बनाने के काम आते हैं। कच्चे फलों एवं विकास कर रहे पुष्प गुच्छों से भी अचार बनाया जाता है। बड़हल का उन्नत जननद्रव्य संकलन हेतु लखनऊ, कानपुर, गोरखपुर एवं बस्ती जिलों का सर्वेक्षण कर किया गया और कुल 15 जननद्रव्यों को चिन्हित कर भौतिक रासायनिक विश्लेषण किया गया। इनमें फलों का वजन 137 से 460 ग्रा./फल, बीजों की संख्या 26 से 127/फल, अम्लता 0.91 से 2.37 प्रतिशत, टी.एस.एस. 18.87 से 27.78° ब्रिक्स, एस्कार्बिक अम्ल 13.67 से 23.61 मि.ग्रा./100 ग्रा. एवं रिड्यूसिंग शर्करा 8.60 से 11.67 प्रतिशत के बीच पाये गये। इस आंकलन के आधार पर सी.आई.एस.एच.-उपकार बड़हल-3, सी.आई.एस.एच.-उपकार बड़हल-6, सी.आई.एस.एच.-उपकार बड़हल-7, सी.आई.एस.एच.-उपकार बड़हल-10, सी.आई.एस.एच.-उपकार बड़हल-20, सी.आई.एस.एच.-उपकार बड़हल-22 को फल के आकार, मिठास, नियमित सुडौल फलाकृति के आधार पर बेहतर पाया गया।

बड़हल के ऊतक संवर्धन विधि से प्रसारण हेतु मानक विकसित किये गये। तीन सें.मी. लम्बे एक कक्षस्थ कलिका के साथ बड़हल के एक्स्प्लांट को लेकर प्रयोगशाला में बी.ए.पी., 2.0 मि.ग्रा./ली., आई.ए.ए., 1.0 मि.ग्रा./ली. एवं जिब्रेलिक अम्ल, 0.5 मि.ग्रा./ली. के साथ एम.एस. मीडियम में करीब दस दिन के भीतर कलिका में फुटाव दर्ज़ किया गया। प्रति एक्स्प्लांट नये निकलने वाले प्ररोहों की अधिकतम संख्या (6 प्रति एक्स्प्लांट) इसी मीडियम में दर्ज़ की गयी। इसके बाद सूक्ष्म प्ररोहों को बिना हार्मोन लेकिन केसीन हाइड्रोलिसेट (100 मि.ग्रा./ली.) के साथ एम.एस. बेसल मीडियम में रखा गया। इन सूक्ष्म प्ररोहों में सफलतापूर्वक जड़ें विकसित करने के लिये आई.बी.ए., 5.0, आई.ए.ए. 1, मि.ग्रा./ली. के साथ एम.एस. मीडियम का प्रयोग किया गया। इस प्रकार प्रयोगशाला में मूलयुक्त पौधों का अनुकूलन करने हेतु एम.एस. प्लांट साल्ट मिश्रण (आधी क्षमता) को आटोक्लेव कर इसमें लगाकर शेड नेट हाउस (50 प्रतिशत छाया एवं 70 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता) में रखा गया।

6. आमड़ा/अम्बार

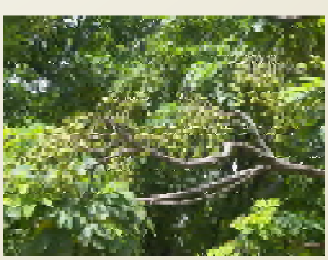

आमड़ा/अम्बार जो एक पर्णपाती वृक्ष है को लगभग पूरे देश के ऊष्ण एवं उपोष्ण जलवायु वाले

क्षेत्र में पाया जाता है। उत्तर प्रदेश के मध्य एवं पूर्वी भागों में ये प्रायः पाया जाता है। इसके फलों का प्रयोग सब्जी या अचार बनाने के लिये किया जाता है। लखनऊ के आस-पास के क्षेत्रों से तीन जीनोटाइप्स को चिन्हित करते हुए विश्लेषण कर फलों का वजन 7.9 से 11.9 ग्रा./फल, फलों की लम्बाई 3.12 से 3.78 सें.मी. एवं फलों की चौड़ाई 2.23 से 2.44 सें. मी दर्ज़ की गयी। इनका तने की कलमों द्वारा प्रवर्धन कर संस्थान के जननद्रव्य प्रक्षेत्र में लगाया गया। इसके फलों में ज्यादा विविधता नहीं पायी गयी। बाजार को देखते हुए इसकी व्यावसायिक काश्त की प्रदेश में सीमित सम्भावनायें हैं।

7. लसोढ़ा

देश के विभिन्न शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्रों में इसकी उत्पादकता, इसके विभिन्न प्रकार की भूमि एवं मिट्टी में उग सकने की क्षमता, प्रसंस्करण के लिये उपयुक्तता एवं अच्छे बाज़ार के कारण काफी लोकप्रिय हो रहा है। उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड, आगरा, मथुरा क्षेत्र में अचार के लिये बड़े आकार के फल वाले लसोढ़ा की काफी मांग रहती है। बिना किसी विशेष देखभाल के इससे काफी अच्छी आय हो जाती है। यह अपेक्षाकृत तेजी से बढ़ने वाला वृक्ष है। लखनऊ, फैज़ाबाद एवं झांसी के क्षेत्रों में सर्वेक्षण कर बड़े आकार के फल वाली पांच जीनोटाइप्स को चिन्हित कर संकलित किया गया। फलों का विश्लेषण कर फलों का वजन 11.8 ग्रा. से 16 ग्रा., गुठली का वजन 2.06 से 2.2 ग्रा., फलों की लम्बाई 2.51 से 2.92 सें.मी. एवं चौड़ाई 2.62 से 3.14 सें.मी. दर्ज़ की गयी। लसोढ़ा में मुख्य रूप से दो प्रकार की प्रजातियाँ ही उपलब्ध हैं। इनमें से एक में छोटे एवं दूसरे में बड़े फल आते हैं। बड़े आकार के फल वृक्षों में बहुत विविधता नहीं पायी गयी।

लसोढ़ा का वानस्पतिक प्रवर्धन दिसंबर से मार्च के बीच शत-प्रतिशत सफलता के साथ पालीथीन की थैलियों में एक वर्ष पुराने बीजू मूलवृंतों पर क्लेफ्ट विधि द्वारा सफलतापूर्वक किया गया। अप्रैल एवं मई के महीनों में करने पर ग्राफ्ट की सफलता का प्रतिशत घटकर 80 प्रतिशत रह गया। लसोढ़ा का वानस्पतिक प्रवर्धन एक वर्ष पुराने बीजू मूलवृंतों पर फरवरी-मार्च के महीनों में पैच बडिंग कर भी आसानी किया गया।

भारत माता ग्रामवासिनी

भारत माता ग्रामवासिनी
खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा मैला सा आँचल
गंगा यमुना में आँसू जल,
मिट्टी की प्रतिमा उदासिनी
भारत माता ग्राम वासिनी
और

धरती का आँगन इठलाता
शस्य श्यामला भू का यौवन
अंतरिक्ष का हृदय लुभाता
जौ गेहूँ की स्वर्णिम बाली
भू का अंचल वैभवशाली
इस अंचल से चिर अनादि से
अंतरंग मानव का नाता ।।

-सुमित्रानंदन पंत

(सफलता गाथा)

पर्वतीय क्षेत्रों में औद्यानिक फसलों हेतु पौधशालाः रोजगार एवं आय का उत्तम साधन

अजय कुमार त्रिवेदी[1] एवं सुरेश कुमार वर्मा[2]

[1,2]राष्ट्रीय पादप आनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केन्द्र भवाली-263 132, निगलाट, जिला नैनीताल (उत्तराखण्ड)

मध्य हिमालयी क्षेत्र के वनों एवं बागों की समृद्धि जैव विविधता पर केन्द्रित है। हिमालयी क्षेत्र में कृषि एवं बागवानी जीविकोपार्जन के प्रमुख साधन हैं। बाजारीकरण, शहरीकरण एवं औद्योगीकरण से दूर प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर यह क्षेत्र मुख्यतः विभिन्न प्रकार के फलों तथा खाद्यान्न फसलों के लिये जाना जाता है। इस क्षेत्र की जैव विविधता का आंकलन इससे भी लगाया जा सकता है कि राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो जो देश की कृषि जैव विविधता के अन्वेषण, संकलन, संरक्षण एवं मूल्यांकन की शीर्ष संस्था है ने अपने कुल दस क्षेत्रीय केन्द्रों में से एक को क्षेत्रीय केन्द्र भवाली (नैनीताल) उत्तरखण्ड में स्थित किया हुआ है। इसका मुख्य कार्य उत्तराखण्ड की जैव विविधता का अन्वेषण, संकलन, संरक्षण एवं मूल्यांकन करना है। क्षेत्रीय केन्द्र के वैज्ञानिक समय-समय पर उत्तरखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में किसानों के लिये जैव विविधता संरक्षण, बागवानी एवं कृषि फसलों से संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित करते रहते हैं। साथ ही क्षेत्रीय किसान भी इस केन्द्र पर आकर जैव विविधता, बागवानी एवं कृषि से संबंधित जानकारी प्राप्त करते हैं। इस क्षेत्र के किसान प्राप्त जानकारी का उपयोग कर जैव विविधता के संरक्षण करने के साथ स्वरोजगार सृजित कर आत्मनिर्भर बनने की दिशा में भी सफलतापूर्वक आगे बढ़ रहे हैं। इससे किसानों आय में वृद्धि होने के साथ उनके जीवन स्तर में भी सुधार आया है।

नैनीताल जनपद स्थित ग्राम-धारी, पोस्ट-लोहाली निवासी श्री महेश चन्द्र भट्ट कृषि कार्य द्वारा अर्जित आय से परिवार का भरण-पोषण कर रहे थे। आय के उपयुक्त साधन न होने से उन्हें आर्थिक परेशानी हो रही थी। श्री भट्ट ने एन.बी.पी.जी.आर. क्षेत्रीय केंद्र भवाली के वैज्ञानिकों से मिलकर पौधशाला प्रबंधन पर जानकारी प्राप्त की तथा जय श्री अम्बा पौधालय के नाम से पौधशाला बनाकर विभिन्न प्रकार के फलों जैसे आड़ू, खुबानी, पुलम, अखरोट, माल्टा, कागजी निम्बू आदि के उच्च गुणवत्ता वाले पौधों को बनाना प्रारंभ किया। वैज्ञानिकों द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार वैज्ञानिक तकनीक से उच्च गुणवत्ता वाले पौधे बनाने के कारण उनकी पौधशाला से पौधों की माँग दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। व्यक्तिगत खरीददारों के साथ ही जय श्री अम्बा पौधालय से सरकारी विभागों में भी पौधों की माँग बनी रहती है। श्री भट्ट आस-पास के क्षेत्र में जैव विविधता संरक्षण के साथ पौधशाला प्रबंधन द्वारा रोजगार सृजन का एक जीता-जागता उदाहरण बन गये हैं। श्री भट्ट के अनुसार फल उत्पादन में पौधशाला प्रबंधन का महत्व उसी प्रकार है जैसे शरीर में मेरूदण्ड का। पौधशाला के माध्यम से अच्छे पौधे तैयार करने के लिए पाँच महत्वपूर्ण कारकों को ध्यान में रखना होता है - (i) मृदा (ii) सिंचाई (iii) प्रतिरोपण (iv) प्राकृतिक क्षेत्र (v) रोपण क्यारियों का निर्माण एवं देख-रेख।

श्री भट्ट के पास जाड़े के मौसम में आड़ू, खुबानी, पुलम, नाशपाती एवं अखरोट के पौधे तैयार मिलते है जो ग्राफ्ट विधि से बनाये जाते हैं। श्री भट्ट के अनुसार पर्वतीय क्षेत्र में ठंड अधिक पड़ने के कारण जाड़े में खेत या बगीचे में काम करना कठिन होता है। इस समय पौधे सुसुप्तावस्था

[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं [2]प्रधान वैज्ञानिक

में होने के कारण ग्राफ्ट के सफल होने की संभावना अधिक रहती है। अतः इस समय का उपयोग धूप मे बैठ कर ग्राफ्ट बाँधने में किया जा सकता हैं। जाड़े के मौसम में एक व्यक्ति प्रतिदिन लगभग 100-150 ग्राफ्टेड पौधे बना लेता है। इस तरह डेढ़-दो महीने में औसत 4000-5000 पौधे प्रति व्यक्ति तैयार हो जाते हैं। ग्राफ्टेड पौधे की कीमत रु. 30/- से लेकर रु. 60/- प्रति पौधा तक मिलती है। इस प्रकार परिवार के चार-पाँच सदस्य मिलकर एक मौसम में लगभग 20000 पौधे तैयार कर लेते हैं जिनमें 60-70 प्रतिशत पौधे ही अगले मौसम तक सफलतापूर्वक जीवित रहते हैं। अतः पौधशाला पर होने वाले अन्य व्ययों को घटा देने के बाद भी केवल जाड़े के मौसम वाले पौधों से प्रतिवर्ष रु. 300000/- से रु. 400000/- के बीच शुद्ध लाभ होता है।

इसी प्रकार बरसात के मौसम में माल्टा, कागजी नीबू, एवं बड़ा नीबू के न्यूसेलर पौधे तैयार किये जाते हैं। न्यूसेलर पौधों में एक तो रोग फैलने की संभावना बहुत कम रहती है। दूसरे यह गुणों में अपने पितृ पौधों के सदृश ही होते हैं। जिससे यह निश्चित होता है कि पौधशाला से दिये जाने वाले पौधों के गुण कैसे होंगे। एक बरसात (जुलाई-अगस्त) में बोये गये बीज से अगली बरसात में बेचने योग्य पौधा तैयार हो जाता है। इस विधि से बनाए गये पौधों में 50-60 प्रतिशत पौधे ही अगले साल तक स्वस्थ एवं जीवित रहते हैं। इस विधि से बनाये गये पौधे उच्च गुणवत्ता वाले होने के कारण इनकी मांग भी अधिक रहती है। यह पौधे लगभग रु. 15-20/- प्रति पौधा की दर से बिकते है। औसतन 15000-20000 पौधे प्रति वर्ष बन जाते हैं जिनसे रु. 200000/- - रु. 250000/- की आय प्रति वर्ष प्राप्त होती है।

बचे हुए समय का उपयोग मटर, गोभी, बैगन, टमाटर, शिमला मिर्च आदि सब्जियों उगाने में करने से और भी आय होती है तथा परिवार के सदस्यों को रोजगार भी मिलता रहता है। सब्जियों से दिन प्रतिदिन आय होने से दैनिक खर्चे निकलते रहते हैं। अतः फलों से होने वाली आय बचत होती है। इस तरह विविध प्रकार के पौधे बनाने से नुकसान होने की संभावना बहुत कम हो जाती है। श्री भट्ट के अनुसार पिछला अनुभव बताता है। ऐसा भी संभव है कि किसी वर्ष एक विशेष फल के पौधों की सफलता दर बहुत कम हो लेकिन विविधता बनाये रखने से नुकसान नहीं होता है। श्री भट्ट क्षेत्र के किसानों के लिए आदर्श एवं प्रेरणा श्रोत बन गये हैं जिन्होंने जैव विविधता के साथ पौधशाला प्रबंधन द्वारा न केवल परिवार को स्वावलम्बी बनाया है अपितु परिवार की कुल आय में आशा से अधिक वृद्धि करने में भी सफल रहे हैं। अन्य किसान भी क्षेत्रीय केन्द्र भवाली के वैज्ञानिकों से प्राप्त जानकारी का लाभ उठाकर इस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। ऐसी स्थिति में आशा है कि आने वाले समय में अधिक संख्या में किसान भाई-बहन जैव विविधता का महत्व समझते हुए जैव विविधता संरक्षण के साथ बागवानी में नये कीर्तिमान स्थापित करेंगे। जिससे इस सुदूर पर्वतीय क्षेत्र में समृद्धि एवं खुशहाली बढ़ सकेगी।

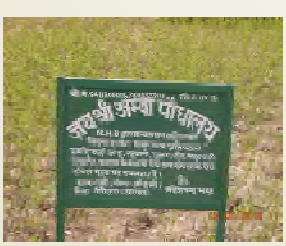

जय श्री अम्बा पौधालय

पौधालय में तैयार किये गये विभिन्न प्रकार के पौधे

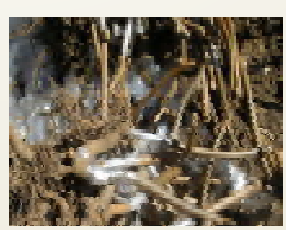

रूटस्टाक एवं स्यानवुड से तैयार किए गये ग्राट

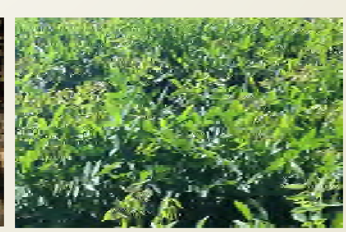

पौधालय में किसान को देने के लिए तैयार अखरोट के पौधे

आम के शूट गॉल सिला कीट की पहचान एवं नियंत्रण

गुण्डप्पा[1], पी.के. शुक्ल[2] एवं बालाजी राजकुमार[3]
[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

शूट गॉल सिला उत्तर भारत में आम की फसल को क्षति पहुँचाने वाला एक गंभीर कीट है। यह कीट आम की फसल के अलावा किसी अन्य फसल को क्षति नहीं पहुँचाता है। इसके प्रकोप से आम की वानस्पतिक वृद्धि को औसतन 50 प्रतिशत की क्षति होती है जिसके परिणामस्वरूप फल उत्पादन गंभीर रूप से प्रभावित होता है। विगत दो वर्षों के दौरान किये गये सर्वेक्षण से प्राप्त आँकड़ों के अनुसार शूट गॉल सिला का प्रकोप उत्तर प्रदेश के फैजाबाद, सहारनपुर, सीतापुर, बाराबंकी, बिजनौर एवं लखनऊ जिलों तथा उत्तराखंड के हरिद्वार में हो रहा है। इस कीट से अधिकतम प्रकोप फैजाबाद जिले के सोहावल विकास खण्ड में (अक्षांश 26 45.81’ देशांतर 82 01.00’ समुद्र तल से ऊँचाई 288’) प्रभावित टहनियों की औसत संख्या 3.30 प्रति 20 टहनी एवं घुंडियों की औसत संख्या 57.75 प्रति टहनी तक में पायी गयी। क्षेत्रफल फैलाव के आधार पर सीतापुर और सहारनपुर में अधिकतम प्रकोप देखा गया जबकि बिजनौर एवं लखनऊ जिलों में इस कीट की प्रारंभिक उपस्थिति मात्र ही दर्ज की गयी।

सर्वेक्षण में यह भी पाया गया कि इस कीट के प्रकोप से सीतापुर जिले के अनेक बागों में गंभीर क्षति हो रही है। साथ ही यह कीट बाराबंकी एवं फैजाबाद जिलों के घाघरा नदी के निकट स्थित क्षेत्रों में तेजी से बढ़ रहा है। अभी तक लखनऊ जिले में इस कीट का प्रकोप नहीं के बराबर देखा गया है। किन्तु लखनऊ के बख्सी का तालाब एवं सीतापुर सिधौली क्षेत्र की सीमा पर इस कीट की उपस्थिति खतरे का संकेत दे रही है। बख्सी का तालाब विकास खण्ड के सीतापुर सीमा निकट स्थित कुछ बागों में इस कीट की उपस्थिति देखी गयी है। परन्तु इस क्षेत्र में आम के बागों की सीमित संख्या को देखते हुए लखनऊ की ओर इसके विस्तार की कम संभावना है। इसके प्रकोप को बढ़ने से रोकने के लिए सीतापुर, बाराबंकी और फैजाबाद जिलों के प्रभावित क्षेत्रों में कृषकों से संपर्क करने पर ज्ञात हुआ कि वे इस कीट को रोग समझते हैं और इस कीट के नियंत्रण हेतु कोई प्रयास नहीं कर रहे हैं। अतः कृषकों को जागरूक करने हेतु कृषि विज्ञान केन्द्रों की सहभागिता से प्रयास किया जा रहा है। बाराबंकी जिला के सिरौली गौसपुर स्थित बरौलिया ग्राम में पिछले दो वर्षों के प्रयास के बाद चयनित बागों से इस कीट को समाप्त किया जा चुका है।

इस कीट की वयस्क मादा मार्च-अप्रैल महीने में विकसित हो रही कोमल पत्तियों की मध्य शिरा के आस-पास

[1,3]वैज्ञानिक एवं [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक

तालिका 1: शूट गॉल सिला का उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखण्ड में प्रकोप

जिला	विकास खण्ड	प्रभावित टहनियों की संख्या (औसत प्रति 20 टहनियाँ)	घुण्डियों की संख्या (औसत प्रति टहनी)
फैजाबाद	सोहावल एवं मसौधा	0.05–4.85	0.80–57.75
हरिद्वार	भगवानपुर	0.9–2.9	5.25–17.5
सहारनपुर	पुंवरका, सदौली कदीम एवं मुजफ्फराबाद	0.4–2.70	2.45–43.20
सीतापुर	बिसवां, सिधौली, कशमण्डा, मछेटा एवं खैराबाद	0.20–2.90	0.75–16.95
लखनऊ	बख्सी का तालाब	1.80–3.55	8.15–25.00
बाराबंकी	सिरौली गौसपुर	0.25–2.35	0.50–19.55
बिजनौर	नजीमाबाद	1.70	13.30

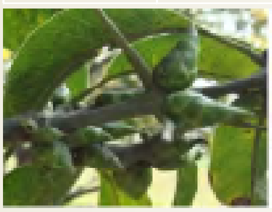
नवंबर

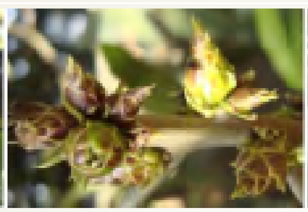
दिसंबर

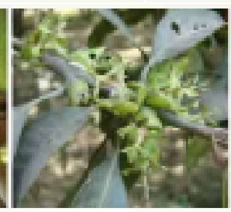
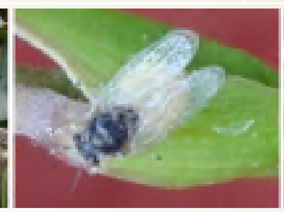
फरवरी-मार्च

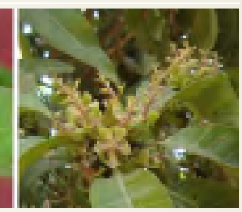
अप्रैल

औसतन 82.2 अंडे देती हैं। अण्डों के समूह सामान्यतः आयताकार आकृति में स्थित होते हैं। इस कीट के अण्डे सफेद रंग के होते हैं जो मध्य शिरा में लगभग आधे धंसे रहते हैं। अंडों का आकार इतना छोटा होता है कि इन्हें देखकर पता लगाना कठिन होता है। लेकिन यदि मध्य शिरा का रंग हल्का या गहरा भूरा हो तो अण्डों की उपस्थिति का संकेत होता है। प्रारंभ में निम्फ बहुत छोटे होते हैं और इनका रंग हल्का पीला होता है। विकसित होने पर ये 1-2 मि.मी. के हो जाते हैं और अण्डे उत्पन्न होने से लगभग 191-211 दिन उपरांत अंडों से निम्फ निकलते हैं। अण्डों से निम्फ के निकलने का क्रम अगस्त माह के उत्तरार्द्ध में प्रारंभ हो जाता है। इनका रंग गहरा पीला से भूरा हो जाता है। निम्फ रेंगकर फूटती हुई कलिकाओं तक पहुँच जाते हैं और उनकी मध्य शिरा के अन्दर घुसकर रस चूँसते हैं जिससे विकसित हो रही कलिकाओं के विकास में बाधा उत्पन्न होती है। कीट के रस चूसने एवं रासायनिक श्राव के प्रभाव से विकासशील कलिकाएँ शंखाकार घुंडी के रूप में अविकसित रह जाती हैं। घुंडियाँ बनने का क्रम सितंबर से दिसंबर माह तक चलता है। निम्फ इन्हीं घुंडियों के अन्दर प्रवेश कर चूसती रहती हैं। कीट के निम्फ अगस्त माह के उत्तरार्ध से फरवरी माह के अन्त तक सक्रिय रहते हैं। इस समयावधि में प्रत्येक निम्फ लगभग 1 माह के अन्तराल पर 6 बार कायान्तरण करता है। फरवरी-मार्च माह में निम्फ घुंडियों के अन्दर ही वयस्क में परिवर्तित हो जाते हैं और मार्च के महीने में बाहर निकलकर अंडे देने का कार्य करते हैं। एक वर्ष में इस कीट का एक जीवन चक्र पूर्ण होता है।

इस कीट के प्रभावशाली नियंत्रण हेतु कार्यों एवं छिड़काव का उचित समय पर किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। कीटनाशकों का छिड़काव यदि कीट की लक्षित अवस्था की उपस्थिति के अनुरूप किया जाता है तो उसका पूर्ण नियंत्रण होता है अन्यथा इस कीट को नियंत्रण में लाना असंभव होता है। इस हेतु अगस्त एवं सितंबर माह में पैदा हो रहे निम्फ द्वारा उत्पन्न प्रकोप को रोकना आवश्यक है। अतः इस समयावकाश में 0.06 प्रतिशत डायमेथोएट (1.0-1.5 मि.ली./लीटर) पानी में घोलकर प्रथम छिड़काव अण्डों से निम्फ निकलने के समय यथा अगस्त के दूसरे सप्ताह तथा दो और छिड़काव अगस्त के अन्त एवं सितंबर में 15 दिनों के अंतर पर करना चाहिए। वयस्क मादा कीट द्वारा अण्डा देने की प्रक्रिया पर नियंत्रण हेतु प्रोफेनोफॉस के 0.2 प्रतिशत (2 मि.ली./ली) घोल का छिड़काव मार्च माह के प्रथम सप्ताह में करना चाहिए। इसके अतिरिक्त अण्डा ग्रस्त पत्तियों (मार्च माह में) एवं घुण्डी ग्रस्त टहनियों (सितम्बर माह में) को तोड़कर जला देने से भी कीट नियंत्रण में सफलता मिलती है।

तुड़ाई उपरांत कुछ उपोष्ण फलों के रोग

ए. के. मिश्र[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

फल मानव स्वास्थ के लिए अनुपम भेंट है। ये विटामिन एवं मिनरल से भरपूर तथा स्वाद में रूचिकर होते हैं। भारत में करीब 88,977 हजार मीट्रिक टन फलों का वार्षिक उत्पादन होता है। किन्तु इसका बड़ा भाग तुड़ाई उपरान्त लगने वाले रोगों के कारण नष्ट हो जाता है। सावधानीपूर्वक तुड़ाई, उचित भंडारण एवं संवहन के नहीं होने से फलों में अनेक प्रकार के रोग लगते हैं। सावधानीपूर्वक तुड़ाई, स्वच्छ वातावरण में भंडारण, गुणवत्तायुक्त पेटीबंदी तथा शीत संवहन किया जाये, तो फलों को तुड़ाई उपरान्त लगने वाले रोगों से बचाया जा सकता है। प्रस्तुत आलेख में आम, अमरूद, पपीता, लीची एवं आँवला में तुड़ाई उपरान्त लगने वाले रोगों की चर्चा की जा रही है। इन रोगों के कारण एवं प्रबंधन की जानकारी बागवानी के लिए लाभकारी होगी।

आम

एन्थ्रेकनोज

रोगकारक - *कॉलिटोट्राइकम ग्लीयोस्पोरिआइडिस (ग्लोमेरेला सिंगुलाटा)*

लक्षण

इसकी शुरुआत गुप्त संक्रमण के रूप में बाग में होती है। भंडारित फलों पर काले धब्बे पड़ जाते हैं। प्रारंभ में ये धब्बे गोल होते हैं जो बाद में बढ़ कर बड़े अनियमिताकार हो जाते हैं। कभी-कभी ये पूरे फल को ढ़क देते हैं। बाद में इन धब्बों में फटन दिखायी देती है और फफूँद फल के अंदर प्रवेश कर फलों को सड़ा देती है। नमी होने पर काले पड़े धब्बों की सतह पर गुलाबी रंग के बीजाणु पनपते हैं। फल के कंधे की तरफ नीचे की ओर धारियाँ पड़ना, काला पड़ना भी इस रोग के लक्षण हैं।

प्रबंधन

रोग की रोकथाम का मुख्य उपाय है कि तुड़ाई के 15 दिनों पूर्व कार्बेन्डाजिम या थायोफनेट मिथाईल (बाविस्टीन या टॉपसिन एम. 0.1 प्रतिशत अर्थात् 1 ग्राम/लीटर) का छिड़काव करना। इससे फलों के गुप्त संक्रमण की रोकथाम होती है। तुड़ाई के उपरांत फलों को गर्म पानी से उपचारित या गर्म पानी के साथ फफूँदीनाशक मिला कर उपचारित करने से भी रोग की बाद में रोकथाम की जा सकती है। यदि फलों को तुड़ाई के बाद केवल 52±1° से.ग्रे. पर 30 मिनट तक उपचारित किया जाये तो रोग की अच्छी रोकथाम होती है। इस अवधि को 15 मिनट तक कम किया जा सकता है यदि गर्म पानी के साथ कार्बेन्डाजिम या थायोफनेट मिथाइल (बाविस्टीन या टॉपसिन एम. 0.05%) मिला कर फलों को उपचारित किया जाए।

स्टेम एन्ड रॉट (ढ़ेपी विगलन रोग)

रोगकारक - *डिप्लोडिया नेटालेन्सिस*

लक्षण

रोग की शुरुआत फल के उस छोर से होती है जहाँ डंठल लगी होती है। डंठल लगे भाग के पास से फल पर भूरा गोलाकार धब्बा बनना शुरू होकर फल के निचले हिस्से में पहुँचते हुए पूरे फल को भूरा, फिर काले रंग का कर देता है। इस सड़न की प्रक्रिया इतनी तेजी से होती है कि 2-3 दिनों में पूरा फल सड़ जाता है। जब फल कहीं से चोट खा जाये या फिर कट-फट जाये तो ऐसी स्थिति में इस रोग की शुरुआत डंडी से न होकर कहीं और से भी हो सकती है। पके हुए फलों पर ही यह रोग देखा गया है।

प्रबंधन

तुड़ाई से 15 दिनों पहले कार्बेन्डाजिम या थायोफेनेट

[1]प्रधान वैज्ञानिक

मिथाईल (बाविस्टीन या टॉपसिन एम. 0.1%) का छिड़काव, तुड़ाई के उपरान्त इस रोग से मुक्ति दिलाता है।

आमतौर पर इस रोग की शुरुआत डंठल के पास से फल पर शुरू होती है। अतः यदि डंठल के साथ फलों को तोड़ा जाये तो रोग को रोका जा सकता है। यदि डंठल के साथ फल नहीं तोड़ा गया हो तो उस स्थान पर तुड़ाई के ठीक बाद मोम लगा देना लाभदायक होता है जिससे रोगकारक फल में प्रवेश न कर पाये।

फलों को 0.05 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम (बाविस्टीन 0.05%) मिले गरम पानी 52±1° सें.ग्रे. में 5 मिनट के लिए डुबोने के बाद भंडारित करने से भी इस रोग की रोकथाम की जा सकती है।

ब्लैक रॉट (काली सड़न)

रोगकारक – *एस्परजिलस नाइजर*

लक्षण

फलों पर पीले, हल्के सलेटी रंग के अनियमित आकार के धब्बे बनते हैं, जो बाद में काले रंग के हो जाते हैं। काले रंग के धब्बों के ऊपर फफूँद के बीजाणु दिखायी देते हैं। धब्बों के नीचे और आस-पास के हिस्से गल जाते हैं जिससे दुर्गन्ध आने लगती है। यह गलन की प्रक्रिया बहुत तेजी से बढ़ती है किन्तु सड़न के लिए फल का कटा-फटा होना या चोट लगा होना आवश्यक है। फल की डंडी लगे स्थान से भी सड़न आरंभ हो सकती है क्योंकि वहाँ उत्तक खुली होती है और फफूँद खुली सतह से अन्दर प्रवेश कर जाती है।

प्रबंधन

फलों की तुड़ाई के समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। फलों पर किसी भी तरह की चोट न पहुँचे। चोट लगने से एस्परजिलस फफूँद फलों में आसानी से प्रवेश कर जाती है।

- फलों को जमीन पर नहीं गिरने देना चाहिए तथा फलों पर मिट्टी नहीं लगने देना चाहिए।
- फलों की तुड़ाई एवं भंडारण सावधानीपूर्वक स्वच्छ वातावरण में करना चाहिए।
- रोग से बचाने के लिए फलों को 0.05 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम मिले गरम पानी 52±1° से. में 5 मिनट के लिए डुबो कर उपचारित कर भंडारित करना चाहिए।

तुड़ाई उपरान्त आम के फलों को रोग से बचाने संबंधी सावधानियाँ

आम के फलों में तुड़ाई उपरान्त अनेक रोग परिवहन तथा भण्डारण के समय लग सकते हैं। इसके लिए निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए।

- फलों की तुड़ाई उपरान्त सावधानीपूर्वक करनी चाहिए जिससे फलों में किसी प्रकार की चोट न लगे।
- फलों को करीब 5 सें.मी. लम्बी डंडियों सहित तोड़ना चाहिए।
- फलों को पैकिंग के पहले चेप निकलने के लिए उल्टा रख कर चेप निकाल देनी चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि चेप फलों पर न लगे।
- बाग में तुड़ाई के बाद फलों को मिट्टी के सम्पर्क से बचाना चाहिए। इसके लिए साफ पालीथीन बाग में बिछा कर फलों को इकट्ठा किया जा सकता है।
- फलों को नयी पेटियों में ही भण्डारित करना चाहिए। ज्यादा उपयुक्त यह रहेगा कि गत्ते की नयी पेटियों का इस्तेमाल किया जाये।
- पेटियों में लगाने वाले लाइनिंग कागज सीले तथा पुराने नहीं होने चाहिए। ठीक से सूखे तथा नये कागज का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है।
- पेटियों में उपर तथा नीचे की तह को गद्देदार रखना चाहिए जिससे फलों में परिवहन के दौरान किसी प्रकार की चोट न लगे।
- पेटियों को सावधानीपूर्वक उतारना चढ़ाना चाहिए। उन्हें फेंकना नहीं चाहिए।
- तोड़े हुए आमों में एक भी आम ऐसा पेटी में नहीं रखना चहिए जो जरा सा भी रोग ग्रस्त हो। इससे अन्य आम संक्रमित हो जाते हैं।

यदि इन आम सावधानियों को अपनाया जाये तो भण्डारण के समय फल लगने वाले रोगों से फलों को आसानी से बचाया जा सकता है।

अमरूद

एन्थ्रेकनोज

रोगकारक- *ग्लीओस्पोरियम साइडी/ग्लोमेरेला साइडी, कोलेटोट्राइकम साइडी*

उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं कर्नाटक में यह रोग एक प्रमुख समस्या है। इस रोग के द्वारा अमरूद में फलों के धब्बे देखे जाते हैं।

फल का संक्रमण

फल और पत्तियों का संक्रमण आमतौर पर बरसात के महीने में देखा जाता है। पहले कच्चे फलों पर सुई की नोंक के बराबर धब्बे दिखायी पड़ते हैं जो धीरे-धीरे बढ़ जाते हैं। ये धब्बे गहरे भूरे रंग के, धंसे हुए, गोलाकार होते हैं और इन धब्बों के बीच में छोटी, काली पीठिकाएं बनती हैं जिनमें आर्द्रता बढ़ने पर अधिक मात्रा में बीजाणु बनते हैं। ऐसे छोटे धब्बे आपस में मिल कर बड़े धब्बे बनाते हैं। फलों का संक्रमित भाग कार्कनुमा कड़ा हो जाता है और संक्रमण बढ़ने पर इनमें दरारें पड़ जाती हैं। संक्रमित पके फलों में ऊत्तक का मृदुकरण होता है और धब्बे बढ़ कर 10-20 मि.मी. के हो जाते हैं। परिपक्व (तैयार) फलों पर संक्रमण बहुत तेजी से फैलता है जबकि छोटे फल संक्रमित नहीं होते हैं।

रोग प्रबंधन

कम्पेनियन (0.2%), डाइफोलेटान (0.3%) या डाइथेन जेड-78 (0.2%) का मासिक छिड़काव भी रोग नियंत्रण में उपयोगी पाया गया है। तुड़ाई उपरान्त फलों को 20 मिनट के लिए 500 पी.पी.एम. (500 मि.ग्रा./ली.) टेट्रासाइक्लीन से उपचारित करना प्रभावी पाया गया है।

फाइटोफ्थोरा फल विगलन रोग

रोगकारक - *फाइटोफ्थोरा पैरासाइटिका, फाइटोफ्थोरा निकोसियाना किस्म पैरासाइटिका*

फाइटोफ्थोरा पैरासाइटिका द्वारा होने वाला यह रोग पहली बार 1929 में पूसा, बिहार में पाया गया। यह रोग बरसात में जुलाई-सितम्बर माह में दिखायी देता है। मैसूर, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान और महाराष्ट्र में यह रोग काफी हानिकारक पाया गया है। कुछ किस्में, जैसे इलाहाबाद सफेदा, बनारस, बंगलौर लोकल, रेड फ्लेश्ड और सीडलेस, रोग के प्रति संवेदनशील हैं। जुलाई 1975 में पंजाब के लुधियाना में यह रोग इलाहाबाद सफेदा, एप्पल ग्वावा, रेड फ्लेश्ड और पिंक फ्लेश्ड किस्मों पर देखा गया।

रोग के लक्षण

ऐसे फल जो भूमि पर गिरे होते हैं या भूमि के पास लटके होते हैं या फिर भण्डारण के लिए रखे जाते हैं, रोग से सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। इस रोग की शुरुआत डंठल के विपरीत सिरे से होती है। फल जैसे-जैसे बढ़ता है, सफेद कवक जाल उसकी सतह पर बढ़ता है और आर्द्रता बढ़ने पर 3-4 दिनों में पूरी सतह पर फैल जाता है। भूमि की सतह के पास जो फल होते हैं और घनी पत्तियों से ढ़के होते हैं, वे नमी बढ़ने पर अधिक प्रभावित होते हैं। सफेद कवक जाल जहाँ फल की सतह पर बढ़वार करता है, वहाँ खाल मृदु पड़ कर हल्की भूरी से गहरी भूरी हो जाती है और विशेष प्रकार की दुर्गन्ध छोड़ती है। फलों का स्वाभाविक आकार तब तक बना रहता है जब तक मृत-जीवी फलों में घुस कर उसको सड़ा नहीं देती। ऐसे फल या तो पेड़ पर लटके रहते हैं या फिर गिर जाते हैं। जब रोग का प्रभाव छोटे या कच्चे फलों पर होता है तो वे सिकुड़ कर गन्दे भूरे से गहरे भूरे, कड़े और कुरूप हो कर सूख कर गिर जाते हैं।

रोग प्रबंधन

रोग की रोकथाम के लिए डाईथेन जेड-78 (0.2%) और ऑरियोफन्जिन 10 पी.पी.एम. (10 मि.ग्रा./ली.) का छिड़काव भी प्रभावी पाया गया है, जबकि कॉपर आक्सीक्लोराइड को फलों के लिए हानिकारक बताया गया है।

स्टाइलर एन्ड राट

रोगकारक - *फोमोप्सिस साइडी*

यह रोग लखनऊ और बैंगलौर के आस-पास के क्षेत्रों में देखा गया है। फलों पर किसी प्रकार की चोट से रोग तेजी से फैलता है।

रोग के लक्षण

इस रोग में डंठल के विपरीत सिरे (स्टाइलर एन्ड) पर रंग में परिवर्तन होता है और फल बढ़ कर भूरे से गाढ़े भूरे रंग के हो जाते हैं तथा संक्रमित भाग नरम हो जाता है। ऊपर की सतह के अलावा फल के अन्दर का गूदा भी प्रभावित होता है, रंग सफेद की बजाए भूरा पड़ जाता है तथा गूदा मुलायम हो जाता है। संक्रमण बढ़ने पर भीतरी ऊत्तक के अव्यवस्थित होने से फल सिकुड़ जाते हैं और इन फलों की वाह्य त्वचा की सिकुड़न गोलाकर धारियों के रूप में दिखायी पड़ती है। बाद में पूरा फल प्रभावित हो जाता है और सतह पर पिक्नीडिया विकसित होते हैं। रोग की सभी अवस्थाओं में प्रभावित फलों पर अन्तर-कोशिकीय कवक जाल फैल जाता है।

रोग प्रबंधन

फल के परिपक्व होने की अवस्था में बाविस्टिन या टॉपसिन (0.1%) का 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव कर रोग को नियंत्रित किया जा सकता है, परन्तु यह ध्यान रखना आवश्यक है कि तुड़ाई से 15 दिनों पहले तक की अवधि के बीच कोई भी छिड़काव नहीं किया जाना चाहिए।

पपीता

एन्थ्रेक्नोज

रोगकारक - *कोलेटोट्राइकम कैरिकी, सी. पपायी, सी. ग्लियोस्पोरियम, सी. कैप्सिकी, सी. ऐकुटेटम* एवं *ग्लियोस्पोरियम कैरिकी, जी. पपायी*

यह पपीते के फलों का एक प्रमुख रोग है, जिससे भारी क्षति होती है।

लक्षण

सबसे पहले भूरे रंग के धब्बे ऊपरी सतह पर उत्पन्न होते हैं जो बाद में गोल हो जाते हैं। ये हल्के धंसे हुये क्षेत्र के रूप में 1-3 सें.मी. व्यास के होते हैं। सामान्यतः ये जलसिक्त होते हैं। धीरे-धीरे ये क्षेत्र आपस में जुड़ जाते हैं और इसके किनारों पर हल्के कवक जाल बनाते हैं। नमी की स्थिति में पुराने धब्बों पर गुलाबी रंग के घेरे में बीजाणु बनते हैं। फल बाद में गन्दे भूरे रंग का हो कर सड़ जाता है। पपीता फल विगलन, तुड़ाई पूर्व भी फलों पर होता है, क्योंकि इसके रोगकारक पौधों के अन्य भागों जैसे तने और पर्णवृन्त पर भी पाये जाते हैं। छोटे फलों के विकास की अवस्था में संक्रमण होने से फल सूख कर विरूपित हो जाते हैं और परिपक्व होने पर मृदु विगलन करते हैं। पपीते का दूध फफूँद के लिए प्रतिरोधी होता है। बहुत छोटे फलों (5-10 दिनों के फल) पर होने वाले लक्षण में फलों में सफेद रंग की कवक पूरी सतह को ढ़क देती है जबकि इससे थोड़े बड़े फलों पर केले के सिगार एण्ड रोग की तरह के लक्षण देखे जा सकते हैं। फलों का प्रभावित भाग जले हुए सिगार जैसा झुलस जाता है और आधे कटे फल जैसा लक्षण दिखायी पड़ता है। प्रभावित भाग पर पहले सफेद रंग के बीजाणु की संकेन्द्री वलय दिखायी देती हैं। बाद में इसका रंग बदल कर गुलाबी और फिर गाढ़ा और अन्त में काले रंग का हो जाता है। *सी. कैप्सिकी* अपरिपक्व फलों के तना शीर्ष पर विगलन उत्पन्न करता है। वहाँ फलों पर जलसिक्त गाढ़े रंग के धब्बे उत्पन्न होते हैं जिसमें बाद में सड़न सी दिखती है और अन्त में अपरिपक्व फल गिर जाते हैं। *सी. एक्यूटेटम* डंठल के विपरीत छोर पर विगलन उत्पन्न करता है।

फोमॉप्सिस फल विगलन

रोगकारक - *फोमॉप्सिस कैरिकी पपायी*

लक्षण

यह रोग फलों पर जलसिक्त धब्बों के रूप में उत्पन्न होता है जो बाद में आकार में बढ़ते हैं। प्रभावित भाग मृदु और पिलपिला हो जाता है और मृदु विगलन के लक्षण दिखाता है। विगलित भाग गहरे भूरे रंग से काले रंग का हो जाता है और बाद में इसमें हल्की दरार पड़ जाती है। रोगग्रस्त भाग के चारों ओर का क्षेत्र जलसिक्त हो जाता है और विगलित भाग उठा हुआ तथा सफेद रंग का हो जाता है। फल अपने

वृद्धि की सभी अवस्थाओं में (पकने तक) इससे संक्रमित होता है।

रोग प्रबंधन

- फलों पर बेनलेट, डाइफोलेटान और डाइथेन एम-45 का छिड़काव रोग की रोकथाम में प्रभावी होता है।

लीची

लीची में फल विगलन रोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आमतौर पर अनेकों फफूँद द्वारा फल विगलन होता है। प्रसाद और बिलग्रामी (1975) ने भारत में बहुत से फल विगलन रोगों का विवरण दिया है।

बोटरीडिप्लोडिया थियोब्रोमी सड़न

इस रोग में फल के छिलके पर जलसिक्त भूरा रंग लिए हुए धब्बे बनते हैं। यह अनियमिताकार रूप में फल के दोनों सिरों की तरफ फैलते हैं लेकिन वृन्त की ओर अधिक फैलते हैं। सामान्यतः गूदे का विगलन छिलके की अपेक्षा अधिक तेजी से होता है। नम परिस्थितियों में हल्की सलेटी रूई जैसी कवक संक्रमित क्षेत्र में देखी जा सकती है। बाद में छोटी-छोटी पिक्नीडिया इस पर दिखायी देती हैं।

कोलिटोट्राइकम ग्लीयोस्पोराइडिस सड़न

रोग के प्रारम्भ में छोटे, गोल, थोड़े धंसे हुए जलसिक्त धब्बे बनते हैं जो बाद में धीरे-धीरे मिल कर बड़े धब्बे बनाते हैं और अनियमित आकार के हो जाते हैं। 4 या 6 दिनों के बाद गहरे रंग की छोटे बिन्दु जैसी संरचना एसरबुलस संक्रमित भाग पर बन जाती हैं। एसरबुलाई गहरे बहुकोशिकीय सीटी बनाती है।

लीची में फल विगलन का प्रबंधन

- फलों का पूर्व उपचार ऑरियोफंजीन कवकनाशी 500 पी.पी.एम. द्वारा काफी प्रभावशाली होता है।
- तुड़ाई उपरान्त विगलन *एस्परजिलस* और *राइजोपस* के कारण भी होता है और इससे लीची के फल के उपर भूरे रंग के धब्बे प्रकट हो जाते हैं। फलों को सबसे पहले पानी में कमरे में तापक्रम पर डुबाते हैं और इसके बाद गर्म बेनोमिल (0.05%) में 2 से 16 मिनट के लिए डुबोते हैं। इन फलों को हवा में सूखाते हैं और पी.वी.सी. थैले में बन्द कर देते हैं।
- *कालिटोट्रइकम* फल सड़न को 75 और 300 गामा विकिरण द्वारा भी नियंत्रित किया जा सकता है। इसका फल की गुणवत्ता पर कोई विपरीत असर नहीं पड़ता है फलों को 5° सें.ग्रे. पर तीन सप्ताह तक भण्डारित किया जाता है।
- लीची के फलों को गर्म (48°सें.ग्रे.) बेनोमिल (0.1%) में 1-3 मिनट या 50° सें.ग्रे. पर 1-2 मिनट तक डुबो कर भण्डारित करने से लीची के फल सड़न की रोकथाम होती है। इससे लीची के फलों की त्वचा को कम नुकसान होता है। एक अलग अध्ययन में यह भी पाया गया है कि लीची के फलों को 52° सें.ग्रे. के पानी में डुबोकर भण्डारित किया जाए तो लीची के फलों की *कालिटोट्राइकम* तथा फ्यूजेरियम सड़न को रोका जा सकता है।
- लीची के फलों की सड़न को 0.125-0.25 ग्रा./ ली. प्रोक्लोरेज में कमरे के तापक्रम (25° सें.ग्रे.) पर 5 सेकण्ड से 5 मिनट तक डुबो कर उपचारित करने से सड़न को रोका जा सकता है। यह नियंत्रण गर्म बेनोमिल या ग्वाजाटिन के समतुल्य है। एक अलग अध्ययन में यह भी पाया गया कि फल की सड़न को सल्फर डाइआक्साइड + प्रोक्लोरेज 0.02% + एयरफ्रेश थैलों में भण्डारित करने से रोका जा सकता है।
- दक्षिणी अफ्रीका में फलों की सड़न को विशेषकर लीची की प्रजाति मारीसस को नस्टर (फ्लूसीलाजोल); पंच सी (250 ग्रा. फ्लूसीलाजोल+125 ग्रा. कार्बेन्डाजिम/ली.) पंच×(125 ग्रा. फ्लूसीलाज़ोल+250 ग्रा. कार्बेन्डाजिम/ली.) से उपचारित कर नियंत्रित किया जा सकता है।
- सोडियम मेटाबाइसल्फाइट में भिंगोए हुए कागज के टुकड़ों को लीची के थैले में किनारे पर रखने पर सत् प्रतिशत सड़न को रोका जा सकता है तथा ऐसे फलों में मात्र 2 प्रतिशत भूरापन विकसित होता है।

तुड़ाई उपरांत कुछ उपोष्ण फलों के रोग

आम का एन्थ्रेकनोज

आम का स्टेम एन्ड रॉट (ढ़ेपी विगलन रोग)

आम का ब्लैक रॉट (काली सड़न)

अमरूद का एन्थ्रेकनोज

अमरूद का फाइटोफ्थोरा फल विगलन रोग

अमरूद का स्टाइलर एन्ड रॉट

पपीते का एन्थ्रेक्नोज

पपीते का फोमॉप्सिस फल विगलन

लीची का *बोटरीडिप्लोडिया थियोब्रोमी* सड़न

आँवले की नीली फफूँद

आँवले का एन्थ्रेकनोज

- फलों के भूरेपन तथा सड़न को अच्छी तरह से नियंत्रित किया जा सकता है, यदि फलों को 1% सेम्परफ्रेश (एक सुक्रोज इस्टर प्रिपरेशन) + 600 पी.पी.एम. प्रोक्लोरेज में डुबो कर भण्डारित किया जाये। साथ में एक फोम का टुकड़ा तथा सोडियम मेटा बाइसल्फाइड में भिंगोए कागज के टुकड़े को थैले में रखा जा सकता है।

आँवला

नीली फफूँद

रोगकारक – *पेनीसीलियम सिट्रिनम*

यह रोग आँवले का एक ऐसा रोग है जो सभी आँवला उगाने वाले क्षेत्रों में आम है।

लक्षण

आरम्भ में फलों पर भूरे जलसिक्त धब्बे बनते हैं। रोग के बढ़ने पर फलों पर फफूँद के तीन प्रकार के रंग एक के बाद एक दिखायी देते हैं। पहले चमकीला पीला रंग, फिर भूरा रंग तथा अंत में हरा नीला रंग विकसित होता है जो सतह पर उभरती फफूँद के कारण होता है। फल की सतह पर पीली बूँदें भी दिखायी देती हैं। फलों से बुरी बदबू निकलती है। पूरा फल बाद में दानेदार नीली हरी फफूँद से ढ़का नज़र आता है।

प्रबंधन

- फलों की तुड़ाई अत्यन्त सावधानीपूर्वक करनी चाहिए जिससे उसमें किसी प्रकार की चोट न लगे। चोट लगने से फलों पर नीली फफूँद का प्रकोप होने की संभावना शत-प्रतिशत रहती है।
- भण्डारण में साफ-सफाई का पूरा ध्यान रखना चाहिए तथा भंडारण स्थल को NCl_3 या ओजोन गैस से शोधित करना चाहिए।
- फलों को बोरेक्स या नमक से उपचारित करने से रोग को रोका जा सकता है।
- फलों को कार्बेन्डाजिम या थायोफनेट मिथाइल 0.1 प्रतिशत से उपचारित कर भी रोग नियंत्रित किया जा सकता है।
- फलों के ऊपर मेंथा के तेल के हल्के लेप से भी रोग को रोका जा सकता है।

एन्थ्रेकनोज

रोगकारक – *कालिटोट्राइकम ग्लीयोस्पोराइडिस = ग्लोमेरेला सिंगूलाटा*

एन्थ्रेकनोज, आँवले की पत्तियों एवं फलों पर अगस्त-सितम्बर माह में दिखायी देता है। सर्वप्रथम इसे उदयपुर में देखा गया।

लक्षण

फलों पर धंसे हुए भूरे धब्बे बनते हैं, जिनके मध्य में पिन के सिरे से गोलाई में गहरे काले उभार दिखाई देते हैं। धब्बे विभिन्न आकार एवं साइज़ के बनते हैं। अधिक नमी होने पर धब्बों से बीजाणु अधिक मात्रा में निकलते हैं, साथ ही फल सिकुड़े से नज़र आते हैं और फिर सड़ जाते हैं।

आँवला फल सड़न को रोकने के सामान्य तरीके

- फल तोड़ने के 15 दिनों पूर्व 0.1 प्रतिशत कार्बेन्डाझिम का छिड़काव करना चाहिए।
- फल तुड़ाई पूरी सावधानी से करनी चाहिए, जिससे फलों में किसी प्रकार की चोट न लगे।
- फलों को स्वच्छ पात्रों में भण्डारित करना चाहिए।
- फलों के भण्डारण तथा परिवहन के समय पूर्ण स्वच्छता बरतनी चाहिए।
- भण्डारण स्थान स्वच्छ होना चाहिए तथा उसे NCl_3 या ओजोन से उपचारित किया जाना चाहिए।
- फलों का उपचार बोरेक्स या नमक से करना चाहिए जिससे रोग का प्रकोप न हो।

ट्राइकोडर्मा द्वारा पादप रोगों का जैविक नियंत्रण

सोमेश्वर भगत[2], इसरार अहमद[1], अजंता बिराह[2], अरविंद कुमार त्रिपाठी[3], नसीम अहमद[2] एवं रमेश चन्द्र श्रीवास्तव[4]

[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

[2]राष्ट्रीय समेकित नाशी जीव प्रबंधन अनुसंधान केन्द्र, नयी दिल्ली

[3]केन्द्रीय द्वीपीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह

[4]भारतीय जल प्रबंधन संस्थान, भुवनेश्वर

जैविक नियंत्रण

किसी नाशीजीव को किसी अन्य जीव के द्वारा रोकना, उनको प्रचुर मात्रा में समुचित जगह पर छोड़ना एवं बढ़ावा देना जैविक नियंत्रण कहलाता है। जैविक नियंत्रण एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसमें हम केवल अन्य जीव के बल को बढ़ावा देते हैं। वास्तव में, इसका प्रयोग छोटे एवं मझोले किसानों के लिए लाभदायक है जो प्रशिक्षण से वंचित है। आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण आधुनिक कृषि जगत की तकनीकियों को अपनाने में भी ऐसे किसान विफल हैं। इस प्रणाली में उपयोगी सूक्ष्म जीव फसलों के वातावरण को बदलते हैं या बदलने में मदद करते हैं तथा पेड़-पौधों के स्वास्थ्य और शारीरिक बल को बढ़ाने में भी सहायक होते हैं। इसके अन्तर्गत जो जीव बीमारी पैदा करने वाले रोगाणुओं के वृद्धि और प्रक्रिया को कम करते हैं तथा बीमारी फैलने से रोकते हैं, उन्हें जैविक कारक कहा जाता है। ट्राइकोडर्मा प्रजाति, ग्लाइयोक्लेडियम प्रजाति, बैसिलस सबटिलिस, सुडोमोनास फ्लोरोसेन्स आदि ऐसे ही कुछ जैविक कारक हैं। यहाँ पर ट्राइकोडर्मा प्रजाति पर अधिक महत्व दिया गया है क्योंकि यह एक सर्वव्यापक फफूँद है जिसकी पहचान स्थानीय ट्राइकोडर्मा प्रजाति के रूप में की गयी है। इससे मिट्टी एवं हवा जनित बीमारियों को सफलतापूर्वक दूर किया जा सकता है।

ट्राइकोडर्मा

ट्राइकोडर्मा एक सर्वव्यापी फफूँद है जो अलग-अलग वातावरण में पाया जाता है। वातावरण के साथ-साथ ट्राइकोडर्मा प्रजाति के आकार-प्रकार में बदलाव देखा गया है। ज्यादातर ट्राइकोडर्मा प्रजाति में सेक्सुअल स्टेज नहीं होता है जबकि ये एसेक्सुअल स्पोर पैदा करते हैं जिन्हें कोनिडिया या फायलोस्पोर्स कहा जाता है। ये बोतल के आकार के कोनिडियोस्पोर्स यानी फायलोस्पोर्स से अलग होकर निकलते हैं जो आन्तरिक रूप से मजबूत होते हैं। यह क्लेमाइडोस्पोर्स भी पैदा करता है। ये क्लेमाइडोस्पोर्स मोटी परत की कोशिका होती है जो तन्तु में तब्दील हो जाती है। ये हल्के हरे से लेकर गाढ़े रंग के समूहों में देखे जाते हैं।

ट्राइकोडर्मा तैयार करने की विधि

मिट्टी से अलगाव के बाद इन जीवों को वृद्धि माध्यम में सब-कल्चर कर इनके अलग-अलग प्रजातियों की पहचान की जाती है। बाई में इनके अधिक प्रभावशाली नस्लों का पता लगाया जाता है और उसे प्रयोग में लाने के लिए अलग-अलग रोगाणुओं के विरूद्ध जाँच की जाती है। देश तथा विदेशों में भी यह देखा गया है कि अर्द्ध कृत्रिम माध्यम में ट्राइकोडर्मा प्रजाति अच्छी तरह बढ़ती है। इसीलिए रसा संवर्धन माध्यम में इन्हें प्रयोगशाला में पहले दो सप्ताह के लिए संवर्धित किया जाता है और फिर हरे रंग के कोनिडिया और हाइफल मैट को अच्छी तरह मिक्सी में मिलाया जाता है जिससे यह होमोजेनाई घोल का रूप धारण कर लेता है। इन घोलों को उपयुक्त सबस्ट्रेट (धान, गेंहूँ की भूसी, अरहर दाल की छिलका, अरूई का कचरा, मक्के का दाना एवं पाउडर, टॉल्क पाउडर आदि) में 1:2 के अनुपात में अच्छी तरह मिलाकर

[1]वैज्ञानिक, [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक, [3]वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी एवं [4]प्रधान वैज्ञानिक

पैकेट तैयार कर ली जाती है। इस प्रतिपादित उत्पाद को उपयुक्त मात्रा में मिट्टी में मिला लिया जाता है और इसमें ही फसल उगायी जाती है। ऐसा करने से जब बीजों में जड़े निकलती हैं तो रोगाणुओं के पहले ही ये जैव नियत्रंक जड़ों को घेर लेते हैं तथा रोगाणुओं से लड़ने के साथ-साथ पौधों की वृद्धि में भी सहयोग करते हैं।

रोगों के विरूद्ध ट्राइकोडर्मा के कार्य करने की प्रक्रिया

ट्राइकोडर्मा प्रजाति तथा अन्य जैविक कारक निम्नलिखित विधियों से बीमारी पैदा करने वाले रोगाणुओं को बढ़ने से रोकते हैं या मार देते हैं या पौधों की जड़ों तक पहुँचकर रोगाणुओं से लड़ने में सहायक होते हैं।

ऐंटीबायोसिस के द्वारा

इस विधि के अंतर्गत एक जीव दूसरे जीव से उत्पन्न होने वाले एन्जाइम, टाइल सब्सटेनसेस या दूसरे जहरीले पदार्थों से पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। किन्तु ये सभी पदार्थ जिनसे उत्पन्न होते हैं उन पर असर नहीं डालते हैं।

प्रतिजैविकता के द्वारा

रोग कारकों द्वारा श्रावित लैक्टिन (ग्लाइको प्रोटीन्स) को पहचान कर ट्राइकोडर्मा उनके संसर्ग में आता है। तत्पश्चात वाह्यकोशिय श्रावित उत्सेचक (एंजाइम) जैसे कि बीटा 1,3 ग्लूकानेज, काइटीनेज, सेलुलेज, प्रोटिएज आदि का श्राव करती है जिसका विपरीत असर रोग कारक के विकास एवं बीजोत्पादन पर होता है।

प्रतिस्पर्धा के द्वारा

ट्राइकोडर्मा शीघ्र विकास करने तथा प्रचुर मात्रा में बीजाणु उत्पन्न करने वाली परोपजीवी कवक है जिससे यह उपलब्ध भोज्य पदार्थों का शीघ्र सेवन करने के लिए उपलब्ध जगहों में फैल जाती है। इस तरह रोगकारकों के लिए इनसे प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हो जाती है।

रोग प्रतिरोधिता के द्वारा

इस प्रक्रिया के अंतर्गत अधिकांश पौधे जीवाणु (ट्राइकोडर्मा) के संपर्क में आकर उनमें पी.आर. प्रोटीन, सेलिसीलिक अम्ल, परॉक्सीडेज आदि को बनाने की शुरूआत करते हैं जिसके कारण उनमें रोग की प्रतिरोधी क्षमता आ जाती है।

उत्काधार रसायन के द्वारा

ट्राइकोडर्मा पानी में घुलनशील उत्काधार उत्पन्न करता है जिससे रोग कारकों को मिट्टी से लौह तत्व मिलना बंद हो जाता है। नतीजतन उनकी कार्यशैली पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। साथ-ही-साथ बहुत सारे पोषक तत्वों को मिट्टी में प्राप्य अवस्था में परिवर्तित करते हैं जिससे पौधों को अवशोषित करने में आसानी होती है।

कवक परजीविता के द्वारा

ट्राइकोडर्मा भूमि तथा बीज दोनों में पनपने वाले रोग कारक कवकों जैसे पीथियम, राइजोक्टोनिया, फ्यूजेरियम, स्क्लेरोसीयम आदि की पेशी तन्तुओं में प्रवेश कर उनको मार देते हैं।

ट्राइकोडर्मा का प्रयोग

- बीजों, जड़ों तथा कंदो को उपचारित करना।
- पौधों को उपचारित करना।
- पौधशाला की मिट्टी, मुख्य खेत की मिट्टी तथा कम्पोस्ट को उपचारित करना।
- खड़ी फसल पर छिड़काव करना।

बीजों, जड़ों तथा कंदों को उपचारित करना

अधिकतर फसलों में रोग उत्पन्न करने वाले कवक तथा जीवाणु बीजों में ही पनपते रहते हैं। ये रोगकारक टमाटर, मिर्च, बैंगन में लगने वाले आर्द्र पतन (डैंपिंग आफ), गलन आदि रोग। बीजों के उगने के साथ ही रोग उत्पन्न करते है। अतः जरूरी है कि इनकी बुआई के पूर्व इन्हें उपचारित किया जाये।

इनकी रोकथाम के लिए *ट्राइकोडर्मा हार्जियानम* या *ट्राइकोडर्मा विरडी* आदि के 4 से 10 ग्राम पाउडर को पानी

में घोल लें। इसके बीज को उस घोल में डालें जिससे पूरा बीज अच्छी तरह ट्राइकोडर्मा पाउडर द्वारा उपचारित हो जाये। ध्यान रहे पानी की उतनी ही मात्रा रखें जिससे बीज के उपचार के बाद घोल नहीं बचे। चिकने बीजों जैसे मटर, अरहर, सोयाबीन आदि के उपचार के लिए घोल में कोई भी चिपकने वाला पदार्थ मिलाते हैं (जैसे गोंद आदि) जिससे ट्राइकोडर्मा पाउडर बीज से अच्छी तरह चिपक जाये। इसके बाद उपचारित बीज को रात भर छाया में सुखा कर देते हैं। इसके अगले दिन उसकी बुआई करते हैं।

आलू, अदरक, हल्दी, बेला आदि की कन्द तथा गांठो की बीज के रूप में प्रयोग करते हैं। उनको उपचारित करने के लिए 1 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा पाउडर को 100 लीटर पानी में घोल बनाकर 30 मिनट के लिए घोल में डुबाकर रखने के पश्चात छांव में सुखाकर फिर बुआई करते हैं।

पौधों को उपचारित करना

इसके लिए पौधशाला में उगाये गये पौधों को खेत में लगाने के पहले उनकी जड़ों को ट्राइकोडर्मा के घोल में 30 मिनट तक डुबोकर रखने के बाद ही रोपण करते हैं। इसमें 100 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर को 10 लीटर पानी में उपयोग में लाते हैं।

पौधशाला, मुख्य खेत की मिट्टी तथा कम्पोस्ट को उपचारित करना

पौधशाला की जमीन पर 250 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर को 20 कि.ग्रा. अच्छे से सड़ी गोबर की खाद में मिश्रिण कर उसे 400 वर्ग मीटर जमीन पर छिड़क कर उसे मिट्टी में मिला देते हैं। फिर उसमें बीजों की बुआई करते हैं। इसी प्रकार मुख्य खेत में पौधों को रोपण के पहले 1 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा पाउडर को 100 कि.ग्रा. गोबर खाद में मिलाकर भूमि को उपचारित कर लेते हैं। पौधशाला में जड़ तथा तना बिगलन, रोग से पौधे या तो मर जाते हैं या फिर उनकी संख्या में कमी आती है तथा पौधों की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। अतः पौधों में आने वाली रोगों के बचाव के लिए 250 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर को 50 लीटर पानी में घोल बनाकर पौधशाला की मिट्टी पर 3 लीटर प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से छिड़काव किया जाता है।

खड़ी फसल पर छिड़काव करना

इसके लिए ट्राइकोडर्मा पाउडर को 100 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी में घोल बनाकर रोग के लगने के पहले या साथ-ही-साथ 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करते हैं। अतः किसान भाईयों को सलाह दी जाती है कि रासायनिक दवाओं का प्रयोग न कर ट्राइकोडर्मा के उपयोग से खेती के खर्च में कमी, अधिक उत्पादन, अच्छी गुणवत्ता तथा अधिक मुनाफा प्राप्त कर सकते हैं।

रश्मिरथी

युधिष्ठिर! भूलिये, विकराल था वह, विपक्षी था, हमारा काल था वह।
अहा! वह शील में कितना विनत था? दया में, धर्म में कैसा निरत था!

समझ कर द्रोण मन में भक्ति भरिये, पितामह की तरह सम्मान करिये।
मनुजता का नया नेता उठा है। जगत से ज्योति का जेता उठा है।

- रामधारी सिंह दिनकर

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियाँ एवं प्रदत्त सेवाएँ

बरसाती लाल[1], सुभाष चन्द्र[2], हरीश चन्द्र वर्मा[3] एवं अरविन्द कुमार[4]

[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान की स्थापना4 सितम्बर, 1972 को भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बंग्लुरु के तत्वावधान में केन्द्रीय आम अनुसंधान केन्द्र के नाम से की गयी थी। 1 जून, 1984 को आम अनुसंधान केन्द्र का उन्नयन कर इसे केन्द्रीय उत्तर मैदानी उद्यान संस्थान के रूप में पूर्ण संस्थान का दर्जा दिया गया। संस्थान का नाम 14 जून 1995 को बदलकर केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान कर दिया गया। संस्थान अधिदेशित उपोष्ण फलों के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान के कार्य द्वारा राष्ट्र की सेवा कर रहा है। संस्थान द्वारा उपोष्ण फलों के उत्पादन, सुरक्षा एवं तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन विषयों पर विभिन्न तकनीकों का विकास किया गया है जिनको अंगीकृत कर बागवान लाभान्वित हो रहे हैं। संस्थान द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियों एवं प्रदत्त सेवाओं का विवरण निम्नलिखित है।

गुणवत्तायुक्त पौध सामग्री की आपूर्ति

उपोष्ण फलों के उत्पादन में गुणवत्तायुक्त पौध सामग्री की अहम भूमिका होती है। अगर पौध सामग्री असली तथा कीट व्याधियों से मुक्त हो तो आधी खेती अपने आप ही पूरी हो जाती है अन्यथा बागवान का सारा का सारा निवेश व्यर्थ चला जाता है। संस्थान द्वारा आम, अमरूद, आँवला, बेल तथा अन्य उपोष्ण फलों के गुणवत्तायुक्त पौधे, पौधशाला बनाने हेतु माँग तथा उपलब्धता के अनुसार उपलब्ध कराये जाते हैं।

संस्थान द्वारा उपलब्ध आम की प्रमुख किस्में

संस्थान द्वारा विकसित आम की प्रमुख किस्में अंबिका एवं अरूनिका का विवरण निम्नलिखित है।

अंबिका

संस्थान द्वारा विकसित यह किस्म आम्रपाली तथा जनार्दन पसंद किस्मों के संकरण से तैयार की गयी है। यह एक नियमित फलत एवं देर से तैयार होने वाली किस्म है। इसका वृक्ष बौने आकार का होता है तथा औसत फल उत्पादन 80 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष (10 वर्ष की आयु में) होता है। यह किस्म सघन बागवानी हेतु उपयुक्त है।

अरूनिका

यह किस्म आम्रपाली तथा वनराज किस्मों के संकरण द्वारा विकसित की गयी है। यह बौने आकार की नियमित फलत एवं देर से पकने वाली किस्म है। इसका औसत फल उत्पादन 60-70 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष (10 वर्ष की आयु में) प्राप्त होता है।

इसके अलावा चौसा, लंगड़ा, आम्रपाली, मल्लिका बाम्बे ग्रीन तथा लखनऊ सफेदा आदि किस्में भी संस्थान द्वारा उपलब्ध करायी जाती है।

संस्थान द्वारा विकसित अमरूद की उन्नत किस्में

संस्थान द्वारा उच्च उत्पादकता वाली ललित, श्वेता, लालिमा एवं धवल किस्मों का विकास किया गया है जिनका विवरण नीचे दिया गया है।

ललित

यह एप्पल कलर से चयनित अमरूद की अच्छी उत्पादकता तथा गुलाबी गूदे वाली किस्म है। इसका उत्पादन 100 कि.ग्रा.

[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक, [2,3]वैज्ञानिक एवं [4]वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी

प्रति पौधा प्रति वर्ष (5 वर्ष की आयु में) होता है। फलों का वजन 185-200 ग्राम होता है। यह किस्म सघन बागवानी एवं प्रसंस्करण हेतु बहुत उपयुक्त है।

श्वेता

यह एप्पल कलर से चयनित अमरूद की अधिक उत्पादकता एवं सफेद गूदा वाली किस्म है। इसका उत्पादन 90 कि.ग्रा. प्रति पौधा प्रति वर्ष (5 वर्ष की आयु में) होता है। फलों का औसत वजन 225 ग्राम, बीज मुलायम तथा बीजों की संख्या कम होती है। यह किस्म सघन बागवानी हेतु उपयुक्त है।

धवल

संस्थान द्वारा विकसित अमरूद की नयी किस्म है। यह किस्म इलाहाबाद सफेदा का हाफ सिव चयन है। इसके फल गोलाकार, मध्यम आकार के (200-250 ग्राम) एवं टी.एस.एस. 13.4^{o} ब्रिक्स होता है। फलों में विटामिन सी 250 ग्राम/100 गूदा होता है।

लालिमा

संस्थान द्वारा विकसित अमरूद की यह नयी किस्म एप्पल कलर अमरूद का हाफ-सिव चयन है। इसके फल मध्यम आकार के (190 ग्राम) होते हैं तथा टी.एस.एस. 13.7^{o} ब्रिक्स होता है। यह किस्म रात्रि तापमान $8-10^{o}$ सें. ग्रे. वाले क्षेत्रों में लगाये जाने हेतु उपयुक्त है इनके अलावा संस्थान द्वारा इलाहाबाद सफेदा तथा एल-49 किस्म के गुणवत्तायुक्त पौध सामग्री की भी आपूर्ति की जाती है।

संस्थान द्वारा विकसित बेल की किस्में

संस्थान द्वारा बेल की दो किस्मों का विकास किया गया है जिनका वर्णन निम्नलिखित है।

सी.आई.एस.एच. बेल-1

यह बीजू पौधे से चयनित बेल की नयी किस्म है। उस किस्म के फल अंडाकार तथा फलों का वजन 1.00-1.25 कि.ग्रा. होता है। फलों का छिलका पतला तथा गूदे में चिपचिपे पदार्थ की मात्रा कम होती है। पूर्ण विकसित वृक्ष (10 वर्ष) की अवस्था में पूर्ण उपज प्राप्त की जा सकती है।

सी.आई.एस.एच. बेल-2

बीजू पौधे से चयनित बेल की नवीन किस्म है। इस किस्म के फल अंडाकार से गोला होते हैं जिनका वजन 1.80-2.70 कि.ग्रा. तक होता है। पूर्ण विकसित वृक्ष से (10 वर्ष) से 60-90 कि.ग्रा. तक की उपज प्राप्त की जा सकती है।

संस्थान द्वारा विकसित जामुन की प्रमुख किस्में

संस्थान द्वारा चयन से जामुन की दो उच्च उत्पादकता एवं गुणवत्ता वाली किस्मों का विकास किया गया है।

सी.आई.एस.एच. जामुन-37

यह बीजू पौधे से चयनित जामुन की नवीन किस्म है। इसके फलों का औसत वजन 24 ग्राम तथा गूदा 92 प्रतिशत होता है। इसकी उपज क्षमता 30-35 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष (5 साल पुराने पेड़ से) होती है।

सी.आई.एस.एच. जामुन-42

यह बीजू पौधे से चयनित जामुन की बीज रहित किस्म है। इस प्रजाति के फल अंडाकार होते है जिनका औसत वजन 8 ग्राम होता है। इस किस्म की उपज क्षमता 5-6 कि. ग्रा. प्रति वृक्ष (5 साल पुराने पेड़ से) होता है।

आम एवं अमरूद में सघन बागवानी एवं उसके वैज्ञानिक प्रबंधन की प्रौद्योगिकियाँ

संस्थान ने घटती हुई जोत तथा प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन हेतु आम तथा अमरूद की सघन बागवानी प्रणाली का विकास किया है जिसके अन्तर्गत कम क्षेत्रफल में अधिक पौधों का संयोजन कर अधिक लाभ अर्जित किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत आम में 5×5 मीटर तथा अमरूद में 3×3 मीटर एवं 2×1 मीटर की पद्धति विकसित की गयी है

जिसमें दो गुने से तीन गुने पौधों का संयोजन कर प्रति हेक्टेयर अधिक उपज तथा लाभ कमाया जा सकता है।

आम, अमरूद तथा आँवला के पुराने बागों का जीर्णोद्धार

संस्थान ने आम, अमरूद तथा आँवला के पुराने एवं अनुत्पादक बागों के जीर्णोद्धार की तकनीक विकसित की है जिसको अपनाकर पुराने वृक्षों से उत्पादन तकनीक के सही संयोजन से पुनः उच्च उत्पादकता प्राप्त की जा सकती है।

क्षमता विकास हेतु प्रशिक्षकों, बागवानों एवं अन्य सहयोगियों का प्रशिक्षण

इसके अंतर्गत संस्थान द्वारा उपोष्ण फलों के विभिन्न पहलुओं पर प्रायोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है।

यह प्रशिक्षण कार्यक्रम 1 दिन से लेकर एक सप्ताह तक की अवधि तक के होते हैं। संस्थान द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम को निम्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. उपोष्ण फलों का उत्पादन, फसल सुरक्षा एवं तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन
2. आम का उत्पादन, पौध सुरक्षा तथा तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन
3. उपोष्ण फलों की सघन बागवानी
4. उपोष्ण फलों की जैविक खेती
5. फलों का जीर्णोद्धार
6. उपोष्ण फलों की आधुनिक प्रौद्योगिकी एवं फल उत्पादन
7. सघन पौध बागवानी तथा प्रबंधन
8. अमरूद का उत्पादन, सुरक्षा तथा तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन
9. आम का जीर्णोद्धार एवं अन्तः फसलें
10. पौधशाला प्रबंधन
11. फल फसलों के उत्पादन, सुरक्षा तथा तुड़ाई उपरान्त प्रौद्योगिकियाँ
12. औद्योगिक फसलों में टपक सिंचाई, प्लास्टिक मल्चिंग एवं सुरक्षित होती।

संस्थान द्वारा उपलब्ध किसानोपयोगी सहित्य

क्रम सं.	नाम	मूल्य (रूपये में)
1.	आम का उत्पादन	35
2.	आम में एकीकृत कीटनाशी प्रबंधन	10
3.	आम में एकीकृत रोग प्रबंधन	15
4.	आम के पुराने बागों का जीर्णोद्धार	10
5.	आम पौध प्रवर्धन	10
6.	आम का तुड़ाई उपरान्त प्रवर्धन	10
7.	अमरूद	65
8.	अमरूद का जीर्णोद्धार	40
9.	अमरूद में वेज कलम	40
10.	पपीता उत्पादन	66
11.	आँवला जीर्णोद्धार	45
12.	आम में समेकित रोग प्रबंधन	40
13.	आम में समेकित नाशीकीट प्रबंधन	35
14.	आम की बागवानी	55

संस्थान द्वारा उपलब्ध कराये जा रहे पौधों की मूल्य सूची

क्रम सं.	नाम		मूल्य
अ)	आम	अंबिका	50
		अरूनिका	100
		लंगड़ा	35
		चौसा	35
		आम्रपाली	40
		मल्लिका	35
		दशहरी	35

ब)	अमरूद	ललित	45
		श्वेता	45
		धवल	60
		ललिमा	60
		इलाहाबाद सफेदा	35
		एल. 49	35
स)	बेल	सी.आई.एस.एच. बेल-1	35
		सी.आई.एस.एच. बेल-2	35
द)	जामुन	सी.आई.एस.एच.-37	50
		सी.आई.एस.एच.-42	50
य)	आँवला	नरेन्द्र-7	35

प्रशिक्षण एवं प्रक्षेत्र भ्रमण

संस्थान देश के विभिन्न संस्थानों, आत्मा, बागवानी मिशन, राज्य बागवानी मिशन, राज्य कृषि विश्वविद्यालय, राज्य सरकारों, विकास एजेंसियों तथा गैर-सरकारी संस्थाओं के द्वारा प्रायोजित किसानों, प्रसार कार्यकर्ताओं, उद्यमियों एवं विद्यार्थियों आदि को एक दिन के प्रशिक्षण के साथ प्रक्षेत्र भ्रमण भी करवाता है।

किसान कॉल सेन्टर एवं लाइव फोन-इन प्रोग्राम

संस्थान द्वारा बागवानों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं विद्यार्थियों हेतु उपोष्ण फलों के उत्पादन, सुरक्षा एवं तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन पर सलाह हेतु किसान कॉल सेन्टर मो.नं. 9415751200 (24 घन्टे) एवं फोन लाइव-इन-प्रोग्राम, फोन नं.-0522-2841082 सुबह 10:30 बजे से सायं 4:00 बजे तक उपलब्ध है।

वेब बेस्ट एडवाइजरी सर्विसेज

संस्थान की वेबसाइड cish.res.in के द्वारा सामयिक जानकारी समय-समय पर उपलब्ध करायी जाती है। इसके अलावा संस्थान द्वारा निम्नलिखित सेवाएँ भी प्रदान की जा रही हैं।

- फलों के जैविक उत्पादन हेतु खादों, जैविक नियामकों एवं कीटनाशियों के उत्पादन की तकनीक।
- रसायनों तथा नाशीजीव का मूल्यांकन एवं सलाह।
- मूल्यवर्धन सहित उपोष्ण फलों में तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन।
- अपशिष्ट का उपयोग।
- उद्यमिता का विकास।
- तकनीकी मूल्यांकन एवं सुधार।
- जीवनाशी अवशेष विश्लेषण तथा खाद्य सुरक्षा सलाह।
- बाजार विश्लेषण तथा सलाह।
- किसान गोष्ठी, मेला एवं प्रदर्शनियों का आयोजन, उद्योग जगत से वार्ता स्नात्कोत्तर शिक्षा एवं सलाह।

रश्मिरथी

तेजस्वी सम्मान खोजते नहीं गोत्र बतलाके,
पाते हैं जग से प्रशस्ति अपना करतब दिखलाकेद्य
हीन मूल की ओर देख जग गलत कहे या ठीक,
वीर खींचकर ही रहते हैं इतिहासों में लीक।

– रामधारी सिंह 'दिनकर'

जैविक विधि से तैयार कीट एवं व्याधि नाशकों द्वारा औद्यानिक फसलों के कीट एवं व्याधियों का प्रबंधन

राम अवध राम[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

वर्तमान समय में औद्यानिक फसलों में व्याप्त कीटों एवं व्याधियों का प्रबंधन रासायनिक कीट एवं व्याधि नाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से किया जा रहा है। इससे पर्यावरण प्रदूषण के साथ-साथ कृषि उत्पादन पर भी बहुत गंभीर प्रभाव पड़ रहा है और कृषि क्षेत्र के विकास में अनेक समस्याएँ सामने आ रही हैं। इनके निदान के लिए विश्व भर में वैज्ञानिकों ने अपने-अपने स्तर पर शोध कार्यों द्वारा सिद्ध करने का प्रयास किया है। वर्तमान कृषि रसायनों के स्थान पर स्थानीय रूप से उपलब्ध सस्ते एवं सुगमता से उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग कर कीट एवं व्याधियों का प्रबंधन सरलता से किया जा सकता है। इस संबंध में कुछ जैविक उत्पादों का विवरण प्रस्तुत है जिनका प्रयोग लाभकारी सिद्ध हुआ है।

कीट प्रबंधन

बायोडायनामिक तरल खाद एवं कीटनाशी

यह दलहनी पौधों एवं नीम की पत्तियों, मछली के कचरे, अरण्डी, करंज, मदार एवं सदाबहार आदि की पत्तियों द्वारा बनाया जाता है। विभिन्न प्रकार के कीटनाशी पौधों से तैयार तरल का बायोडायनमिक पांचांग के अनुसार छिड़काव करने से फलोत्पादन पर कीटों एवं व्याधियों के प्रभाव का प्रबंधन किया जा सकता है। इस प्रकार जैविक/बायोडायनमिक खादों एवं उत्प्रेरकों का प्रयोग कर रासायनों के प्रयोग में कमी, उत्पादन में वृद्धि एवं विभिन्न प्रकार के हवा एवं जल प्रदूषण में कमी लायी जा सकती है।

किण्वित गो-मूत्र का छिड़काव

देशी गाय के किण्वित गो-मूत्र फसलों पर लगे कीट एवं व्याधियों के प्रबंधन में प्रभावी सिद्ध होते हैं। गो-मूत्र जितना पुराना हो उतना ही गुणकारी होता है। गो-मूत्र धूप में भी रखा जाये तब भी उसकी गुणवत्ता में कमी नहीं आती है। 150 से 200 मि.ली. गो-मूत्र (एक चाय के कप के बराबर) 15 ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। यह देखने की आवश्यकता नहीं है कि कीड़ा या बीमारी लगी है या नहीं। फसल चाहे कोई भी हो गो-मूत्र का छिड़काव प्रत्येक सप्ताह किया जा सकता है। गो-मूत्र का छिड़काव प्रातः 10 बजे से पहले तथा सांय 4 बजे के बाद करना चाहिए। किण्वित गो-मूत्र का 2-3 छिड़काव प्रभावी होता है।

नीम के पानी का छिड़काव

नीम की मुलायम टहनियाँ पत्ती सहित 10 से 12 किलो लेकर उन्हें 200 ली. पानी में भिगोकर 3 से 4 दिन तक रखना चाहिए। प्रतिदिन टहनियों को हिलाते रहें जिससे पानी का रंग पीला हो जाये और साबुन जैसा झाग भी पानी में दिखायी पड़े। टहनियाँ हटा कर पानी को किसी साफ बरतन में रख लें। किसी बर्तन में 15 लीटर पानी लें और उसमें नीम का पानी थोड़ा-थोड़ा कर मिलाएं तथा हिलाते रहें जब उस पानी में साबुन जैसा झाग दिखायी पड़ने लगे तो समझना चाहिए कि यह घोल छिड़काव के लिए उपयुक्त है। नीम के पानी की मात्रा ज्यादा होने पर भी फसल पर कोई नुकसान नहीं होता है। आवश्यकतानुसार घोल तैयार कर मशीन द्वारा छिड़काव करना चाहिए। इससे कीड़ों तथा बीमारियों की रोकथाम होती है। 10 से 15 दिन के अन्तराल पर 2-3 छिड़काव किये जा सकते हैं। ज्यादा छिड़काव होने पर भी फसल पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

नीम सत का छिड़काव

5 किलो नीम की पत्तियाँ लेकर 10 लीटर पानी में इतना उबाला जाये कि घोल 2.5 लीटर रह जाये। इस घोल को 100 लीटर पानी में पतला कर उसका छिड़काव करने पर कीड़ों की रोकथाम की जा सकती है। आवश्यकता होने पर 15 से 20 दिन के अन्तराल पर इस घोल का छिड़काव दुबारा किया जा सकता है।

नीम की खली का प्रयोग

भूमि के अन्दर पाये जाने वाले सभी कीडों जैसे दीमक, सूत्रकृमि, आम की गुझिया तथा अन्य कीड़ों की रोकथाम नीम की खली का प्रयोग करने होती है। खाद के रूप में नीम की खली का प्रयोग करने पर दोहरा लाभ मिलता है। खली की गंध तथा स्वाद में कड़वापन होने के कारण कीड़ों की रोकथाम हो जाती है।

अग्निहोत्र से प्राप्त भस्म का प्रयोग

1. अग्निहोत्र से प्राप्त 200 ग्राम भस्म को 250 मि.ली. गो-मूत्र में मिलाकर 25 दिन तक बंद कर रखा जाये। खमीर बनने के पश्चात फिर 4 से 5 गुना पानी मिलाकर बीज शोधन तथा रोपाई की जाने वाली पौध की जड़ों को इस घोल में 3-4 मिनट तक डुबोकर रोपाई की जाये। इससे बहुत लाभ मिलता है। भूमि जनित रोगों का प्रबंधन होता है तथा जमाव अच्छा होता है। कीड़ों तथा बीमारियों की रोकथाम के लिए भी इसका प्रयोग लाभकारी सिद्ध हुआ है।
2. फसलों में बीमारी का प्रकोप होने पर 100 लीटर पानी में 2 कि.ग्रा. भस्म तथा 5 लीटर गो मूत्र को अच्छी प्रकार मिलाकर 3 दिन बाद छिड़काव किया जाये। तीसरे दिन भस्म घोल की तलहटी में बैठ जायगी। बिना पात्र को हिलाए घोल का पानी निथार कर अथवा कपड़े से छान कर छिड़काव करना चाहिए। छिड़काव से पूर्व उक्त घोल को किसी लकड़ी की सहायता से घड़ी की दिशा तथा विपरीत दिशा में 30 मिनट तक भंवर बनाकर मिलाने से प्रभाव में गुणात्मक वृद्धि होती है।

छाछ या मट्ठा का छिड़काव

किसी फसल में पत्ते सिकुड़ जाते हों, फूल आते हों परन्तु फल न लगते हों, ऐसी परिस्थिति में मट्ठा का छिड़काव बहुत लाभकारी सिद्ध हुआ है। गो मूत्र, नीम का पानी तथा साथ में मट्ठा का छिड़काव अलग-अलग किया जाये तो शीघ्र लाभ दिखायी पड़ता है।

मट्ठे के छिड़काव करने में कुछ सावधानियाँ बरतनी चाहिए जैसे किसी फसल में एक या दो बार ही छिड़काव करें। वह भी तब जब किसी फसल पर कीड़ा या बीमारी दिखायी दे, नहीं तो फसल पर बुरा प्रभाव पड़ता है। छाछ देशी नस्ल की गाय का होना चाहिए। छाछ खट्टा होना चाहिए। 100 से 150 मि.ली. छाछ को 15 लीटर पानी में डाल कर उसको मसलकर खूब मिला लें। फिर मशीन द्वारा छिड़काव करना चाहिए। सीधा छाछ का छिड़काव नहीं करना चाहिए। चना और अरहर पर लगने वाला कीड़ों का छाछ के छिड़काव से प्रबंधन सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

कीड़ों की रोकथाम के लिए गेंदा लगाना

पातगोभी की फसल में खेत की मेड़ों पर गेंदा लगाने से कीड़ों की रोकथाम की जा सकती है तथा सूत्रकृमि से की फसल की सुरक्षा होती है।

सरसों तथा मूली की कतारें लगाना

सब्जियों के बीच में सरसों की कतारें तथा सब्जियों की फसलों के बीच में मूली की कतारें लगाने से भी कीड़ों की रोकथाम हो जाती है।

बाय विडंग का प्रयोग

अंगूर, पपीता, आम, टमाटर, आदि फसलों पर इसका छिड़काव करने पर फलों एवं दानों पर चमक आ जाती है और फसल पर लगने वाले कीड़ों का नियंत्रण होता है। वाय विडंग एक पौधा है जो औषधीय जड़ी-बूटी बेचने वालों के यहाँ प्राप्त हो सकता है।

250 ग्राम वाय विडंग को 2 ली. पानी में उबालें। जब

घोल डेढ़ लीटर रह जाये तो इसे ठंडा कर घोल का 150-200 मि.ली. द्रव्य 15 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करना चाहिए। 8 से 10 दिन का अन्तर देकर दो से तीन बार छिड़काव प्रभावी पाया गया है।

वच या वचनाग का प्रयोग

यह भी एक औषधीय पौधा है जो औषधि विक्रेताओं के यहाँ प्राप्त हो सकता है। वाय विडंग में बतायी गयी विधि की तरह ही इसका भी 250 ग्राम वच लेकर 2 ली. पानी में उबाल कर बनाना चाहिए। इसके तैयार घोल में 200 ली. पानी मिला कर भूमि पर छिड़काव करना चाहिए। सिंचाई के पानी के साथ भी वच अर्क थोड़ा-थोड़ा कर मिलाया जा सकता है। फसल पर सीधे इसका छिड़काव न करें। सावधानी की आवश्यकता है कि जब वच अर्क का खेत में प्रयोग किया जाये तो अमृत पानी का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। 200 लीटर अमृत पानी प्रति एकड़ की दर से प्रयोग करना चाहिए।

व्याधि प्रबंधन

वृक्ष लेप का प्रयोग

आम के वृक्षों में तने शाखाओं से निकलने वाले गोंद की रोक थाम के लिए गाय के ताजे गोबर में बालू एवं चिकनी मिट्टी बराबर मात्रा में मिलाकर गाय के सींग की खाद के घोल से लेप बनाकर जमीन से 1-5 मी. की ऊँचाई तक लेप करने से गोद निकलना कम हो जाता हैं। वर्ष में दो बार वृक्ष लेप के प्रयोग से इस बीमारी को रोका जा सकता हैं। पुराने एवं अनुत्पादक आम के बागों के जीर्णोद्धार में कटी शाखाओं पर वृक्ष लेप के प्रयोग से गोंद नहीं निकलता है तथा स्वस्थ शाखायें निकलती हैं। अतः आम के जीर्णोद्धार में वृक्ष लेप का प्रयोग करने से कॉपर ऑक्सीक्लोराइड पर किये गये अतिरिक्त खर्च में भारी कमी लायी जा सकती है।

गाय के सींग की सिलिका (बी.डी. 501) का छिड़काव

बायोडायनमिक पांचांग के अनुसार बी.डी. 501 की 1 ग्रा. मात्रा को 13.5 ली. पानी में उल्टी एवं सीधी दिशा में एक घंटे तक भँवर बनाकर घोलकर वृक्षों पर छिड़काव करने से कवक जनित बीमारियों का नियंत्रण किया जा सकता है। पुष्पन एवं फलन की अवस्था में इसके छिड़काव से फलों के विकास एवं गुणवत्ता पर विशेष प्रभाव पड़ता हैं।

जैविक पद्धति द्वारा कीट एवं रोग प्रबंधन

कीट प्रबंधन

- नीम/करंज/अरण्डी/कनेर/धतूरा/मदार से बनी बायोडायनमिक तरल कीटनाशी का 2-3 पर्णीय छिड़काव।
- गोमूत्र/नीम का तेल/अग्निहोत्र भस्म का प्रयोग।
- बिच्छू घास से तैयार कीटनाशी का प्रयोग।

व्याधि प्रबंधन

- बी.डी. 501 का दो छिड़काव पांचांग के अनुसार फूल आने एवं फलों के लगने के समय।
- तने पर वृक्ष लेप का गोंद एवं उकठा रोग नियंत्रण के लिए प्रयोग।
- झाउ/हार्स टेल की पत्तियों द्वारा तैयार तरल का बौर आने या फफूँदजनित बीमारियों के प्रकोप पर एक छिड़काव पांचांग के अनुसार।
- कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) सल्फर का (2%) एवं बोर्डेक्स घोल का 1 प्रतिशत छिड़काव रोग नियंत्रण हेतु सफलतापूर्वक किया जा सकता है।
- उचित फसल चक्र, स्वस्थ बीज का चुनाव, बीज एवं पौधशोधन, सहयोगी फसलों की मिश्रित खेती एवं ट्रैप फसलों के उगाने से कीट एवं व्याधियों का प्रबंधन होता है।

फल एवं सब्जियों का परासारणी निर्जलीकरण द्वारा संरक्षण

जोतिर्मयी लेंका[1], पवन सिंह गुर्जर[2], भारती किल्लाड़ी[3], रेखा चौरसिया[4] एवं डी.के. शुक्ला[5]
[1,2,3,4,5]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

मनुष्य के दैनिक भोजन में पोषक तत्वों का मुख्य श्रोत फलों एवं सब्जियों को ही माना जाता है। फलों एवं सब्जियों के उत्पादन में भारत का चीन के पश्चात दूसरा स्थान है। भारतीय बागवानी डेटाबेस 2014 के आँकड़ों के अनुसार भारत में 8.89 करोड़ मैट्रिक टन फल एवं 16.28 करोड़ मैट्रिक टन सब्जियों का उत्पादन हुआ था। भारत में फलों का 69.8 लाख हेक्टेयर तथा सब्जियों का 92.1 लाख हेक्टेयर भूमि में उत्पादन किया जाता है। विकासशील देशों में शीत श्रृंखला के व्यापक पैमाने पर अभाव के कारण फलों एवं सब्जियों की काफी मात्रा खराब हो जाती है। भारत के लगभग 25 प्रतिशत फल एवं सब्जियाँ तुड़ाई के उपरान्त नष्ट हो जाती हैं जिससे किसानों के साथ-साथ देश की अर्थव्यवस्था पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।

फलों एवं सब्जियों के संरक्षण हेतु विभिन्न प्रसंस्करण विधियों का प्रयोग किया जाता है जिसमें से एक निर्जलीकरण विधि है। निर्जलीकरण की विभिन्न पारम्परिक एवं वैज्ञानिक विधियों में धूप में एवं इलेक्ट्रिक डीहाइड्रेट द्वारा फल एवं सब्जियाँ सूखाने से उत्पाद के रंग एवं गुणवत्ता में गिरावट आती है। परन्तु निर्वात एवं हिम शुष्कन विधि द्वारा उत्पाद को सुखाने पर उसकी रंग, गुणवत्ता एवं सुवास बनी रहती है। किन्तु उनकी प्रसंस्करण लागत बहुत अधिक होने के कारण वह आम जनता के प्रयोग के लिये उपलब्ध नहीं हो पाती है। अतः आम जनता में इसकी उपलब्धता बनाये रखने के लिये फलों एवं सब्जियों को सुखाने हेतु परासारणी निर्जलीकरण काफी सरल एवं अपेक्षाकृत कम लागत वाली विधि है। इस विधि द्वारा फलों एवं सब्जियों के संरक्षण से उनका रंग, स्वाद, सुवास एवं पोषक तत्वों की मात्रा में कोई खास बदलाव नहीं आता है एवं उनकी भंडारण क्षमता भी अधिक होती है। परासारणी निर्जलीकरण द्वारा बनाये गये उत्पाद के वजन में 30-40 प्रतिशत कमी होने के कारण उनके परिवहन में भी आसानी रहती है।

[1,2,3]वैज्ञानिक एवं [4,5]सहा.मु.त. अधिकारी

परासारणी निर्जलीकरण

इस विधि के अन्तर्गत फल एवं सब्जियों को टुकड़ों या फांको में काट कर चीनी या नमक के सन्द्रित घोल में 8 से 10 घंटे तक डुबोया जाता है। इस दौरान फल एवं सब्जियों (उत्पाद) से जल परासारण विधि द्वारा उत्पाद एवं घोल की परासारणिक क्षमता में अन्तर के कारण बाहर निकल जाता है तथा उत्पाद में चीनी या नमक का प्रवेश हो जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान कुछ घुलनशील पदार्थ जैसे अम्ल, विटामिन एवं खनिज तत्व कम मात्रा में पानी के साथ बाहर निकल जाते हैं। पानी निकल जाने के फलस्वरूप उत्पाद की जैविक क्रियाओं में कमी हो जाती है। परासारणी निर्जलीकरण प्रसंस्करण की एक ऐसी तकनीक है जिसमें फल एवं सब्जियों की कोशिकाओं की परत अर्धपारगम्य होने के कारण पानी फलों एवं सब्जियों से शक्कर या नमक की अपेक्षा तेजी से बाहर आता है। यह एक गतिशील तकनीक है जिसमें पानी एवं अम्ल पहले तेजी से बाहर आते हैं बाद में धीरे-धीरे जबकि शक्कर एवं नमक उत्पाद में पहले धीरे-धीरे और बाद में तेजी से प्रवेश करता है। सान्द्रित घोल के परासारणी गतिविधि को तेज करने के लिये उसकी सान्द्रता, तापमान नियंत्रण एवं समय का निर्धारण आवश्यक है।

परासारणिक निर्जलीकृत उत्पाद मध्यम नमी वाले खाद्य पदार्थों की श्रेणी में आते हैं। अतः इन्हें हवा में सुखा कर, निर्वात द्वारा कम तापमान पर निर्जलीकरण कर, उच्च तापमान पर निर्जलीकरण एवं विभिन्न गर्म एवं ठंडी विधियों द्वारा डिब्बा बन्दी कर इनकी गुणवत्ता में स्थिरता लायी जाती है। परासारणी निर्जलीकरण द्वारा फलों एवं सब्जियों जैसे केला, सेब, पपीता, आम, आंवला, सपोटा एवं सब्जियों को

उनकी मौलिक संरचना, रंग, सुवास, स्वाद एवं पोषक तत्वों को अधिक-से-अधिक मात्रा में संरक्षित कर प्रसंस्कृत किया जा सकता है। यह प्रसंस्करण उद्योग के लिये उत्पादों की उच्च गुणवत्ता एवं उनकी मौलिकता कायम रखने में उच्च संभावनाओं वाली तकनीक है। इस विधि के अन्तर्गत फलों की फाँकों को दो भागों में निर्जलीकृत किया जाता है। पहली अवस्था में परासारणी तत्व द्वारा उनमें से पानी निकाला जाता है फिर निर्जलीकरण द्वारा पानी को कम कर उसे स्वयं स्थिर उत्पाद में तबदील किया जाता है।

प्रसंस्करण उद्योग में परासारणी तकनीक का प्रयोग

परासारणी निर्जलीकरण विधि एवं इसके प्रसंस्करण के विभिन्न कारकों एवं विधियों जैसे पूर्व उपचार, शक्कर के घोल का तापमान एवं परिरक्षकों का विभिन्न फलों के ठोस पदार्थो के स्थानान्तरण पर प्रभाव का विस्तृत अध्ययन प्रोन्टिग एवं साथियों (1966) ने किया। सेब की फाँक 60 से 70 डिग्री ब्रिक्स सान्द्रता वाले शक्कर के घोल के प्रयोग से उन्हें अपनी मूल वजन का आधा तक कम किया जा सकता है। इस अध्ययन से पता चलता है कि रंगों में क्षति को कम करने के लिये सल्फर डाई-ऑक्साइड परिरक्षक की कोई आवश्यकता नहीं होती है। परासारणी एवं हवा द्वारा निर्जलीकृत किये गये उत्पाद उच्च गुणवत्ता होने के साथ-साथ उनके वजन में 40-50 प्रतिशत तक कमी आती है।

विभिन्न कारकों का परासरणी निर्जलीकरण पर प्रभाव

फलों की परिपक्वता, प्रजाति, निर्जलीकरण के पूर्व दिये गये उपचार, परासारण द्रव की सान्द्रता, मिश्रण को मिलाना, फलों का आकार-प्रकार, फलों की फांकों/टुकड़ों एवं सान्द्रित घोल का अनुपात, उनके भौतिक-रासायनिक गुण, परिरक्षक, संरचना इत्यादि परासरणी निर्जलीकरण को प्रभावित करते हैं।

खाद्य पदार्थ एवं कारकों के गुण

कच्चे खाद्य फलों की गुणवत्ताः फलों एवं सब्जियों की प्रजाति एवं उनकी परिपक्वता परासारणी निर्जलीकरण के दौरान पानी की क्षति तथा ठोस पदार्थ की मात्रा को प्रभावित करती है। फलों की विभिन्न विविधताओं जैसे फलों के ऊतकों की आपस में सघनता, प्रारंभिक घुलनशील और अघुलनशील तत्वों की मात्रा, कोशिकाओं के मध्य दूरी तथा फलों के एन्जाइम की क्रियाशीलता मुख्यतः परासारणी निर्जलीकरण को प्रभावित करती है। ठोस पदार्थ घोल की सान्द्रता और तापमान पर अधिक निर्भर नहीं होते हैं। आम की विभिन्न प्रजातियों में पकी अवस्था में दशहरी एवं तोतापरी परासारणी निर्जलीकरण हेतु उपयुक्त पायी गयी है।

फलों का आकार

फलों से पानी की मात्रा में तेजी से कमी उसकी खुली सतह के अधिक होने पर तेजी से होती है। रहमान (1992) ने पाया कि तापमान एवं खुली सतह के बढ़ने में पानी के बदलाव में कमी आती है तथा घोल की सान्द्रता बढ़ने व फलों के आकार में कमी होने से ये तेजी से होता है। सामान्यतः 3 से 10 मि.मी. आकार की गोलाकार/क्यूब/ आयताकार फांके परासारणी निर्जलीकरण हेतु सर्वोत्तम है।

पूर्व उपचारः कोई भी पूर्व उपचार जैसे फलों को उबलते पानी में डालना या शीतनन उत्पाद की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। साइट्रिक अम्ल के 01 प्रतिशत घोल में फलों को डुबाने से परासारणी निर्जलीकृत उत्पाद में एन्जाइम द्वारा होने वाले रंग परिवर्तन को कम किया जा सकता है। फलों के टुकड़ों का ओलिएट ईस्टर के क्षारीय या अम्लीय घोल तथा रसायन (सल्फर डाई-ऑक्साइड) में सुखाने के पूर्व डुबोने से उनके रंगों में कम क्षति होती है। पपीते और आम की फाँकों को 0.4 प्रतिशत एसकार्बिक अम्ल के घोल या 0.4 प्रतिशत एसकार्बिक अम्ल व 0.1 प्रतिशत पोटैशियम मेटा बाईसल्फाइट के घोल में परासारणी निर्जलीकरण के पूर्व 30 मिनट डुबाने से उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पाद प्राप्त होते हैं।

परासारणी घोल का तापमानः घोल के तापमान का निर्जलीकरण की दर पर भी प्रभाव पड़ता है। हालांकि ये दर तापमान के बढ़ने से बढ़ती है पर 60^0 से.ग्रे. से अधिक तापमान होने पर कोशिकाओं की परत क्षतिग्रस्त हो जाती है।

परासारणी तत्वः सामान्यतः प्रयुक्त होने वाले परासारणी पदार्थ फलों हेतु सूक्रोज एवं ग्लूकोज और सब्जियों के लिये नमक है। इसके अतिरिक्त कैल्सियम क्लोराइड, मोनो हाइड्राक्सी एथेनोल, लैक्टोज एवं माल्टोडेक्सट्रिन का भी प्रयोग होता है।

परासारणी निर्जलीकरण उत्पादों की पैकिंग एवं भण्डारणः वातावरण से आने वाली नमी को रोकने तथा उत्पादों को खराब होने से रोकने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले फूड ग्रेड, हवा रोधी डिब्बों या पाउच में रखा जाता है। एलुमिलियम की पन्नी और एलुमिनियम परत चढ़ी पालीप्रोपाइलीन की पन्नियों को उपयुक्त माना जाता है। अहमद और चौधरी (1995) ने उच्च घनत्व वाली एथाइलीन पन्नियों का पपीते की परासारणी विधि से निर्जलीकृत फाँकों की पैकिंग में प्रयोग किया इस प्रकार पैक किये गये उतपादों को 6-12 महीने तक सुरक्षित रहते हैं।

लाभ

1. यह उत्पाद में एन्जाइम एवं ऑक्सीकारक ब्राउनिंग को रोकता है जिससे उसका रंग अच्छा रहता है।
2. इस विधि में अधिक तापमान का प्रयोग नहीं किया जाता है जिसके कारण खाद्‌य उत्पाद की मौलिकता संरक्षित रहती है।
3. परासारणिक विधि से बने उत्पाद की संरचना, सुवास एवं पोषक तत्वों की मात्रा बनी रहती है।
4. इस विधि में लागत कम आती है क्योंकि इसमें उपकरणों का प्रयोग कम-से-कम किया जाता है।
5. अम्ल एवं पानी की निकासी एवं चीनी के खाद्‌य प्रदार्थ में प्रवेश के कारण आँवला मुरब्बा, आँवला कैन्डी आदि फलों की संरचना बदल जाती है।
6. ऐसे उत्पाद को अधिक समय तक भंडारित किया जा सकता है एवं इसकी उपलब्धता पूरे वर्ष बनी रहती है।
7. वजन कम होने के कारण, इनका रखरखाव, परिवहन एवं विपणन आसान होता है।

निष्कर्ष

परासारणी निर्जलीकरण एक आसान प्रक्रिया है। यह दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाले फल एवं सब्जियों जैसे केला, आम, पपीता, अनानास, अमरूद, गाजर, कद्‌दू आदि को उनके मौलिक संरचना, रंग, सुवास एवं पोषक तत्वों के साथ प्रसंस्कृत करने में सहायक होती है। परासारणी विधि द्वारा फल एवं सब्जियों का संरक्षण करने से उनके मूल्य में वृद्धि होती है। साथ ही उत्पाद की उपलब्धता वर्ष भर बनी रहती है।

मधुशाला

हरा भरा रहता मदिरालय, जग पर पड़ जाए पाला,
वहाँ मुहर्रम का तम छाए, यहाँ होलिका की ज्वाला,
स्वर्ग लोक से सीधी उतरी वसुधा पर, दुख क्या जाने,
पढ़े मर्सिया दुनिया सारी, ईद मनाती मधुशाला।

-हरिवंधराय 'बच्चन'

स्वास्थ्य के लिये फलों के ऐंटीऑक्सीडेंट का महत्व

भारती किल्लाड़ी[1], रेखा चौरसिया[2] एवं डी.के. शुक्ला[3]

[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

प्राचीन काल से यह कहावत चली आ रही है कि 'जैसा खाओगे वैसा ही सोचेगे'। यह एकदम सत्य है कि भोजन जीवन में ईंधन का काम कर ऊर्जा प्रदान करता है। इसलिये यह आवश्यक है कि जो भी भोजन हम ग्रहण करें, उसमें पोषक तत्वों की मात्रा प्रचुर मात्रा में होनी चाहिए। शोध कार्यो द्वारा यह भी सिद्ध हुआ है कि संसार की दो-तिहाई पौधों की प्रजातियों में ऐंटीऑक्सीडेंट गुण पाये जाते हैं। उनमें से बहुत से पौधों में ऐंटीऑक्सीडेंट की मात्रा बहुत अधिक होती है। ऐंटीऑक्सीडेंट सेल के उपचायक तनाव को कम करते हैं जो कैंसर, हृदयरोग, वात आदि बीमारियों की रोकथाम में सहायक हैं। जब कोई व्यक्ति ऐंटीऑक्सीडेंट से भरपूर भोजन ग्रहण करता है तो बीमारियों से लड़ने की ताकत ऐंटीऑक्सीडेंट रहित भोजन के मुकाबले अधिक होती है।

सुरक्षा की दृष्टि से फलों एवं सब्जियों में प्राकृतिक ऐंटीऑक्सीडेंट मुख्यतः तीन समूह में होते है-विटामिन, फिनाल और कैरोटीनायड। विटामिन, फिनाल हाईड्रोफिल पानी में घुलनशील और कैरोटीनायड लाईपोफिलिक तेल में घुलनशील में पाये जाते हैं। आजकल प्रसंस्करण उद्योगों में सिन्थेटिक ऐंटीऑक्सीडेंट जैसे बी.एच.टी. एवं बी.एच.ए. (*ब्यूटालेटेड हाइड्राक्सी टायलीन* और *ब्यूटालेटेड हईड्राक्सी ऐनीसोल*) का काफी प्रयोग किया जा रहा है जिससे लीवर की खराबी एवं कैंसर का खतरा बढ़ता जा रहा है। इसलिए फलों में पाया जाने वाला प्राकृतिक ऐंटीऑक्सीडेंट का प्रयोग करने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया जा रहा है। इनमें से कुछ फल मानव स्वास्थ्य के लिए अमृत का काम करते हैं। इसमें पाये जाने वाले ऐंटीऑक्सीडेंट न केवल रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने का कार्य करते हैं बल्कि सेहत से जुड़ी तमाम परेशानियों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से फायदा भी पहुँचाते हैं। अतः जहाँ तक संभव हो अपने आहार में विभिन्न रंगों के फलों का समावेश करना चाहिए जिससे भरपूर मात्रा में ऐंटीऑक्सीडेंट प्राप्त हो सके।

ऐंटीऑक्सीडेंट से प्राप्त होने वाले लाभ निम्नलिखित हैं।

- आँखों की परेशानियों को दूर रखता है।
- हृदय को स्वस्थ रखता है।
- संक्रमण होने से बचाता है।
- मोतियोबिन्द, अल्जाईमर, कैंसर आदि अनेक बीमारियों से बचाता है।
- फ्री-रेडिकल्स होने की वजह से शरीर की होने वाले नुकसान से बचाता है।
- कोशिकाओं को होने वाले नुकसान से बचाता है।
- झुर्रियों को बढ़ने से रोकता है।
- सूरज की हानिकारक किरणों से त्वचा की रक्षा करता है।
- रोग प्रतिरोधक क्षमता में आयी कमी को रोकता है।

कुछ मुख्य फलों में पाये जाने वाले ऐंटीऑक्सीडेंट और उनके लाभ का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है।

आम (*मेंन्जीफेरा इंडिका एल.*)

आम भारतीय उपमहादीप का मूल फल है। अपने अनोखे रंग, सुगंध, सुवास एवं स्वाद के कारण यह केवल भारत में ही नहीं अपितु पूरी दुनिया में लोकप्रिय है। इसलिए इसे फलों के राजा की संज्ञा भी दी गयी है। आम में मौजूद पोषक तत्व इसे और भी अधिक उपयोगी बना देते हैं। आम ऐंटीऑक्सीडेंट, विटामिन, फाइवर, पालीफिनाल एवं खनिज का अच्छा स्रोत है। भारत के प्राचीन वैज्ञानिक चिकित्सीय शोध

[1]वैज्ञानिक एवं [2,3]सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

प्रबंध चरक सहिता में आम के तने की छाल एवं पत्तों से निर्मित प्रतिऑक्सीकारक, कृमिनाशक एवं प्रदाहक रोधी गुणों का वर्णन किया गया है। आम की प्रति-ऑक्सीकारण क्षमता विशेषकर एस्टाजैन्थन शरीर के प्रतिरोधी तन्त्रों को कैंसर की बीमारी से बचाने में सहायक है। आम में मौजूद ल्यूपिआल, ट्राईटरपीन त्वचा रोगों का उपचार करने के लिए लाया जाता है। यह जलन, कैंसर, गठिया, मधुमेह, हृदय रोगों, गुर्दे की विषाक्तता आदि में भी लाभकारी है। आम के 100 ग्राम गूदे में 180 माइक्रो ग्राम ल्यूपिआल पाया जाता है। आम में उपस्थित विटामिन ए, रतौंधी, दिवांधता एवं शुष्क नेत्र प्रदाह, अंधेपन तथा नेत्र की अन्य बीमारियों से दूर रखता है।

अमरूद *(सिडीयम गुवाजावा एल.)*

भारत में फलों के क्षेत्र में आम, केला, नीबूवर्गीय फसल के बाद मुख्य फसल के रूप में अमरूद का स्थान आता है। इसे गरीबों का सेब भी कहा जाता है। सेब में पाये जाने वाले लगभग सभी तत्व इसमें विद्यमान होते हैं। इस कारण इसकी महत्ता और भी बढ़ जाती है। अमरूद में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। यह पेक्टीन, रेशा, पालीफिनाल, लाइकोपीन (गुलाबी गूदे में), कैल्सियम एवं फास्फोरस का उच्चतम स्रोत है। यह पेट, हृदय संबंधी बीमारियों के रोकथाम में सहायक है। एल.डी.एल., प्लेटलेट को बढ़ाने तथा रक्त की लाल कोशिकाओं को नष्ट होने से बचाता है। अमरूद कोलेस्ट्राल एवं वजन को कम करने का कार्य भी करता है।

आंवला *(इमब्लिका आफीसिनेलिस* गार्टन)

आंवला एक बहुपयोगी प्राचीन फल है। आदि काल से ही औषधि के रूप में इसका उपयोग किया जाता रहा है। इसके अदभुत औषधीय एवं पोषक गुणों का वर्णन वेद, रामायण, चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, कादम्बरी आदि में विस्तार से उपलब्ध है। अपने इन्हीं गुणों के कारण इसे अमृत फल भी कहा जाता है। आंवला का फल विटामिन-सी एवं पालीफिनाल का उत्तम श्रोत होता है। इसमें व्याप्त विटामिन सी शरीर में लौह तत्वों को समाहित होने में सहायता करता है जिससे रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा बढ़ जाती है। पालीफिनाल कैंसर एवं सूक्ष्म जीवरोधी होते हैं। इसके अतिरिक्त आंवला में रेशा, लोहा, कार्बोहाइड्रेट खनिज, कैल्सियम, फास्फोरस आदि प्रमुख तत्व पाये जाते हैं। आंवला का नियमित सेवन करने से पित्त एवं कफ नाशक, पीलिया, बवासीर, नेत्र विकार, संग्रहणी पेचिस, अतिसार आदि में काफी लाभ होता है।

बेल *(एजिल मारमेलस* कोर्रिया)

बेल भारत के प्राचीनतम फलों में से एक है। इसे श्रीफल भी कहा जाता है। बेल के वृक्ष को शुष्क, अर्धशुष्क एवं बंजर वाले क्षेत्र में भी सुगमतापूर्वक लगाया जा सकता है। बेल वृक्ष के पचांग (जड़, छाल, पत्ते, शाख एवं फल) सभी औषधीय रूप में उपयोगी हैं। बेल के फल की उपलब्धता अप्रैल-मई के महीने में पायी जाती है। बेल अपने विशिष्ट सुगंध, रंग एवं पोषक तत्वों के कारण खाद्य घटक के रूप में प्रयुक्त होता है। यह शर्करा, रेशा, प्रोटीन, खनिज, कार्बोहाइड्रेट, कैल्सियम, पोटैशियम, लोहा, विटामिन-ए, बी, सी एवं राइबोफ्लोविन पाये जाते हैं। यह पालीफिनाल जैसे कैमोरिन (*मारमेलोसीन, मारमेसिन, मारमिन*) एवं एल्कलाएड (*एजेलिन, एजेलेनिन, मारमेलिन*) का भी अच्छा श्रोत है जो ऐंटीआक्सीडेंट का कार्य करते हैं। बेल के फल के विभिन्न उत्पाद जैसे मुरब्बा, शर्बत, स्क्वैश पाउडर, टाफी आदि बनाये जाते हैं जो मौसम के उपरान्त औषधि के रूप में प्रयोग लाये जा सकते हैं।

पपीत *(कोरिका पपाया एल.)*

पपीता हर मौसम में पाया जाने वाला फल है। इसे कच्चा एवं पकाकर प्रयोग में लाया जा सकता है। इसमें पपेन, विटामिन ए एवं सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। पपीता पेट के रोगों, आंख, जिगर एवं कब्ज जैसी परेशानियों से बचाता है। पपीता एक पावर फुल ऐंटी वैक्टीरियल का काम करता है। यह स्वास्थ्यवर्धक एवं सौन्दर्यवर्धक भी है जो फ्री रेडिकल्स से त्वचा में होने वाले नुकसान को कम करता है। इसमें झुड़िड़यों को बढ़ने से बचने के गुण भी पाये जाते हैं।

जामुन *(सिजीगियम क्यूमिनी* स्कील)

जामुन मूलतः भारतीय उपमहादीप का फल है। इसकी

पैदावार पूरे देश में होती है। हमेशा हरा-भरा रहने वाला बहुपयोगी एवं फलदार जामुन का वृक्ष चौड़े राजमार्गों पर लगाया जाता है। जामुन के फल की उपलब्धता जून-जुलाई के महीने में 30-40 दिन तक रहती है। जामुन फल ही नहीं बल्कि औषधि भी है। औषधीय दृष्टि से जामुन का फल खट्टा, पाचन शक्ति मजबूत करने वाला, वात विकार दूर करने वाला एवं रक्त शर्करा को कम करने में सहायक होता है। इसके नियमित सेवन से अल्जाइमर और कैंसर जैसी बीमारियों का खतरा भी काफी कम हो जाता है। यह कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, कैल्सियम और आयरन का अच्छा स्रोत है। साथ ही इसमें विटामिन बी, कैरोटीन, और मैग्नीशियम भी पाया जाता है। जामुन के फल को स्क्वैश, शर्बत एवं सिरका आदि बनाने में उपयोग किया जाता है। इसके नियमित सेवन से दिल की बीमारियाँ, अल्जाइमर और कैंसर जैसी बीमारियों का खतरा भी कम हो जाता है।

लीची (*लीची चाइनेनसिस* सोन)

लीची अपने अकर्षक रंग, सरसता, स्वाद एवं गुणवत्ता के कारण जनमानस में अत्यंत लोकप्रिय है। इसी कारण लीची को फलों की रानी की संज्ञा दी गयी है। लीची की उपलब्धता जुलाई महीने में प्रचुर मात्रा में होती है। लीची के प्रसंस्कृत उत्पादों में इसके फलों का रस, स्क्वैश, कार्डियल, शर्बत नेक्टर, जैम, जेली आदि प्रमुख हैं। लीची में पानी की मात्रा अधिक होने के कारण पानी के अनुपात को संतुलित रखता है। इसमें पौष्टिक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। यह विटामिन सी एवं पोटैशियम का अच्छा स्रोत है।

केला (*मुसा पारादिसिआका* लीनियस)

केला का विविध रूपों में प्रयोग होने के कारण इसे कल्प तरु की संज्ञा दी गयी है। यह दुनिया के सबसे पुराने एवं लोकप्रिय फलों में से एक है। केला में विटामिन डी को छोड़कर सभी पौष्टिक तत्व पाये जाते हैं। इसी कारण केला, गुणकारी, लाभकारी एवं सबसे उपयोगी फल कहा जाता है। केला ऊर्जा का अच्छा स्रोत है। केले में 104 कैलोरी ऊर्जा प्रति 100 ग्राम फल में पायी जाती है। केला अम्लता को कम एवं आयरन होने के कारण एनीमिया के खतरे को दूर करता है। इसमें ऐंटी फंगल एवं ऐंटी वायरल गुण पाये जाते हैं। यदि दो केला दो चम्मच शहद के साथ रोज सुबह खायें तो दिल को ताकत एवं हाई ब्लड प्रेसर में राहत मिलती है। आंतों के विकार, दस्त, पेंचिस एवं संग्रहण रोगों में केले के सेवन से तुरन्त आराम मिलता है।

अतः सदियों से फलों का प्रयोग खाने के साथ-साथ पूजा-पाठ में भी प्रयोग किया जाता है। भारत वर्ष में फलों का उत्पादन प्रचुर मात्रा में होता है जिसको यदि उचित तरीके से प्रयोग में लाया जाये तो उसमें उपस्थिति ऐंटीऑक्सीडेंट स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक है। प्राकृतिक ऐंटीऑक्सीडेंट सिन्थेटिक ऐंटीऑक्सीडेंट्स के मुकाबले काफी फायदेमंद होता है।

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से, प्रबुद्ध शुद्ध भारती। स्वयंप्रभा समुज्ज्वला, स्वतंत्रता पुकारती।।
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो। प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो बढ़े चलो।।
असंख्य कीर्ति रश्मियाँ, विकीर्ण दिव्य दाह-सी। सपूत मातृभूमि के, रुको न शूर साहसी।।
अराति सैन्य सिन्धु में, सुबाड़वाग्नि से जलो। प्रवीर हो जयी बनो, बढ़े चलो बढ़े चलो।।

- जयशंकर प्रसाद

अगुणित फलोत्पादन : नये आयाम

स्वोस्ति शुभदर्शिनी दास[1], अंतरा दास[2] एवं ज्योतिर्मयी लेंका[3]
[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

परिचय

फल वृक्षों में प्रजनन प्रक्रिया बेहद चुनौती पूर्ण होती है। परपरागण के कारण फल वृक्ष आनुवांशिक रूप से समरूप नहीं होते हैं। संकरण के बाद फलत में ज्यादा समय लगता है और साथ ही कुछ फसलों में स्व असंगति होती है अथार्त वे स्वयं के फूलों को परागित नहीं कर सकते जिससे निषेचन नहीं हो पाता। फलों की ऐसी किस्में जो उत्पादक हों, बीज रहित हों, जिसमें शीघ्र फलत हो तथा जैविक एवं अजैविक तनाव के लिए प्रतिरोध हो उनकी नितान्त आवश्यकता होती है। जैव तकनीक पादप प्रजनन के लिए एक महत्वपूर्ण औज़ार है। सूक्ष्म प्रवर्धन की विधियों द्वारा अगुणित एवं द्विगुणित पौध का उत्पादन संभव है। इन पौधों का विकास निम्नांकित तरीके से संभव है।

अगुणित एवं द्विगुणित उत्पादन का इतिहास

वैज्ञानिक बर्गनर ने सर्वप्रथम सन 1921 में दतुरा स्ट्रोमानियम पौधे में शोध कर अगुणित पौधे का विकास किया। भारतीय वैज्ञानिक गुहा एवं माहेश्वरी ने सन 1964 में दतुरा इनोक्सिया पौधे में पराग संवर्धन तकनीक से अगुणित पौध का विकास किया। बाद में वैज्ञानिकों ने बहुत सारे फल जैसे नीबू, पपीता, बेर, नासपाती में अगुणित पौध का उत्पादन किया।

अगुणित उत्पादन की प्रक्रियाएँ

अगुणित पौधों का उत्पादन दो मुख्य विधियों द्वारा होता है। एक विधि द्वारा प्रयोगशाला के अन्तर्गत (इन विट्रो से) पौधों उत्पादन होता है एवं दूसरी विधि से प्रक्षेत्र में भी अगुणित पौधों का उत्पादन संभव है (इन विवो)।

इन विवो पद्धति से अगुणित उत्पादन

अगुणित उत्पादन के अनेक तरीकों में कुछ तरीकों के बारे में नीचे व्याख्या की गयी है। स्वाभाविक अगुणित का विकास सेब, नाशपाती, बेर जैसे फलों में त्वरित एवं अल्प आयु के अगुणित पौधे प्राप्त तो जरूर होते हैं किन्तु उनकी अगुणित होने की आवृति बेहद कम है। अतः यह अगुणित उत्पादन की प्रचलित तकनीक नहीं है।

दूरस्थ संकरण

दूरस्थ संकरण में संकर का उत्पादन नर एवं मादा पौधे के एक जीनोम के उन्मूलन से होता है। नीबू के पौधों में द्विगुणित और त्रिगुणित के संकरायण से अगुणित का उत्पादन किया गया है।

किरणन प्रभाव

इस पद्धति में पराबैगनी किरणें या एक्स-रे का उपयोग कर गुणसूत्रों को तोड़ा जाता है और उनका उन्मूलन कर उसमें से अगुणित का उत्पादन किया जाता है। नीबू, नाशपाती और सेब में इस तकनीक का प्रयोग कर अगुणित पौधों का उत्पादन संभव है।

रासायनिक उपचार

कुछ रसायन जैसे कोल्चिसिन, नाइट्रस ऑक्साइड, मेलिक हाइड्राज़ाइड के इस्तेमाल से दैहिक कोशिकाओं में गुणसूत्रों का निष्कासन कर अगुणित पौध का उत्पादन किया जाता है।

गुणसूत्र निष्कासन

इस पद्धति में चयनात्मक गुणसूत्र निष्कासन जो कुछ अंतरजातीय परागण का अनुसरण करती है उससे अगुणित का उत्पादन किया जाता है।

[1,2,3] वैज्ञानिक

अनिषेक जनन

अपरागित मादा गैमीटोफाइट से उत्पन्न अगुणित को गाइनोजेनेसिस कहते हैं। यह विधि तब तक उपयोगी नहीं है जब तक विशेष चिन्हकों का प्रयोग नहीं किया जाये।

अगुणित उत्पादन में इन विवो तकनीक का उपयोग कर जैव प्रौद्योगिकी कार्यक्रम में निम्नलिखित दो तरीकों से अगुणित का उत्पादन किया जाता है।

एन्ड्रोजेनेसिस

परागकोश या पराग संवर्धन प्रक्रियाओं के माध्यम से उत्पन्न होने वाले अगुणित को एंड्रोजेनिक अगुणित कहा जाता है। एंड्रोजेनेसिस में नर युग्मज के द्वारा अगुणित उत्पन्न किया जाता है। एंड्रोजेनेसिस की दो पद्धतियाँ होती है- परागकोश संवर्धन एवं पराग संवर्धन जिनका विवरण निम्नांकित में दर्शाया गया है।

परागकोश संवर्धन

इस पद्धति में चयनात्मक पौधों की कलियों को निर्जर्मीकृत करने के बाद परागकोश में से केसर को निकला जाता है। परागकोश को निर्जर्मीकृत स्थान में से निकाल कर उसको 1 प्रतिशत (1%) एसीटोकार्मिंन में चूरा बना लेते है। परागकोश संवर्धन प्रकाश (12-18 घंटे) और अंधकार (6-12 घंटे) में क्रमशः 28 सें.ग्रे. तापमान पर रखा जाता है और परागकोश गुणित होकर कैलस उत्पन्न करता है और उससे अगुणित उत्पन्न होता है।

पराग/माइक्रोस्पोर संवर्धन

अगुणित पौधे अपरिपक्व पराग या माइक्रोस्पोर से उत्पन्न किये जा सकते है। परागकोश को एक कांच की छड़ से बीकर के आतंरिक दीवार में दबा कर निचोड़ने से उसमें से पराग निकाला जाता है। पराग सस्पेंशन को छान के उसमे से परागकोश के अवशेष को निकला जाता है। जीवित और बड़े आकार वाले पराग को छानने के बाद उनमें धोकर संग्रह किया जाता है। उसके बाद पराग को एक ठोस या तरल माध्यम में संवर्धित किया जाता है। उत्पन्न हुए कैलस/भ्रूण को उपयुक्त माध्यम में स्थानांतरित कर अगुणित एवं द्विगुणित पौधा उत्पन्न किया जाता है।

गाइनोजेनेसिस

भ्रूण एवं भ्रूण संवर्धन के द्वारा जब अगुणित उत्पन्न होता है तो इस प्रक्रिया को गाइनोजेनेसिस कहते हैं। अगुणित का द्विगुणन (समयुग्मज पौधों का उत्पादन) (गुणसूत्रों का दोहराव) कर समयुग्मज उत्पन्न किया जाता है। द्विगुणन की दो पद्धतियाँ हैं।

कोल्चिसिन का उपचार

कोल्चिसिन व्यापक रूप से गुण सूत्रों को द्विगुणित करने के लिए उपयोग किया जाता है। कोल्चिसिन वस्तुतः तंतु बनने में एक निरोधी का कार्य करता है और गुण सूत्र प्रतिलिपिकरण में सहायक होता है। कोल्चिसिन उपचार की विभिन्न पद्धतियों को संक्षिप्त रूप से नीचे दर्शाया गया है। जब पौधे परिपक्व होते है तो कोल्चिसिन का लेप पत्ते के कक्ष में लगाया जाता है फिर मुख्य कक्ष को काट दिया जाता है जो कलियों को द्विगुणित और फलदायक बनाने में प्रोत्साहित करता है। युवा पौधों को सीधे कोल्चिसीन द्रवण में उपचार कर धोने के उपरांत पुनः रोपा जाता है। यह अगुणित उत्पन्न करने में मदद करती है।

अन्तःसूत्री विभाजन

अन्तःसूत्री विभाजन पद्धति में केन्द्रक के विभाजन के बिना गुण सूत्रों को द्विगुणित किया जाता है। अगुणित के एक छोटे से हिस्से को उपयुक्त माध्यम में वर्धन नियंत्रक (ऑक्सीन और साइटोकिनिन) में उत्पन्न किया जाता है। कैलस के गठन के उपरांत अन्तःसूत्री विभाजन पद्धति से गुणसूत्र द्विगुणित होता है।

अगुणित उत्पादन के उपयोग

समयुग्मजी श्रेणी का उत्पादन

कोल्चिसिन का उपयोग कर समयुग्मजी को उत्पन्न किया जाता है जिससे की गुण सूत्र द्विगुणित होता है।

उत्परिवर्तन का उद्भव

उच्च वर्गीय पौधों में अप्रभावी उत्परिवर्तन जो अगुणित अवस्था में है उनको पहचानना एवं निकलना संभव है। उत्परिवर्तन जिन का समयुग्मक द्विगुणित अवस्था में हैं उनका त्वरित उद्भव इसकी खास पहचान है।

परकीय गुणसूत्रों के साथ नये अभिगमन की प्राप्ति

परागकोश संवर्धन तकनीक को अंतःजाति एवं अन्तः वर्गीय संकरीकरण तकनीक का मिश्रण कर नयी किस्म की उत्पत्ति की जा सकती है।

आनुवांशिकी बदलाव

अगुणित का उपयोग कर मात्रात्मक वंशानुक्रम के संयोग का अनुसंधान किया जाता है और इसके व्यवहार से पुनर्संयोजना संख्या की गणना की जाती है।

कोशिका-आनुवांशिकी शोध

अगुणित का उपयोग एनुप्लोयेड के उत्पादन में प्लाइडी के स्तर को जानने में एवं मूल गुणसूत्रों की जांच करने में किया जाता है।

दैहिक मिश्रण

अगुणित के प्रोटोप्लास्ट का उपयोग कर उर्वर द्विगुणित पौधों का उत्पादन होता है।

विभिन्न फलों में अगुणित की महत्ता

अगुणित का प्रयोग विभिन्न फल जैसे नीबू, नाशपाती, पपीता, सेब, शहतूत, केला, जैतून में किया गया है और उसकी महत्वपूर्ण उपलब्धियों का अवलोकन नीचे दर्शाया गया है।

(*क्लेमेंटाइन मांडारिन × पर्ल टांजेलो*) गाइनोजेनेसिस

नीबू में गामा किरण के इस्तेमाल से द्विगुणित एवं द्विगुणित के संकरीकरण (*क्लेमेंटाइन मांडारिन × पर्ल टांजेलो* गाइनोजेनेसिस) के इस्तेमाल से अगुणित भ्रूण उत्पादित किया जाता है। नासपाती की किस्म जैसे डोयेन डु कमिश, विलियम्स हारो स्वीट में स्व स्थाने अनिषेक जनन, किरणों के उपचार, पौध चयन जैसे तकनीक के प्रयोग से अगुणित का उत्पादन किया गया है। परागकोश संवर्धन तकनीक के प्रयोग से पपीता में अगुणित का उत्पादन हुआ है। सेब में स्व स्थाने अनिषेक जनन, किरणन उपचार (कोबाल्ट 60 के गामा रश्मि) से अगुणित का उत्पादन किया गया है। शहतूत में इन विट्रो पद्धति से अगुणित विकसित हुआ है। केला में परागकोश संवर्धन तकनीक के प्रयोग से पिसंग क्लुतक वुलुंग एवं तानी जैसे वंसानूप्रकार से अगुणित का विकास हुआ है। जैतून में पराग संवर्धन से अर्बेकुइना एवं पिक्युअल जैसे दो किस्मों में अगुणित का उत्पादन किया गया है।

निष्कर्ष और भविष्य दृष्टि

अगुणित और द्विअगुणित पौध, फसल सुधार के महत्वपूर्ण औज़ार है। इनके विकास हेतु इस्तेमाल किये गए तकनीकों में से इन विट्रो संवर्धन तकनीक प्रभावशाली होती है। फल में लम्बे प्रजनन चक्र, अतिरिक्त असंयुग्मजता, जटिल प्रजनन जैसे कठिनाइयों के चलते जैवप्रौद्योगिकी तकनीक पारंपरिक प्रजनन विधि से श्रेष्ठ है। अगुणित पौध उद्पादन कर नयी एवं सुधरी फल किस्मों का विकास कम समय एवं सटीक तरीके से किया जा सकता है।

'कुरुक्षेत्र'

क्षमा दया तप त्याग मनोबल, सबका लिया सहारा।
पर नर व्याघ्र सुयोधन तुमसे, कहों कहाँ कब हारा।।

तुड़ाई उपरान्त फल प्रबंधन में प्लास्टिक की भूमिका

भारती किल्लाड़ी[1], रेखा चौरसिया[2] एवं डी.के. शुक्ला[3]
[1,2,3]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

प्लास्टिक एक ईथीलीन, प्रोपलीन, विनाइल, स्टरीन आदि अणुओं का बहुलक एवं पेट्रोलियम पदार्थो का उप उत्पाद हैं। यह वजन में हल्का, टिकाऊ, ऊष्मा का कुचालक तथा वांछित रूप में ढाला जा सकने वाला पदार्थ है।

बागवानी विज्ञान में प्लास्टिक का उपयोग बीज अंकुरण, पौध संवर्द्धन, कृषि क्रियाओं, पलवार, सिंचाई से तुड़ाई उपरान्त एवं पौध संरक्षण एवं विपणन तक में किया जाता है। प्लास्टिक जंग रहित, अक्रियाशील तथा फफूँद संक्रमण रोधी होने के कारण आजकल फल एवं सब्जी के तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन (तुड़ाई, रख-रखाव, पैकिंग, भंडारण, प्रसंस्करण, संवहन तथा विपणन) में उपयोग में लाया जा रहा है।

हम जानते हैं कि फल तुड़ाई उपरान्त रख-रखाव और विपणन के दौरान तेजी से खराब होते हैं जिससे उत्पादन का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा नष्ट हो जाता है। अतः विभिन्न प्रकार के नुकसान को वैज्ञानिक तरीकों से तुड़ाई कर, रख-रखाव, पैकिंग, ढुलाई एवं उचित भंडारण तथा समुचित विपणन द्वारा कम किया जा सकता है। प्लास्टिक निम्नलिखित गुणों को कारण तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन में प्रचलित है।

1. सस्ती एवं हल्की होने के कारण।
2. बार-बार उपयोग आसान होने के कारण।
3. संवहन में कम खर्चा एवं कम जगह घेरने के कारण।
4. फलों की ढुलाई बिना खरोंच सम्भव होने के कारण।
5. जंग अवरोधी होने के कारण।

प्लास्टिक की उपयोगिता

तुड़ाई के एक माह पूर्व फलों में परिपक्वता आने पर तनों तथा फलों के चारों तरफ प्लास्टिक फिल्म से जमीन को ढकने से फलों में सुप्त संक्रमण नहीं आता है और फल स्वस्थ तथा अधिक भंडारण योग्य होते हैं तथा इनका पक्षियों के अतिक्रमण से भी बचाव होता है।

[1]वैज्ञानिक एवं [2,3]सहा. मुख्य तकनीकी अधिकारी

तुड़ाई के दौरानः प्लास्टिक से बने फल तोड़क यंत्र की जाली, बैग या रस्सी उपयोग में आती है जिससे फल जमीन पर गिरने से उन पर चोट का प्रभाव नहीं होता है। तोड़े गये फलों को प्लास्टिक की शीट पर रखने से फल, मृदा जनित रोग कारकों मे सीधे सम्पर्क में नहीं आते जिससे रोग का खतरा कम हो जाता है।

रखरखावः तुड़ाई उपरान्त स्वस्थ फलों को खराब फलों से अलग कर लेना चाहिए। तत्पश्चात फलों के आकार के अनुसार विभिन्न आकार के प्लास्टिक क्रेट्स में सुरक्षित पैंकेजिंग कर शेड में लाते हैं। प्लास्टिक के विभिन्न ड्रम, टब, बाल्टी में धुलाई करने एवं हाथ के प्लास्टिक दस्तानों की सहायता से गर्म जल, बेवस्टीन (कार्बेन्डाजिम), ईथरल आदि विभिन्न रसायनों द्वारा फलों को उपचार देते हैं।

पैंकिगः आधुनिक युग में प्लास्टिक का उपयोग फलों की पैकिंग एवं संवहन के दौरान आपसी रगड़ तथा चोट से बचाने के साथ-साथ आकर्षक एवं गुणवत्तायुक्त फलों की भंडारण अवधि को बढ़ाने के लिये किया जा रहा है। उपभोक्ता की सुविधा का ध्यान में रखते हुए विभिन्न प्रकार की पैकिंग करते हैं। इससे चोरी का डर कम हो जाता है।

प्लास्टिक अस्तर (लाइनिंग): प्लास्टिक शीट का उपयोग पैकिंग लाइनिंग के रूप में किया जा सकता है यह फलों की जैविक क्रियाएँ जैसे वाष्पीकरण, श्वसन आदि की गति मंद कर फलों की जैविक वजन घटने की दर कम करता है जिससे ये फल उचित अवस्था में पकने के पश्चात आर्कषक दिखते हैं। इसके फलस्वरूप उत्पादक को उचित मूल्य एवं उपभोक्ता को सन्तुष्टी के साथ-साथ फलों की भंडारण क्षमता भी बढ़

प्लास्टिक के प्रकार

- प्राकृतिक
  लाख
- कृत्रिम
  रसायनिक विधि से तैयार प्लास्टिक जो अन्य तत्वों के संयोग से तैयार की जाती है

थर्मोप्लास्टिक

(गर्म करने पर मुलायम एवं ठण्डा होने पर कठोर, यह गुण सदैव बना रहता है (रिंसाइकल योग्य))

थर्मोसेटिंग प्लास्टिक

(मात्र एक बार इच्छित रूप में ढाला जा सकता है
उपयोगः बेकेलाइटः प्लास्टिक ट्रे, ड्रम)

विनाइल प्लास्टिक

(पीवीसी या जी.वी.ए. का संकर होता है
उपयोगः सिंचाई पाइप एवं पलवार शीट्स)

1. पॉलीइथीलीन : कम एवं अधिक घनत्व के आधार पर एल.डी.पी.ई. एवं एच.डी.पी.ई. पैकेजिंग फिल्मस, बैग, लाइनिंग सामग्री।
2. पॉलीप्रोपाईलीन : पैकेजिंग फिल्मस, संवहन कन्टेनर, फलों को लपेटनें की स्लीब्ज।
3. पॉलीस्टीरीन : कुसनिंग सामग्री, डिसपोजल कप या अन्य सामग्री।
4. नाइलॉन : बैंग, जाली व अन्य।

जाती है (वायुमण्डलीय आपेक्षिक आर्द्रता कम होने की दशा में प्लास्टिक लाइनिंग लाभदायक पायी गयी)।

प्री पैकेजिंगः इस पद्धति में उपभोक्ता पैक में फलों को बाग या गंतव्य स्थल पहुँचने के बाद शीर्ष विपणन केन्द्रों पर छोटे-छोटे प्लास्टिक के डिब्बों में रखता जाता है जिससे उपभोक्ता अपनी आवश्यकतानुसार क्रय करता है। इसके निम्नलिखित लाभ है।

1. प्री पैंकेजिंग में संवहन खर्च कम हो जाता है क्योंकि इसमें फलों के अनुपयोगी भागों को संवहन से पूर्व ही हटा दिया जाता है तथा पोत परिवहन एवं भंडारण के दौरान कम जगह घेरता है।
2. प्री पैंकेजिंग में रखे गये फलों में वाष्पोत्सर्जन क्रिया मंद पड़ जाती है जिससे फलों मे झुर्रियाँ नहीं आती और फल भी आकिर्षक दिखायी देते हैं। साथ-ही-साथ फल में श्वसन एवं ईथीलीन से संबंधित रसायनिक क्रियाएँ मंद पड़ जाने से फलों की गुणवत्ता अधिक समय तक कायम रहती है।
3. फलों को प्री पैकेंजिग के दौरान विभिन्न श्रेणी में पारदर्शी फिल्म में पैक बन्द रखे होने से उपभोक्ता को फलों के चुनाव एवं विक्रेता को बेचने में कम समय लगता है।
4. प्री पैकेज्ड फल साधारण एवं कम तापमान पर लम्बी अवधि तक सुरक्षित अवस्था में भंडारित किये जा सकते हैं जिसमें विक्रेता इनको लम्बे समय तक विपणन कर अधिक लाभ प्राप्त कर सकता है।
5. आजकल स्वचालित मशीनों के आने से श्रम लागत कम लगता है एवं इसका रख-रखाव आसान होता जा रहा है।

6. आंशिक परिवर्तित वातावरण (एम.ए.पी.) पैक में होने से फलों की भंडारण एवं गुणवत्ता की बनी रहती है।

7. **विशेष उपयोगः** मशीन से तुड़ाई वाले नीबूवर्गीय फलों में मशीन क्षति होने की दशा में इन फलों को 0.015 मि.मी. एच.डी.पी.ई. फिल्म से लपेटने से फिनाइल एलेनीन एमोनियालायेज एन्जाइम की क्रियाशीलता एवं लिग्नीकरण के कारण घाव भर जाते हैं।

लाइम, ग्रेपफ्रूट को 0.1 मि.मी. मोटाई की एच.डी.पी.ई. फिल्म में लपेटने से तथा अनार, साइट्रिस की ठीक पैकेजिंग करने से शीत की हानि नहीं होती। क्रायोफ्रिजिंग में फलों के उत्पाद भी पॉली ईथीलीन फिल्म में लपेटकर ही रखते हैं। पॉली ईथीलीन आधारित मोम का पायस का उपयोग फलों की भंडारण क्षमता बढ़ा देता है।

प्रसंस्करण में फलों से निर्मित विभिन्न उत्पादों जैसे रस, अवलेह, जेली, आसवन, आचार, केंडी, मुरब्बा, सुपारी, पावडर एवं पेय को प्लास्टिक से बने पाउचों, डिब्बों, कप, बैंग, टेट्रा पैक आदि में रखने में सुविधाजनक, चोरी का भय से मुक्त, सुरक्षित एवं मिलावट से परे रहते है। तथा इनके संवहन में आसान तथा कम खर्च आता है।

वर्तमान परिदृश्य में प्लास्टिक की भूमिका

विभिन्न घनत्व या गेज की प्लास्टिक फिल्में, फलों की तुड़ाई उपरांत श्वसन कार्य को आधार मानकर ही उपयोग में लाते है- जैसेः नॉन क्लाइमेक्ट्रीक फल (लीची, नीबू, आंवला, अंगूर, अनार) में तुड़ाई के बाद श्वसन क्रिया मंद होने एवं ईथीलीन कम बनने से इनमें वेन्टीलेसन की कम आवश्यकता पड़ती है तथा एच.डी.पी.ई. या मोटी प्लास्टिक में लम्बे समय तक गुणवत्तायुक्त बनी रहते हैं। वही दूसरी ओर क्लाइमेक्ट्रीक फलों (आम, पपीता, अमरूद, केला, चीकू) में तुड़ाई उपरान्त श्वसन के दौरान ईथीलीन अधिक बनने से इन्हें वेन्टीलेशन या कम मोटी (50-100 गेज तक) या पारगम्य प्लास्टिक फिल्में उपयुक्त रहती है। यहाँ तक भी माइक्रो परफोरेटेड पॉली फिल्म सेब के भंडारण में फलों की तुड़ाई उपरांत प्रबंधन में प्लास्टिक के उपयोग के कई सफल उदाहरण हैं।

प्री-पैकिंग में 200 गेज मोटाई की 2 प्रतिशत छिद्रयुक्त एल.डी.पी.ई. फिल्म बैंग में आम, अमरूद एवं आँवला को साधारण तापक्रम एवं शीत गृह में रखने पर तुलनात्मक रूप से अधिक दिनों तक भंडारित किया जा सकता है जिससे गुणवत्ता भी बनी रहती है। इसी तरह आँवले को 0.1 प्रतिशत बॉवेस्टन से उपचारित कर 200 गेज मोटई की 2 प्रतिशत एल.डी.पी.ई. छिद्रयुक्त फिल्म में साधारण तापक्रम पर 15 दिनों तक भंडारित किया जा सकता है।

बेन येहूथूआ 1988 के अनुसार नींबू, मौसमी, सन्तरा, ग्रेपफ्रूट को 10 मिली गाइक्रोमीटर मोटाई की एच.डी.पी.ई. फिल्म में पैंक करने से भण्डारण अवधि दोगनी तथा झुर्रियों रहित फल एवं दैहिक वजन में हानि पाँच गुना कम हो जाती है।

पपीता को प्लास्टिक की स्ट्रेच फिल्म में प्री-पैंकिग कर नियंत्रित वातावरण में रखने पर (1.5-2.0 प्रतिशत आक्सीजन, 5 प्रतिशत कार्बन डाईऑक्साइड) 29 दिन तक भंडारित किये जा सका।

स्ट्राबेरी एवं रस्पबेरी को प्री-पैकिंग पाली ईथीलीन की 100 गेज मोटाई की 2 प्रतिशत छिद्रयुक्त फिल्म में 60-80 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता पर रखने पर भंडारण अवधि बढ़ गयी।

अंगुर को 85-90 प्रतिशत आर्द्रता पर एल.डी.पी.ई. फिल्म में लपेटकर कोरूगेटेड फाइबर बाक्स में रखने पर फलों का सड़ना गलना कम होता है तथा नायलॉन की जाली में रखकर लम्बी दूरी तक पोत संवहन आसान होता है।

ट्रोयान के 1982 अनुसार सेब को 100 मि.मी. मोटाई की पाली ईथीलीन फिल्म में कम तापक्रम पर रखने से आसानी से 3-4 महीनों तक भंडारित किया जा सकता है।

केले को 0.1 मि.मी. फिल्म में पैंक कर पुराफिल (6% $KMnO_4$) के साथ रखने पर बिना पैंक की तुलना में 2-3 गुना अधिक भंडारण अवधि देखी गयी।

आम की दशहरी एवं लगड़ा किस्मों को 3-6 प्रतिशत मोम इमल्शन का उपचार देकर उन्हें पाली ईथीलीन बैंग में

रखने से साधारण दशा में भंडारण अवधि 12 दिनों तक बढ़ गयी।

भविष्य में प्लास्टिक उपयोग की सम्भावनायें

इस प्रकार उपरोक्त विवरण के अनुसार प्लास्टिक का बगीचों से लेकर उपभोक्ता तक ताजे फलों एवं संसाधित पदार्थ के उपयोग तक विभिन्न रूपों में इसका उपयोग होता है और दिनों-दिन बढ़ने की सम्भावनाएं भी हैं। यदि वर्तमान युग को प्लास्टिक युग कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। भविष्य में यदि अनुसंधान के माध्यम से कुछ ऐसे बायो-डिग्रेडेबल प्लास्टिक पदार्थ बनाये जायें तो प्लास्टिक प्रदूषण की समस्या से निजात पाया जा सकता है। इसके साथ ही यदि ब्रीथ शीट का निर्माण यदि किया जाये तो फलों को लम्बी अवधि तक भंडारित करने में अधिक सफलता मिल सकती है।

क्या पूजन क्या अर्चन रे!

उस असीम का सुंदर मंदिर
मेरा लघुतम जीवन रे
मेरी श्वासें करती रहतीं
नित प्रिय का अभिनंदन रे

पद रज को धोने उमड़े
आते लोचन में जल कण रे
अक्षत पुलकित रोम मधुर
मेरी पीड़ा का चंदन रे

स्नेह भरा जलता है झिलमिल
मेरा यह दीपक मन रे
मेरे दृग के तारक में
नव उत्पल का उन्मीलन रे

धूप बने उड़ते जाते हैं
प्रतिपल मेरे स्पंदन रे
प्रिय प्रिय जपते अधर ताल
देता पलकों का नर्तन रे

– महादेवी वर्मा

प्याज का उत्पादन

श्याम राज सिंह[1] एवं इसरार अहमद[2]

[1,2]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

प्याज एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। दुनिया में प्याज के उत्पादन एवं क्षेत्रफल दोनों ही दृष्टि से भारत का दूसरा स्थान है। प्याज निर्यात के क्षेत्र में नीदरलैंड, मैक्सिको, चीन एवं स्पेन के बाद भारत का पाँचवा स्थान है। भारत में सब्जी उत्पादन का 12 प्रतिशत हिस्सा प्याज का है। देश में उगायी जाने वाली सब्जियों में क्षेत्रफल तथा उत्पादन दोनों ही दृष्टि से प्याज का दूसरा स्थान है। किन्तु निर्यात की जाने वाली सब्जियों में प्याज के निर्यात का 75 प्रतिशत हिस्सा है। भारत में प्याज का सर्वाधिक उत्पादन महाराष्ट्र में होता है। यहाँ देश के कुल उत्पादन क्षेत्र का 30.1 प्रतिशत हिस्सा आता है। विदेशी मुद्रा अर्जन में प्याज महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

चार्जः अपने स्वाद, गंध, पौष्टिकता एवं औषधीय गुणों के कारण प्याज की मांग घरेलू तथा विदेशी बाजार में दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसकी मांग और मूल्यों में उतार-चढ़ाव के कारण भारत सरकार को प्याज को आवश्यक वस्तु अधिनियम के अन्तर्गत लाना पड़ा।

अब तक उत्तर भारत में प्याज की केवल रबी के मौसम की फसल ही ली जाती रही थी। किन्तु कुछ नवीनतम प्रजातियों और तकनीकों के विकास से खरीफ के मौसम में भी प्याज का उत्पादन कर देश के बाजार में निरन्तर प्याज की उपलब्धता बनायी जा सकी है तथा अधिक लाभ भी कमाया गया है। खरीफ के मौसम के दौरान की जाने वाली प्याज के उत्पादन की प्रमुख बातें निम्नांकित हैं।

खरीफ की फसल के अन्तर्गत उगायी जाने वाली प्रमुख उन्नत किस्में

- **एन-53:** यह खरीफ की फसल की एक प्रमुख किस्म है। इसके कन्दों का रंग हल्का लाल, स्वाद मिठास भरा हल्का तीखापन लिये हुए होता है। इसकी उपज 225 से 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक होती है।
- **एग्रो फाउन्ड डार्क रेडः** इस प्रजाति के कन्द का रंग गहरा लाल होता है। यह केन्द्रीय उपजाति मोचन समिति द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर जनहित में जारी की जा चुकी है। इसकी विशेषताएँ लगभग एन-53 के समान हैं।
- **भीमा सुपरः** यह प्रजाति प्याज एवं लहसुन अनुसंधान निदेशालय द्वारा विकसित कर छत्तीसगढ़, दिल्ली, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान और तमिलनाडु के लिए संस्तुत की गयी है। यह 100-105 दिन में तैयार होने वाली प्रजाति है। कन्द का रंग लाल होता है तथा उत्पादन क्षमता लगभग 200 क्विंटल होती है।
- **भीमा डार्क रेडः** यह प्याज और लहसुन निदेशालय द्वारा विकसित विलंबित खरीफ और रबी दोनों समय के लिए उपयुक्त प्रजाति है। रोपड़ के 100-105 दिन में तैयार हो जाती है।
- **भीमा लालः** यह 110-115 दिन में पकने वाली प्रजाति है। इसकी उतपादन क्षमता 190-210 क्विंटल/हेक्टेयर होती है।
- **भीमा श्वेताः** यह सफेद रंग की प्रजाति खरीफ और रबी दोनों ही समय के लिए उपयुक्त है। खरीफ में 180-200 क्विंटल/हेक्टेयर उपज देती है।
- **अर्का प्रगतिः** यह किस्म खरीफ और रबी दोनों मौसम में सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। इसके गाठों का रंग गुलाबी, गर्दन पतली तथा स्वाद तीखा होता है।
- **अर्का-निकेतनः** यह किस्म भी रबी तथा खरीफ दोनों मौसम में उगाने के लिये प्रस्तावित की गयी है। यह 150 दिन में तैयार हो जाती है।

[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं [2]वैज्ञानिक

- **अर्का-कल्यान:** यह किस्म पर्पिल ब्लांच रोधी है। इसके कन्दों का रंग गहरा गुलाबी तथा खरीफ में उत्पादन हेतु संस्तुत की गयी है।
- **बसवन्त-780:** यह किस्म रबी तथा खरीफ दोनों ऋतुओं के लिये प्रस्तावित की गयी है। कन्दों का रंग चमकीला लाल तथा उत्पादन क्षमता 200-250 क्विंटल तक होती है।

भूमि

खरीफ मौसम में पैदा की जाने वाली प्याज के लिये उच्च जीवांशयुक्त जल निकास वाली बलुई दोमठ भूमि उपयुक्त होती है। अधिक उपज के लिये भूमि का पी.एच.मान 6 से 7 के बीच होना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

प्याज की उत्तम उपज हेतु विभिन्न राज्यों में 100-150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40-80 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 0-125 कि.ग्रा. पोटैश के अलावा 25 से 30 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से संस्तुत की गयी है। रोपाई से 15 दिन पूर्व खेत की तैयारी के समय गोबर की खाद मिला देनी चाहिए। फास्फोरस और पोटैश की पूरी मात्रा तथा संस्तुत नाइट्रोजन की मात्रा की आधी मात्रा रोपाई के समय जबकि नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा दो बराबर मात्रा में रोपाई के एक-एक माह के अन्तर पर देनी चाहिए।

बीज की मात्रा एवं बोआई का समय

खरीफ के मौसम में प्याज का उत्पादन दो विधियों से किया जाता है। पौध तैयार कर एवं गट्ठियाँ तैयार कर। इसका 8 से 10 कि.ग्रा. बीज एक हेक्टेयर में फसल पौध उगाने के लिये पर्याप्त होता है। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिये गट्ठियाँ तैयार करने हेतु 5-6 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। पौध तैयार करने के लिये बीज की बोआई मई-जून में की जा सकती है तथा गट्ठियाँ तैयार करने के लिये बीज की बोआई जनवरी माह में उचित होती है।

पौध तैयार करने की विधि

क्षेत्र में एक हेक्टेयर फसल पौध तैयार करने हेतु 200 वर्ग मीटर क्षेत्र में पौधशाला की आवश्यकता होती है। पौध तैयार करने हेतु 10-15 सें.मी. ऊँची, एक मीटर चौड़ी तथा आवश्यकता अनुसार लम्बी क्यारियाँ बनानी चाहिए। दो क्यारियों के बीच 30 सें.मी. खाली जगह खरपतवार निकालने तथा जल निकास के लिये छोड़ना चाहिए।

पौधशाला को रोग मुक्त रखने के लिये बीज को *थाइराम* या *केप्टान* 2.5 ग्राम/कि.ग्रा. मात्रा बीज से उपचारित करना चाहिए। भूमि उपचार के लिये *फारमलडिहाइड* या *केप्टान* का प्रयोग करना चाहिए। *फारमलडिहाइड* की 15 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर 15 सें.मी. गहराई तक भूमि को भिगोना चाहिए। तत्पश्चात इसको 24 घंटे तक पालीथीन से ढकते हैं। फिर मिट्टी को खोदकर दो दिन खुला छोड़ देने से भूमि से दवा की गंध निकल जाती है। *थाइराम* या *केप्टान* द्वारा भूमि का शोधन करने के लिये 4-5 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मीटर की दर से उपयोग में लाते हैं। बीज की बोआई लाइनों में करने के बाद भूमि समतल कर गोबर की खाद एवं छनी हुई मिट्टी द्वारा ढ़क देना चाहिए। नमी संरक्षण हेतु पौधशाला को सूखी घास द्वारा ढ़क देना चाहिए। आवश्यकतानुसार फव्वारे से पानी देते हैं। अंकुरण के बाद घास को हटा देते हैं। पौध को बीमारी से बचाने के लिए *थाइरम* की 2-3 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। 15-20 सें.मी. लम्बी पौध होने पर रोपाई करें।

गट्ठियों द्वारा फसल लेने के लिये जनवरी में 2.5 ग्राम/वर्ग मीटर की दर से बीज पौधशाला में बोते हैं तथा अप्रैल तक उसी स्थान पर गट्ठियाँ तैयार हो जाती हैं। उनको निकालकर हवादार शुष्क तथा सुरक्षित स्थान पर भंडारित कर लेते हैं।

रोपण विधि

पौधों को अगस्त के प्रथम सप्ताह में लगाते हैं। पौधों के बीच की दूरी 10 सें.मी. तथा कतार-से-कतार की दूरी 15 सें.मी. रखते हैं। गट्ठियों द्वारा प्याज उतपादन में 2 से 2.5

से.मी. व्यास की गठियाँ उपयुक्त होती है। एक हेक्टेयर के लिये 10 से 12 क्विंटल की आवश्यकता होती है। अधिक पैदावार के लिये गट्ठियों को मेड़ों पर दोनों तरफ 10 से.मी. दूरी पर लगाना चाहिए।

खर-पतवार नियंत्रण

उत्तम फसल के लिये 2-3 निराई-गुड़ाई की आवश्यकता होती है। रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण के लिये *टेनोरान* की 2.5 कि.ग्रा. मात्रा 600 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से रोपाई के तीन-चार सप्ताह बाद प्रयोग करने पर परिणाम अच्छा मिलता है। *वैसालिन* की एक लीटर या *स्टाम्प* की तीन लीटर मात्रा 800 लीटर पानी में रोपाई के तुरन्त बाद प्रयोग करने से एक हेक्टेयर फसल क्षेत्र में होने वाले खरपतवार को नियंत्रित किया जा सकता है।

सिंचाई

वर्षा ऋतु की फसल में सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी वर्षा न होने पर 15 दिन के अन्तर पर पानी देना चाहिए। कुल 8 से 10 सिंचाई की जानी चाहिए।

कीट एवं व्याधियाँः प्याज के प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ निम्नलिखित है।

थ्रिप्स

ये कीट पत्तियों पर सफेद धब्बा पैदा करते हैं। बाद में पत्तियों का सिरा भूरे रंग में बदल जाता है। इसके नियंत्रण हेतु *मैलथियान* या *मेटा सिस्टाक्स* (0.1 प्रतिशत) *साइपरमेथिडीन* (0.01 प्रतिशत) की दर से छिड़काव करें।

यह प्याज की प्रमुख बीमारी है। यह पहले पुराने पत्तों पर धब्बों के रूप में दिखायी देता है। बाद में धब्बे बड़े हो जाते है। पत्तियाँ पीली या भूरी होकर गिरने लगती हैं।

पर्पिल ब्लांच

जिससे पत्तियों पर बैंगनी धब्बे बन जाते हैं। नियंत्रण हेतु डाईथेन एम-45 2.5 ग्राम/लीटर की दर से छिड़काव करें तथा 10-12 दिन पर पुनः करें।

स्टेम फिलियम ब्लाइटः यह उष्ण आर्द्र क्षेत्र की प्रमुख बीमारी है। इसके प्रकोप से पत्तियाँ सूखने लगती है। उष्ण एवं नम जलवायु इस रोग के बढ़ाने में अत्यन्त सहायक होते हैं। नियंत्रण हेतु 2.5 ग्राम/लीटर की दर से *डाइथेन* एम-45 का छिड़काव करें।

खुदाई एवं उपज

फसल की खुदाई 50 प्रतिशत वायवीय तने के पतन के एक सप्ताह बाद करते हैं। ठंड के मौसम के कारण कभी-कभी तने लम्बे समय तक हरे रहते हैं। अतः कन्द के उचित आकार एवं रंग ग्रहण कर लेने की स्थिति में खुदाई कर लेनी चाहिए। खुदाई के बाद कन्दों की पत्तियों सहित इस प्रकार बिखेरना चाहिए जिससे प्रथम लाईन के कन्द, दूसरी लाईन की पत्तियों से ढक जाये। मौसम के अनुसार पत्तियों को तीन-चार दिन छोड़ने पर ये पीली पड़कर मुरझा जाती है। सूखने के बाद कन्दों को 2-3 सें.मी. गर्दन छोड़कर अलग कर लेना चाहिए। इससे भंडारण के समय क्षति में कमी होती है। इससे औसतन 200 से 250 क्विंटल उपज प्राप्त होती है।

खुदाई के पूर्व एवं पश्चात में प्रबंधन की निम्नलिखित तकनीकी अपनाकर भंडारण की हानि को कम किया जा सकता है।

- खुदाई से 15 दिन पूर्व सिंचाई बन्द कर देने से कन्द सुडौल एवं ठोस बन जाती है जिससे भंडारण में कम हानि होती है।
- रोपड़ के 80-85 दिन बाद मैलिक हाइड्राजाइड 2.5 ग्राम प्रति लीटर की दर छिड़काव करने से भंडारण के समय अंकुरण की समस्या से बचा जा सकता है।
- जीवाणु एवं अन्य सूक्ष्म जीवों द्वारा होने वाली सड़न की क्षति को 0.15 प्रतिशत *कार्बेन्डाजिम* या 0.2 प्रतिशत *डिफोलेटन* का छिड़काव खुदाई से 15 दिन पूर्व करने पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

- क्षतिग्रस्त तथा छोटे कन्दों की छँटनी के बाद कन्दों का बड़े, मध्यम तथा छोटे आकार में श्रेणीकरण करना चाहिए। मध्यम आकार के कन्दों की भंडारण क्षमता अधिक होती है।
- क्योरिंग के बाद कन्दों को घास के छत वाले हवादार खिड़कीयुक्त एवं वर्षा से सुरक्षित भण्डार गृह में रखना चाहिए। 23.9 से 29.4 डिग्री सें.ग्रे. तापमान पर भंडारित करने पर कन्दों के भार में 9 माह तक सबसे कम कमी होती है।
- नेफेड द्वारा बहुस्तरीय भण्डारण पद्धति का विकास किया गया है जो ऊँचे प्लेटफार्म वाला जमीन से ऊपर तथा वायु आवागमन के उपयुक्त होने के कारण भंडारण में सबसे कम क्षति होती है।

अतः किसानों द्वारा उचित तकनीकी एवं प्रबंधन विधियों को अपनाकर खरीफ की प्याज से अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

नीतिश्लोक

पुस्तकेषु च या विद्या परहस्तेषु यद्धनम।
उत्पन्नेषु च कार्येषु न सा विद्या न तद्धनम।।

अर्थ : जो विद्या पुस्तकों में लिखी है और कंठस्थ नहीं है तथा जो धन दूसरों के हाथ में गया है, ये दोनों आवश्यकता के समय काम नहीं आते।

शैले-शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने।।

अर्थ : हर एक पर्वत पर माणिक नहीं होते, हर एक हाथी में (उसके गंडस्थलमें) मोती नहीं मिलते साधु सर्वत्र नहीं होते और हर वन में चन्दन नहीं होता है।

यस्मिन देशे न सम्मानो न वृत्तिर्न च बांधवः।
न च विद्यागमोऽप्यस्ति वासस्तत्र न कारयेत।।

अर्थ : जिस जगह हमें आदर-सम्मान न मिलें, जिस स्थान पर पैसा कमाने का कोई साधन न हो, जहां हमारा कोई मित्र या रिश्तेदार न हो, जहां कोई ज्ञान न हो और जहां कोई गुण या अच्छे कार्य न हो, वैसे स्थानों को तुरंत छोड़ देना चाहिए। यही समझदार इंसान की पहचान है।

अंदमान-निकोबार द्वीपों में पाये जाने वाले महत्वपूर्ण गौड़ फल

इसरार अहमद[1] एवं सुशील कुमार शुक्ल[2]
[1,2]भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

हमारे देश में विभिन्न प्रकार की मिट्टी एवं जलवायु की उपलब्धता के कारण कई उपेक्षित या गौड़ फलों की व्यावसायिक काश्त की अच्छी सम्भावनायें हैं। इन फलों में ऐंटीऑक्सीडेंट, विटामिन जैसे पोषक तत्व एवं खनिज पदार्थ प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इन्हें विभिन्न विपरीत परिस्थितियों वाली मिट्टी एवं जलवायु में उगाया जा सकता है। जनजातीय एवं आदिवासी क्षेत्रों में बागवानी के प्रसार एवं लोगों को पोषकीय सुरक्षा प्रदान करने में ये फल काफी मदद कर सकते हैं। प्रस्तुत पत्र में ऐसे ही फलों की महत्ता, पोषकीय गुणों तथा व्यावसायिक काश्त की सम्भावनाओं पर प्रकाश डाला गया है। परंपरागत रूप से उपेक्षित होने के बावजूद गौड़ फलों में पोषण की मात्रा बहुत सारे व्यावसायिक फलों की तुलना में बराबर या अधिक होती है। अनेक गौड़ फल आमदनी के लिहाज से काफी महत्वपूर्ण होते हैं लेकिन जागरूकता एवं जानकारी के अभाव में ये गौड़ फल विदेशी फलों से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाते हैं। पारंपरिक फलों की तुलना में इन गौड़ फलों की देखभाल भी कम करनी पड़ती है तथा इनमें सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा प्रचुर होती है। इसलिये ये गौड़ फल खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के साथ-साथ कुपोषण का भी मुकाबला करने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। परन्तु अभी तक इन फलों की शोधकर्ताओं और बागवानी विभागों द्वारा उपेक्षा ही की गयी है। मानव आहार में इनकी उपयोगिता, समावेश एवं उनके अधिक इस्तेमाल के द्वारा उनके संरक्षण में सहायता कर सकते हैं।

अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह पौधों तथा जंतुओं की जैव विविधता के हिसाब से काफी सम्पन्न क्षेत्र है। यहाँ की जलवायु नम ऊष्ण कटिबंधीय है। यहाँ पर लगभग 2500 नग्नबीजी पौधों की प्रजातियाँ पायी जाती हैं। इनमें से 200 से अधिक स्थानीय प्रजातियाँ हैं। 50 से अधिक पौधों की प्रजातियों को विभिन्न प्रकार से औषधीय पौधों के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। इन द्वीप समूहों में 40 से अधिक विभिन्न गौड़ फलों की प्रजातियाँ उपस्थित हैं जिनमें विभिन्न लघु एवं दीर्घ उपयोगी पोषक तत्वों की प्रचुर मात्रा उपस्थित होती है। प्राचीन काल से ही ये फल द्वीपों में पायी जाने वाली जनजातियों के लिये कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खानिज पदार्थ, विटामिन का मुख्य स्रोत रहे हैं। इन फलों में से व्यावसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण फल तथा उनका पोषक मान सारणी 1 में दिया गया है। इनमें से कुछ फल जैसे अनोना म्यूरिकाटा जिन्हें खट्टा सीताफल या मामफल के नाम से भी जानते हैं। इसके फलों एवं उससे बने उत्पादों का प्रयोग कैंसर इलाज में किया जा रहा है। कैंसर एवं अन्य विभिन्न बीमारियों में इसकी पत्तियों से बने काढ़े का प्रयोग किया जाता है। इस फल के ऊष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में व्यावसायीकरण की अच्छी सम्भावनायें हैं।

विगत वर्षों में खाद्यान्न या फलों के कुछ ही व्यावसायिक प्रकार एवं किस्मों को महत्व देने से हमारे देश की वन सम्पदा में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध फलों एवं फसलों को काफी नुकसान पहुँचाया है। कई बार ऐसी फसलों के अधिकाधिक दोहन से पारिस्थितिकीय तंत्र को भी खतरा उत्पन्न हो जाता है। इसलिये जैव विविधता संरक्षण एवं इस बहुमूल्य फसलों को विकसित कर इनकी खेती बढ़ाये जाने की आवश्यकता है।

Qy dk uke	Vh-,l-,l- ¼0fcDl½	vEyrk	foVkfeu lh ¼fe-xk-@100 xk-½	dy dkckZgkbMªsV ¼fe-xk-@xk-½	dy ikVhu ¼fe-xk-@xk-½
अनोना म्यूरिकाटा	13	2	48	10	1
एरीडीसिया सोलेनेसी	21	3.8	176	8.6	1.5
गार्सीनिया कोवा	9	3.4	63	15.7	2.8
अट्लांटिया मोनोफिला	16	0.38	12.9	7.9	1.3
म्युटीजिया कैलाबूरा	16.5	0.16	123	75.3	6.4
स्पांडियास साइथीरिया	5.2	1.28	35	11.37	1.0

[1]वैज्ञानिक एवं [2]प्रधान वैज्ञानिक

वाई. 2 के. 38 : समस्या तथा संभावित दुष्परिणाम

एच.सी. वर्मा[1] एवं दीपक कुमार वर्मा[2]
[1,2]भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रेहमानखेड़ा, लखनऊ
[2]एम.सी. सक्सेना ग्रुप ऑफ़ कॉलेजेज, लखनऊ

प्रस्तावना

19 जनवरी 2038 का अनेक कम्प्यूटेशनल प्लेटफार्मों के लिए एक गंभीर समस्या हो सकती है क्योंकि यह प्रणाली एक समय के बाद कार्य करना बन्द कर देगी। जी.एम.टी. 03:14:07, मंगलवार, 19 जनवरी, 2038 पर शुरू होने वाली इस घटना के कारण पूरी तरह से कई चीजों के विफल होने की संभावना है, उदाहरणार्थ अस्पतालों में जीवन समर्थन प्रणाली की विफलता, फोन प्रणाली में रुकावट, बैंकिंग संकट, बड़े पैमाने पर बिजली की कटौती, आदि। इसकी वजह है कि एक सेकंड बाद में इन पद्धतियों के कई तिथि सेटिंग्स का बेतहाशा गलत होना। यह सभी प्रकार के अप्रत्याशित परिणामों का जन्म देगी। संक्षेप में, वर्ष 2000 (वाई.2.के.) के लिए भयानक भविष्यवाणियों में से कई के वास्तव में वर्ष 2038 में सत्य होने की बहुत अधिक संभावना हैं। सी प्रोग्रामिंग भाषा में लिखा अधिकांश प्रोग्राम वाई.2.के. समस्या से अपेक्षाकृत प्रतिरक्षित हैं। लेकिन इसके बजाय वर्ष 2038 की समस्या वास्तव में चरितार्थ होता है। सी प्रोग्राम के मानक समय (टाईम-एच) नामक मॉड्यूल का एक संग्रह जिसके उपयोग के कारण यह समस्या पैदा होती है। यह लाइब्रेरी (संग्रह) समय भंडारण के लिए एक 4 बाइट मानक का प्रारूप स्थापित करता है और यह भी परिवर्तित प्रदर्शित करने के लिए और समय मानों की गणना के लिए एक नंबर प्रदान करता है।

वर्ष 2038 के बारे में क्या खास है ?

वाई.2.के. समस्या के रूप में प्रोग्रामों से उत्पन्न होती है, जैसे वाई.2.के. समस्या वर्ष के लिए पर्याप्त अंक का आबंटन नहीं होने से प्रोग्रामों से उत्पन्न होती हैं, वैसे वाई.2.के.38 समस्या प्रोग्राम में आंतरिक समय के लिए पर्याप्त बिट्स का आबंटन नहीं होने से उत्पन्न होती हैं। टाइम-टी आंतरिक दिनांक और समय का प्रतिनिधित्व करने के लिए सी और सी ++ प्रोग्राम के द्वारा प्रयुक्त एक डेटा का प्रकार है। सी प्रोग्रामिंग भाषा में लिखा अधिकांश प्रोग्राम वाई. 2.के. समस्या से अपेक्षाकृत प्रतिरक्षित हैं लेकिन वर्ष 2038 की समस्या वास्तव में है। सी प्रोग्राम के मानक समय (टाईम एच) नामक मॉड्यूल का एक संग्रह जिसके उपयोग के कारण यह समस्या पैदा होती है। यह लाइब्रेरी (संग्रह) समय मानों के भंडारण के लिए एक 4 बाइट मानक का प्रारूप स्थापित करता है और यह भी, परिवर्तित, प्रदर्शित और समय मानों की गणना के लिए एक नंबर प्रदान करता है।

स्रोत : टेक्नोड्रोम

यह एम.एफ.सी. में सी टाइम और सी समय अवधि वर्गों के लिए आधार है। एक आधुनिक 32-बिट कंप्यूटर 32 बिट में इस तरह के टाइम-टी के रूप में एक पूर्णांक डेटा संग्रह करता है। इन बिट के पहले पूर्णांक के धनात्मक/नकारात्मक चिन्ह प्रयोग किया जाता है जबकि शेष 31 बिट संख्या में ही स्टोर करने के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। तो वाई.2.के.38 न केवल, कंप्यूटरों को प्रभावित करता है लेकिन कई एम्बेडेड प्रणालियों को भी। यह 31 बिट डेटा सबसे अधिक संख्या 2 147 483 647 स्टोर कर सकता है। इस सटीक संख्या का एक टाइम-टी मूल्य, 2 147 483 647, 3:14 ग्रीनविच मीन टाइम पिछले 7 सेकंड में, 19 जनवरी 2038 का प्रतिनिधित्व करता है। इस तिथि के बाद, 32-बिट घड़ियां ओवरफ़्लो और इस तरह 1-जन.-1970 या 13-दिस. -1901 जैसे त्रुटिपूर्ण मूल्यों पर वापस आ जाएगी। सी++ जो एक शक्तिशाली प्रोग्रामिंग भाषा है। कई इलेक्ट्रॉनिक चिप्स

[1]वैज्ञानिक एवं [2]प्रबंधक, जैव प्रौद्योगिकी सुविधायें

में इस्तेमाल किया जाता है। इसकी उच्च सघनता की वजह से यह मुख्य रूप से एम्बेडेड सॉफ्टवेयर के रूप इस्तेमाल है।

सैटेलाइट, अंतरिक्ष यान, कंप्यूटर, नेविगेशन सिस्टम, विद्युत संयंत्रों, परमाणु बम, मिसाइल नियंत्रकों और कई अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र चिप्स के इन प्रकार का उपयोग करता है जो एम्बेडेड सिस्टम में शामिल हैं। इसके बाद 19 जनवरी 2038 तो इन प्रणालियों के लिए असामान्य हो जाएगा।

समय का क्या महत्व है ?

समय, भौतिक दुनिया का एक प्रमुख पहलू है जिस पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है। यह सच है कि कंप्यूटर अनुप्रयोगों में समय आमतौर पर सबसे अधिक स्वतंत्र चर माना जाता है और अन्य सभी चर मात्रा को सापेक्ष में मापा जाता है। एक भौतिक घटना जिसे समय के संबंध में साथ मापा जाता है के कुछ परिचित उदाहरण वेग, त्वरण, और आवृत्ति हैं।

यदि हम कंप्यूटर का उपयोग समय के साथ बदलने वाले कुछ मात्रा को नियंत्रित करना चाहते हैं, तो कंप्यूटर को भी आउटपुट नियंत्रण संकेतों का उत्पादन होगा। वह भी भौतिक दुनिया के समय के पैमाने के अनुसार बदलती हैं। यह वास्तविक समय का अनुप्रयोग कहा जाता है।

इस अवधारणा को वर्णन करने के लिए हम कंप्यूटर के नेविगेशनल नियंत्रण मामले पर विचार करते हैं। कंप्यूटर में दूरी और वर्तमान स्थिति की गणना वेग और दिशा की तात्कालिक मूल्यों पर निर्भर करता है। ये दोनों बाह्य, वास्तविक भौतिक दुनिया में समय के अनुसार बदलती मात्रा हैं। बहाव के लिए क्षतिपूर्ति करने के क्रम में कंप्यूटर द्वारा किया जाता है कि गति या दिगंश में किसी भी सुधार के लिए एक वास्तविक समय के आधार पर किया जाना चाहिए।

कंप्यूटर के साथ समस्याओं को सुलझाने के पहले जब सुविधा के लिए उदारवादी उपयोग समय-पैमाने कारकों का बनाया गया था। वास्तविक समय गणना के अनुप्रयोगों की संख्या लगभग असीमित हैं। कुछ ऐसी बंदूक आग पर नियंत्रण, स्वतः नेविगेशन, मिसाइल मार्गदर्शन और मशीन नियंत्रण आदि के रूप में इन अनुप्रयोगों में से कुछ है। अंतरिक्ष युग के आगमन के साथ, बाह्य अंतरिक्ष में नेविगेशन सहायता के लिए वास्तविक समय कंप्यूटर का उपयोग, आवश्यक हो गया है, क्योंकि संभवतः एक मानव पायलट उपयुक्त प्रक्षेपवक्र सुधार करने के लिए समय में मार्गदर्शन और नियंत्रण की जटिल समस्याओं को हल नहीं कर सकता है। तेज संकर तकनीकों का वास्तविक समय में अभिकलन और नियंत्रण की समस्याओं को सीधे लागू किया जा सकता है। तेजी से विमानों और मिसाइलों के लिए बढ़ती मांग ने आज कंप्यूटर और तकनीकों को इस तरह के कड़ी अपेक्षाओं पर रखा है।

वर्ष 2038 की समस्या का क्या परिणाम हो सकता है?

वर्ष 2038 की समस्या के साथ सबसे बड़ा खतरा इसकी अदृश्यता है। अधिक प्रसिद्ध वर्ष 2000 में एक बड़ी, गोल संख्या है; यह केवल 1999, 2000 में बदल जाता है फिर क्या हो सकता है की कल्पना करने के लिए, यहां तक कि एक कंप्यूटर अनपढ़ व्यक्ति के, सोचने के लिए कुछ सेकंड लगता है। लेकिन 19 जनवरी 2038 के रूप में लगभग स्पष्ट नहीं है। लेकिन सॉफ्टवेयर कंपनियों ने शायद कयामत के दिन हमले से पहले वर्ष 2038 के परिदृश्य से बाहर निकलने की कोशिश करने के बारे में सोचा नहीं होगा।

बेशक, कुछ समय के आगे की चेतावनी होगी। एक टाइम-टी मानते हुए, सॉफ्टवेयर, बिलिंग का सॉफ्टवेयर, समयबद्धन (सिडूएलिंग) सॉफ्टवेयर, व्यक्तिगत अनुस्मारक कैलेंडर, अन्य ऐसे कोड जो तारीखें सेट करेंगे वह निकट भविष्य में जल्द ही विफल हो सकते है, जैसे ही तारीख एक 19-जनवरी-2038 से अधिक होगा। एक बड़ी संख्या में मशीन, प्लेटफार्मों, और एप्लीकेशन हैं जो 2038 की समस्या से प्रभावित हो सकता है। इनमें से अधिकांश (उम्मीद है) क्रिटिकल तारीख से पहले पुनः स्थापित किया जाएगा।

हालांकि, या संभव है कि कुछ मशीन जो अब सेवा में जा रहीं है, जिन्हें बजट की कमी के कारण कभी उन्नयन नहीं किया गया है, जैसे अंतरिक्ष यान, कंप्यूटर, यातायात प्रकाश नियंत्रकों में एम्बेडेड सिस्टम, नेविगेशन सिस्टम, आदि जो

इन प्रणालियों के उन्नत करने के लिए संभव नहीं हो सकता। हार्डवेयर, जैसे कि लॉक सर्किट के रूप में इस तरह समय रूपांतरण को अपनाया है और यदि 32-बिट रजिस्टरों का उपयोग किया जाता है। तो इस तरह इस बार रूपांतरण को अपनाया है जो घड़ी की सर्किट, के रूप में हार्डवेयर, भी प्रभावित हो सकता है।

यदि 32-बिट रजिस्टरों किया जाता है। तो यह भी हो सकता है कि 32-बिट सी.पी.यूज., 2038 से डेस्कटॉप कंप्यूटर और सर्वर में अप्रचलित हो सकता है जबकि वे अभी भी माइक्रोकंट्रोलर्स में मौजूद हैं और प्रोग्राम योग्य उपकरणों के भीतर एम्बेडेड है।

इस तरह एम्बेडेड सभी रोलओवर के मुद्दों के लिए एक गंभीर रख-रखाव वर्ष 2038 की समस्या की तरह काम करता है क्योंकि पैकेज के बाद से भाग संख्या और अन्य निशान आमतौर पर डिवाइस की आंतरिक कार्य के कोई संकेत नहीं देता। एम्युलेटर्स नये प्लेटफॉर्म पर चलने के लिए पुराने कोड (अनुप्रयोगों और ऑपरेटिंग सिस्टम दोनों) को संभव बनता है। सी प्रोग्रामिंग भाषा कंप्यूटर प्रोग्राम बनाने के लिए एक लोकप्रिय और व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली प्रोग्रामिंग भाषा है। दुनिया भर के प्रोग्रामर सी को ज्यादा प्रयोग करते है क्योंकि यह प्रोग्रामर को अधिकतम नियंत्रण और दक्षता देता है। यह सी एक बड़ी संख्या में प्लेटफार्मो के लिए कोड लिखने पढ़ने के लिए के लिए सक्षम है - सब कुछ माइक्रोकंट्रोलर से आधुनिक ऑपरेटिंग सिस्टम एवं उन्नत वैज्ञानिक प्रणालियों को सी में लिखा जा सकता है। वह सभी चीजें जो टाइम फंक्शन प्रयोग में लती हैं ग़लत कार्य करना सुरु कर देंगी। 2038 समस्या, वाई.2.के. समस्या से अधिक हवाई यातायात नियंत्रण आपदाओं, जीवन समर्थन प्रणाली की विफलता, और पावर ग्रिड की विफलता की संभावना है।

क्या वर्ष 2000 की समस्या का निदान वर्ष 2038 की समस्या निदान में मदद करेगा!

नहीं, टाइम-टी कभी भी वर्ष 2000 दोश में शामिल नहीं था। वर्ष 2000 की त्रुटि के लिए आम तौर पर तीन बातों में से एक शामिल थी यूजर इंटरफेस, यानी आप क्या वर्ष मानेंगे यदि उपयोगकर्ता "00" टाइप करता है। एक डेटाबेस प्रविष्टि जहाँ केवल अंतिम दो अंक जमा (स्टोर) की जाती है अर्थात् डेटाबेस प्रविष्टि अपने वर्ष के लिए एक "00" प्रयोग करता है तो आप कौन सा वर्ष मानेंगे।

निष्कर्ष

फिर भी कुछ साल आगे और हैं; इसे वैज्ञानिक एक बड़ी अवधि के रूप में यह नहीं सोच रहे हैं वे वाई.2.के. 38 के लिए एक समाधान खोजने के लिए अपनी पूरी कोशिश कर रहे हैं। यह आशा है कि मानवता ने वाई.2.के. के साथ एक महत्वपूर्ण सबक सीखा है। वाई.2.के. के संभावित प्रभाव को 20 साल पहले जान लिया गया था। इसे ठीक करने के लिए क्यों हम इतने लंबे समय के लिए इंतजार हमने क्यों किया। जवाब आसान है, हमें नहीं लगता था कि कंप्यूटर का समय इतना लम्बा होगा। खैर, अब हम जानते हैं कि अगले कंप्यूटिंग प्रलय से पहले हम वाई.2.के.38 का बेहतर निदान पाने जा रहे हैं। इसका निदान करने के लिए हमें 24 साल और कुछ अधिक समय मिल गया है।

दोहे

माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोय। एक दिन ऐसा आएगा, मैं रौंदूगी तोय।।
माला फेरत जुग गया, गया न मन का फेर। कर का मन का डारि दे, मन का मनका फेर।।

- कबीरदास

प्रसंस्कृत उत्पाद में खाद्य रंग का स्वास्थ्य पर प्रभाव

पुष्पा चेतन कुमार[1], डी.के. शुक्ला[2], रेखा चौरसिया[3], भारती किल्लाड़ी[4] एवं जोतिर्मयी लेंका[5]
[1,2,3,4,5]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

कोई भी पदार्थ जो सामान्यतः स्वयं खाद्य पदार्थ में नहीं होता है या खाद्य पदार्थ के अवयव के रूप में नहीं पाया जाता है और उसमें पोषण की मात्रा नहीं होती है। ऐसे अवयव खाद्य योज्य (फूड एडिटिव) की श्रेणी में आते हैं, ऐसे अवयव खाये जाने वाले मूल खाद्य में नहीं पाये जाते हैं और प्रायः इन्हें अलग से ही मिश्रित किया जाता है। संरक्षक, मिठास बढ़ाने वाले पदार्थ, फर्मिंग तत्व, एंटी केकिंग तत्व एवं खाद्य रंग इत्यादि ऐसे अवयवों के ज्वलंत उदाहरण हैं।

रंग भोज्य (रंग एडिटिव) दो प्रकार के होते हैं डाई या लेक्स। उत्पादक रंग योज्यों का प्रयोग उन पदार्थों में करता है जिन खाद्य पदार्थ में कोई प्राकृतिक रंग नहीं होता है, उदाहरणार्थ मारजरीन। अतः इनकी आकर्षकता बढ़ाने हेतु रंगों का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त हवा, प्रकाश और तापमान के प्रभाव से रंग की आकर्षकता कम हो जाने के कारण इनका प्रयोग किया जाता है। विश्व में सबसे अधिक प्रयोग की जाने वाली डाई में रेड 40, पीला 5 एवं पीला 6 है जो कुल डाई का 90 प्रतिशत प्रयोग में लाया जाता है। इनमें कर्क रोग तथा एलर्जी उत्पन्न करने वाले कारक पाये जाते हैं। प्रत्येक वर्ष लगभग 150 लाख पाउन्ड कृत्रिम डाई संयुक्त राज्य अमेरिका में खाद्य योज्य हेतु प्रयुक्त होती है। वर्ष 1955 से अब तक इनका प्रयोग अधिक मात्रा में प्रसंस्कृत उत्पाद बनने के कारण पाँच गुना तक बढ़ गया है।

डाईः ये पानी में घुलनशील होते हैं तथा इनका उत्पादन पाउडर, दानेदार द्रव्य या किसी विशेष प्रयोजन के हिसाब से वांछित आकार में किया जा सकता है। इनका प्रयोग पेय, मिक्स, बेकरी उत्पाद, दुग्ध उत्पाद जैसे पुडिंग, योगर्ट, पालतू जानवरों के खाद्य या अन्य उत्पाद में होता है।

लेक्सः ये डाई के पानी में अघुलनशील हिस्से होते हैं। डाई की अपेक्षाकृत ये अधिक स्थिर होते हैं। अतः वसा या तेल युक्त प्रसंस्कृत उत्पादों के लिये ज्यादा उपयोगी पाये जाते हैं अथवा कम नमी वाले खाद्य पदार्थों हेतु प्रयुक्त होते हैं। इनका उपयोग केक, चीज, मारजरीन, कैंडी, च्विंगगम आदि बनाने में बहुतायत में किया जाता है।

रंगों का स्रोतः मनुष्य को लंबे अंतराल से ज्ञात है कि कुछ पौधे, जानवर और खनिज तत्व जैसे फैब्रिक, लकड़ी या पदार्थ की सतह स्टेन (अभिरंजक) होती है। इन पौधों या खनिज तत्वों में प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले रंजक पाये जाते हैं। इसी प्रकार से खनिज पदार्थों में होने वाली रासायनिक क्रियाओं से ये प्राप्त होते हैं जैसे कॉपर के ऑक्सीकरण से पदार्थ हरा हो जाता है जिससे रंग प्राप्त होते हैं। इनमें निम्नलिखित वस्तुएँ शामिल हैं।

Øe l-	jtd idkj	lkr	mRiUu jx
1.	एंथोसाइनिन	गाढ़े रंगों वाली बैरीस	नीला–बैंगनी
2.	सेन्थाजेनथिन	कुछ प्रकार की मछलियाँ एवं काई	गुलाबी–नारंगी
3.	क्लोराफिल–II	पौधों की हरी पत्तियाँ एवं काई	हरा
4.	चारकोल	जली लकड़ी	स्लेटी–काला
5.	कोचीनाल	कीट	लाल–पर्पल
6.	आयरन ऑक्साइड	जंग युक्त धातुयें	भूरा–लाल
7.	पेप्रिका	पिसी मिर्च	पीला–लाल
8.	सेफ्रन	क्रोकस फूल	पीला–लाल
9.	टरमरिक (हल्दी)	हल्दी के पौधे की जड़	चमकदार पीला

ऊपर दी गयी सभी प्राकृतिक एवं वैध खाद्य डाई है। लेकिन औद्योगिक प्रसंस्करण के आरंभ होने से शुरू में बहुत सी डाई को कोल तार से प्राप्त किया जाता है जो कर्क रोग उत्पन्न करने के कारकों में शामिल हैं।

खाद्य रंगों के प्रकारः संयुक्त राज्य अमेरिका के खाद्य एवं ड्रग प्रशासन ने खाद्य रंगों को दो भागों में विभाजित किया है।

1. प्रमाणित खाद्य रंग।

[1,4,5]वैज्ञानिक एवं [2,3]सहा. मुख्य तक. अधिकारी

2. खाद्य रंग जिनको प्रमाणन की आवश्यकता नहीं है।

प्रमाणित खाद्य रंग मानव निर्मित सिन्थेसिस द्वारा बनाये जाते हैं। इनका बहुतायत में प्रयोग होता है क्योंकि ये खाद्य पदार्थ में तीव्र एवं समान रंग के साथ सस्ते और आसानी से मिश्रित हो जाने वाले होते हैं।

प्रमाणन से मुक्त रंग मुख्यतः पौधों, जानवरों एवं धातुओं या खनिज पदार्थों जैसे एलुमिनियम, चाँदी, लोहा एवं टाइटेनियम ऑक्साइड से प्राप्त होते हैं।

खाद्य पदार्थों में रंग भोज्यों (फूड एडिटिव) की समस्यायें

खाद्य डाई के उपयोग से बहुत सी गंभीर समस्यायें जुड़ी हुई हैं।

1. **कर्क रोग कारकः** कर्क रोग के विकास में सहायक।
2. **जीन विशाक्तताः** इससे क्रोमोसोम की संरचना नष्ट हो जाती है या इसमें बदलाव आ जाता है।
3. **दिमागी विशाक्तताः** इससे मस्तिष्क के ऊतक नष्ट हो जाते हैं।

अतः कुछ डाई के प्रयोग पर पूर्ण प्रतिबंद्ध लगा दिया गया है।

1. ग्रीन-1 एवं रेड 1 - लीवर के कर्क रोग को बढ़ावा देती है।
2. आरेंज-1, आरेंज-2, वायलेट-1, रेड-2, रेड-32-कर्क रोग कारक।
3. सुडान-1-विषाक्त।
4. पीला-1 व 2- आँतों के लेसन को बढ़ावा देती हैं।
5. पीला-3 व 4- हृदय को क्षति पहुँचाने में सहायक।

कुछ अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि कुछ डाई स्वयं अकेले तीव्र कर्क रोग कारक नहीं होते हैं परंतु अन्य तत्वों के साथ मिश्रित होने पर उनका प्रभाव बढ़ जाता है।

इसके पश्चात भी खाद्य एवं ड्रग प्रबंधन ने निम्न डाई के प्रयोग को मान्यता दी है क्योंकि इनको प्रतिबंधित करने के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

1. एफडी एवं सी ब्लू नं.-1 एवं 2।
2. एफडी एवं सी ग्रीन-3।
3. एफडी एवं सी रेड 3 एवं 40।
4. एफडी एवं सी पीला-5 (टार्टाजीन) एवं 6।
5. आरेंज-बी।
6. सिट्रिप रेड-2।

अतः मुख्यतः प्राकृतिक रंग ही उपयुक्त होते हैं। रंग भोज्यों को डालने हेतु नियमित रूप से नियम बनाये जाते हैं तथा इनमें अध्ययनों अनुसार बदलाव भी किया जाता है। इनका प्रयोग करने हेतु निम्नलिखित आवश्यकताओं का पालन जरूरी है।

1. इनके प्रयोग की प्रौद्योगिकी कारणों से आवश्यकता हो।
2. ये उपभोक्ता को भ्रमित नहीं करें।
3. ये उपभोक्ता के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव नहीं डालें।

ज्यादातर रंग भोज्यों (रंग एडिटिव) के खाद्य पदार्थों में प्रयोग की ऊपरी सीमा निर्धारित की गयी है। इनका उपयोग अच्छे उत्पादन नियमों का पालन करते हुए किया जा सकता है और इससे जरूरी तकनीकी प्रभाव प्राप्त करना आवश्यक है। रंग भोज्यों (फूड एडिटिव) का बच्चों पर अधिक प्रभाव पड़ता है। खाद्य पदार्थ में साफ लिखा होना चाहिए कि इसमें प्रयुक्त रंग भोज्य से बच्चों की गतिविधियों एवं ध्यान एकाग्रित करने की क्षमता में विपरीत प्रभाव पड़ सकता है। यू.के. में 11 वर्ष से कम उम्र के 30 प्रतिशत बच्चों में इन रंग भोज्यों का उनकी गतिविधियों एवं ध्यान एकाग्रित करने की क्षमता पर विपरीत प्रभाव देखा गया। इसके पश्चात भी रंग भोज्य अन्य भोज्यों जैसे एसपारटेम या मोनो सोडियम ग्लूटामेट की तुलना में कम विपरीत प्रभाव डालते हैं।

संस्तुतः कुछ रंग भोज्यों (फूड एडिटिव) के प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों में प्रयोग से स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव के सीधे तथ्य नहीं पाये गये पर अन्य रंग योज्यों के स्वास्थ्य पर इसके बहुतायत में प्रयोग करने से विपरीत प्रभाव पड़ने की संभावना अधिक रहती है।

अतः इससे बचने का सबसे आसान उपाय है कि अपवादों के अतिरिक्त ताजे फलों एवं सब्जियों एवं बिना प्रसंस्कृत उत्पादों का ज्यादा से ज्यादा दैनिक जीवन में प्रयोग करना चाहिए। अगर प्रसंस्कृत उत्पाद का प्रयोग आवश्यक हो तो उसके अवयवों की जाँच करें और देखें कि क्या उनमें निम्नलिखित तीन यौगिकों कृत्रिम रोग, हरा, नारंगी, लाल, बैंगनी, नीला या पीला रंग का कोई भी नंबर और कैरामेल रंग का प्रयोग किया गया है। अगर ऐसा है तो इनके प्रयोग से बचें।

लागत प्रभावी संरक्षित खेती एवं जलवायु परिवर्तन

अशोक कुमार[1]
[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

भारत जैसे विकासशील देश में जलवायु परिवर्तन कृषि के लिए सबसे बड़ा नुकसान का कारण है क्योंकि ज्यादातर कृषि वर्षा आधारित होती है और वैश्विक ऊष्णता की वजह से तापमान का बढ़ना एवं अनियमित वर्षा के कारण हमारी कृषि उत्पादन तकनीकियों का पालन करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

उत्तरी मैदानी इलाकों में तापमान में काफी अंतर हो है। यह गर्मी के महीनों में लगभग 47° सें.ग्रे. एवं ठंडियों में करीब 4-5° सें.ग्रे. के आसपास तक होता है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में तापमान एवं वर्षा के विविधीकरण की वजह से किसानों ने विभिन्न फसल उत्पादन की तकनीकी अपनायी है। जम्मू-कश्मीर, उत्तर पूर्व, उत्तराखंड एवं अन्य पहाड़ी इलाकों के किसान स्थानीय मौसम के हिसाब से कम लागत वाले पालीथीन कवर/पालीटनल/पालीथीन बारिश आश्रय के द्वारा अधिक बारिश एवं कम तापमान जैसी विपरीत परिस्थितियों में भी फसल उत्पादन कर रहे हैं। उच्च मात्रा एवं उच्च तीव्रता वाली वर्षा शारीरिक रूप से पौधों, विशेष रूप से युवा पौध और फूलों को नुकसान पहुंचाते हैं। पराग कण धुल जाने की परिणामस्वरूप कम फल आते हैं। वर्षा बूंदों द्वारा पौधे की सतह पर जमा मिट्टी के कणों की वजह से मिट्टी जनित रोग जीवों के पनपने के लिए सबसे अच्छा माध्यम माना जाता है। मैदानी इलाकों में ज्यादातर गर्मी एवं बरसात के महीनों में तथा अधिक जाड़ों में सब्जियों के लिए प्रतिकूल वातावरण की वजह से इनका उत्पादन कम हो जाता है तथा इनका मूल्य काफी बढ़ जाता है जिसे हम संरक्षित खेती के द्वारा बचा सकते हैं।

संरक्षित खेती में ज्यादातर उपयोग पालीहाउस/ ग्रीनहाउस का किया जाता है जो एक सामान्य किसान के लिए काफी महंगा होता है जबकि लागत प्रभावी कृषि में ठंडियों के दिनों में कम तापमान एवं अनियमित वर्षा से बचने के लिए पालीथीन कवर/पालीटनल/ पालीथीन बारिश आश्रय तथा गर्मियों के दिनों में अधिक तापमान से बचने के लिए छाया जाल का इस्तेमाल किया जा सकता है। सुरक्षित उत्पादन संरचनाओं के डिजाइन में प्रमुख भूमिका तापमान, हवा के वेग और मिट्टी के अलावा क्षेत्र की जलवायु को ध्यान में रखकर बनाया जाता है। उदाहरण के तौर पर धनिया पत्तों की खेती गर्मी/बरसात (जून से सितम्बर माह) में भी की जा सकती है जब इसकी मांग ज्यादा होती है और उपलब्धता कम होती है। ऐसे समय में धनिया के पत्तों की खेती की जाये तो 2.0-3.0 किलोग्राम पत्ता प्रति वर्ग मीटर उगाया जा सकता है बशर्ते कि फसल को छाया जाल से ढक कर रखा जाये और उपयुक्त किस्में जैसे पंत हरीतिमा एवं पंत धनिया-1 का रोपण किया जाये। ठंडे महीनों में सब्जियों एवं अन्य नकदी फसलों के उत्पादन के लिए सुरंग रूपी प्लास्टिक आवरण का इस्तेमाल कर पाला एवं कम तापमान से बचाया जा सकता है। प्लास्टिक आवरण के इस्तेमाल से फसलों के आस-पास का तापमान फसलों के अनुकूल हो जाता है और अच्छी पैदावार भी प्राप्त होती है।

उत्तर भारत के मैदानी इलाकों में स्ट्रॉबेरी का उत्पादन सुरंग रूपी प्लास्टिक आवरण के इस्तेमाल से एक से महीने पहले लिया जा सकता है। पत्तेदार सब्जियों एवं नकदी विदेशी सब्जियों का उत्पादन करने के लिए जाड़ों के महीनों में सुरंग रूपी प्लास्टिक आवरण के इस्तेमाल किया जा सकता है। प्लास्टिक आवरण बनाने के लिए यदि केवल प्लास्टिक खरीदनी पड़े तो ज्यादा से ज्यादा 6-7 किलोग्राम प्लास्टिक में 100 वर्ग मीटर जगह हो घेरा जा सकता है एवं प्लास्टिक 80-120 रुपये प्रति किलोग्राम में बाजारों में उपलब्ध होगी।

---

[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक

अमरूद चालीसा

सुशील कुमार शुक्ल[1]
[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

नमो नमो हे जामफल, नमो दीन जन ईश,
दुखियों के पोषक तुम्हीं, नवा रहा हूँ शीश।
कहते गरीब का सेब इसे, औषधि है उदर विकारों की,
खेती से इतनी आमदनी, आशा है बेरोजगारों की।
खनिजों का ये भरपूर स्रोत, पर्याप्त विटामिन सी भी है,
गर ललगुदिया हो क्या कहने, पाचक कैंसर रक्षक भी है।
ऊसर बंजर में भी इसकी, खेती होती आसानी से,
उत्पादन जल्दी और प्रचुर, ये डरता नहीं है पानी से।
नाना प्रकार की किस्में हैं, जो जग में जानी जाती हैं,
श्वेता सरदार इलहबादी और ललित बखानी जाती हैं।
खाने में बीज मुलायम हैं, मीठे सुस्वाद से भरी हुई,
श्वेता औ सफेदा इलहबादी, की मांग इसी से बढ़ी हुई।
पर परिरक्षण के लिए ललित, सर्वोत्तम मानी जाती है।
पर स्वाद है कुछ खटटा मीठा, ललगुदिया भी कहलाती है।
वैसे अमरूद लगाते हैं, पांच छै मीटर की दूरी पर,
गर सघन बागवानी करनी, तो दूरी इसकी आधी भर।
पौधों की संख्या ज्यादा हो, उत्पादन उससे अधिक मिले,
है यही एक उददेश्य हमारा, कृषक खूब फूले औ फले।
अमरूद वृक्ष इक ऐसा है, इसमें जब चाहो फल पा लो,
गर ठीक तरह से काट छांट, तकनीक सदा तुम अपना लो।
बरसाती फल गर ना चाहो, गर्मी में काट छांट कर दो,
सर्दी में फल होंगे ज्यादा, गुणवत्ता भी उनमें भर दो।
गर फल मक्खी तंग करती हो, उसका इलाज भी सम्भव है,
तुम ट्रैप लगा दो पेंड़ों पर, नर मक्खी रहे असम्भव है।
जब एल्कोहल ईथाइल हो, और यूजिनाल मिथाइल हो,
थोड़ा से पड़े कीटनाशी, नर मक्खी पड़े शिथाइल हो।
छै चार एक अनुपात मिलें, तब औषधि बड़ी प्रभावी है,
लकड़ी गुटके इसमें डालो, ये नर मक्खी पर हॉवी है।
दो दिन के बाद इन्हीं गुटकों, को पेंड़ों पर लटकाना है,
बिन दवा छिड़क या खर्चे के, नर मक्खी मार गिराना है।
गर कल्मी पौध खरीदनी हो, तो सीधा लिखो निदेशक को,
तुम बाग लगाओ जल्दी से, कोई न बीच उपदेशक हो।
गर बाग लगा हो ठीक तरह, बीघा दस टन उत्पादन हो,
बेरोजगार को रोजगार, कृषकों को धन का साधन हो।
अब चलो पौध सम्बन्धी भी, कुछ बातें और बताते हैं,
नवयुवकों को भी उद्यमिता के, अवसर और सुझाते हैं।
जो कलमी पौध बनाते हैं, उनके तो वारे न्यारे हैं,
पौधों की मांग इस कदर है, व्यापारी तक भी हारे हैं।
छै महिने का पौधा खरीद, उस पर बांधो तुम वेज कलम,
छै महिने तक कर देखभाल, छै गुना कमाओ कम से कम।
पर सच्चाई गुणवत्ता से, समझौता कभी भी मत करना,
ईमान बेचकर धन अर्जन, से हे भाइयो सदा डरना।
यह चालीसा है अलग, पाठ करे जो कोय।
लाए जो व्यवहार में, भला उसी का होय।

---

[1]प्रधान वैज्ञानिक

कलियुग की नारी शक्तिहीन

सुशील कुमार शुक्ल[1]
[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

कलियुग की नारी शक्तिहीन सब बातें हैं समझाने की,
त्यागी देवी और पतिव्रता कह नारी को फुसलाने की,
कहने को शक्तिस्वरूपा है अधिकार क्या कोई रखती है,
घर बाहर कोई निर्णय हो पुरुषों की ओर निरखती है,
है आज जरूरत नारी को शिक्षित सम्पन्न बनाने की,
शिक्षित हो दुर्गा शक्ती बन जग में अब धाक जमाने की,
कलियुग की नारी............

गर नारी शक्ति देखनी है देखो इंदिरा मेनका को,
सुषमा माया ममता प्रतिभा शीला को या जयललिता को,
हे नारी तू देवी मत बन बनना है बनो किरण वेदी,
सीखो कुछ दुर्गाशक्ति से नागों को दे दो बलि वेदी,
वीरांगनाओं बारी है जग में कुछ कर दिखलाने की,
पुरुषों में छिपे भेड़ियों को अब बारी है खा जाने की,
कलियुग की नारी ....

हे नारीदल हो सावधान वादों से असत वादियों से,
नारी इज़्ज़त को तार तार करते समाजवादियों से,
संसद में बस ग्यारह प्रतिशत हो राज्य सभा या लोकसभा,
कम से कम तैंतीस प्रतिशत दो अधिकार जो आधी जनता का,
साढ़े छै लाख प्रधानों में अस्सी हजार ही नारी हैं,
डाक्टर बनती हैं सवा लाख प्रतिवर्ष पुरुष पर भारी हैं
लेकिन सब मात्र दिखावा है सब बातें है बरग्लाने की,
जब घटना कोई घट जाती घड़ियाली अश्रु बहाने की,
कलियुग की नारी ....

गर शिक्षा की हम बात करें पैंसठ प्रतिशत ही साक्षर हैं,
तेइस प्रतिशत को रोजगार और काफी अभी निरक्षर हैं,
विद्यालय प्रथम ही छोड़ रहीं पच्चासी प्रतिशत बालाएं,
चौंसठ प्रतिशत छोंड़ें आगे वो शिक्षित कैसे हो पाएं,
हम लें संकल्प आज से ही नारी को विज्ञ बनाने की,
है आज जरूरत अन्धकार में बस प्रकाश फैलाने की,
कलियुग की नारी ....

कहते महानतम देश हैं हम संख्या भी है अब अरबों में,
प्रतिवर्ष मारते तीन लाख नारी शिशु मां के गर्भों में,
सत्तर प्रतिशत ब्याही जाती कन्यायें बाल्यावस्था में,
बाईस प्रतिशत माएं बनती हैं इसी किशोर अवस्था में,
पत्नी आदर्श कहाती जो पति की सच्ची अनुगामिनि हो,
मन से वाणी से कर्मों से पति की ही सच्ची स्वामिनि हो,
नारी शोषण उत्पीड़न के आधे अपराधी परिवारी,
बोलो वो किसके पास जाए इस युग की बेचारी नारी,
पर वश क्या है परवशता है भोग्या नर की बन जाने की,
अब आज जरूरत रीति नीति परिभाषा बदले जाने की,
कलियुग की नारी ....

हर इक्यावन मिनट में शोषण यौनाचार,
औ चौवनवें मिनट में होता बलात्कार,
एक सौ दोवें मिनट में सहे दहेज का वार,
फिर भी देश महान है कहते हम ललकार।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

हिन्दी दिवस

नीलिमा गर्ग[1]
[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

14 सितम्बर दिन बड़ा महान
हिन्दी दिवस है इसका नाम
इस दिन राजभाषा बनी हिन्दी रानी
शुरू हुई इसकी नयी कहानी।
संस्कृत इसकी जननी, क्षेत्रीय भाषाएँ हैं इसकी रिश्तेदार
इन सभी के सम्मिश्रण से हिन्दी बनी दमदार
हिन्दी का वर्चस्वता दिनोंदिन बढ़ रहा
माध्यम सुबोध सरल इसका स्वरूप
चहुँ और फैल रहा राष्ट्रभाषा का धूप
जोड़ रही है जन-जन को सर्वजन से
एक सूत्र में पिरोती है क्षेत्रीय भाषाओं को मानस मन से
चाहिये हिन्दी भाषी के मन की हिचकिचाहट मिटाएँ भार
स्वरूप नहीं प्रसाद स्वरूप फैलाएँ
औदार्य का उदाहरण बन उनकी भाषा को भी अपनाएँ
आओ हिन्दी भूमंडलीकरण में हम भी हाथ बटाएँ
इसको समुन्नत कर विश्व भाषा के स्तर तक उठायें।

[1]अध्यक्ष, तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन प्रभाग

आम बचायें

नीलिमा गर्ग[1]
[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

अ से अम्मा, आ से आम,
अम्मा जैसा मीठा नाम।
रंग रूप से बेजोड़, सुवास चहुँ ओर फैलाता है,
अचार, जूस के रूप में वर्ष भर खाया जाता है।
नाजुक बदन फिर भी 42 से.ग्रे. सह जाता है,
12 से.ग्रे. पर रखकर देश-विदेश भेजा जाता है।
निर्धन, धनी सबका मन ललचाता है,
विटामिन, फाइबर एवं मिनरल से भरपूर पोषण लाता है।
लेकिन सावधान आधुनिकता की आँच में
आम सुलग रहा है,
आम के बागों का पर्यावरण दूषित हो रहा है।
आओ इस खुदा की देन को प्रदूषण से बचायें,
आम लगाये आम खायें और खिलायें।

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस

सुशील कुमार शुक्ल[1]
[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

नारी इस जग की जननी है, उसका तुम मत उपहास करो,
वह देवी का सच्चा स्वरूप, उसके बल पर विश्वास करो
ईश्वर की वह सुन्दरतम कृति, उसके आँचल में ममता है
उसकी सुन्दरता के आगे नारद सा ज्ञानी भ्रमता है
त्यागी बलिदानी पन्ना का देखना है राष्ट्रप्रेम देखो,
निज राजकुँवर की रक्षा हित निज सुत की बलि देना सीखो।
साहस और शौर्य देखना है तो लक्ष्मीबाई झलकारी,
नारी को कम न समझना तुम नारी है बड़ी प्रलयकारी
नारी से ज्ञान सीखना है गार्गी को देखो ग्रन्थों में
लोहा माने हैं बड़े-बड़े ऐसी चर्चा है सन्तों में
वह भारत की नारी ही थी जो पति के चिता जलाती थी
अपना सर्वस्व निछावर कर सानन्द सती हो जाती थी
इसलिए मेरे प्यारे मित्रों नारी की निंदा बन्द करो
उसकी हत्या को तुम रोको उसका सानन्द करो।

[1]प्रधान वैज्ञानिक, फसल उत्पादन प्रभाग

फलों का राजा आम

रेखा चौरसिया[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

आम फलों का राजा है,
सबके मन को भाता है।
सर्वगुणों से ये मदमाता,
राष्ट्र फल कहलाता है।।

ऋतु बसंत में नव करवंट ले,
जब ये खुद बौराता है।
नव सुगंध नवरूप से जग को,
ये भरपूर लुभाता है।।

रितुराज की सुन्दर सुषमा,
इसकी सुवास प्यारी है।
शुभ शृंगार करे जब धरती,
इसकी महिमा न्यारी है।।

पत्ती, छाल, बौर, फल आदि,
सबकी महिमा छायी है।
पूजन उत्सव आदि कार्य में,
इनको मिली बढ़ाई है।।

बड़ा नाम परिवार बड़ा है,
इसके शत-शत नाम धरा है।
इतनी प्रजाति से भरा यह पौधा,
नहीं दूसरा कोई मिला है।।

एक जाति उपजाति सहस्त्रों,
एक नाम आकार अनेकों।
सम सदगुण से भरा हुआ,
रूप रंग आकार सैकड़ों।।

भारत के घर द्वारों में,
गली-गली चौराहों में,
कहाँ नहीं इसकी महिमा,
छा जाता बाजारों में।।

उत्पादों की बात चले तो,
ये सब फलों पे भारी है।
अपने स्वाद गुणमय सुवास से,
मन को भाता सुखकारी है।।

कच्चे आम से बना पना,
लू से छुटकारा देता है।
आम की चटनी सबकी प्यारी,
मुँह का स्वाद बढ़ाती है।।

आम के फल का बना अचार
देश-विदेशों में मशहूर है।
उसके फल से बनी खटाई,
सालों-साल काम आती है।

आम के गूदे से बना अमरस,
सबके मन को भाता है।
इसके रस से बना स्क्वैश,
तन-मन में शीतलता लाता है।

वैसे तो फल बहुत से है,
पर इसका नहीं कोई सानी।
रंग-रूप, गुण स्वाद निराला,
कहलाये यें फलों का राजा।।

---

[1]सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

राजभाषा से संबंधित वस्तुनिष्ठ जानकारियाँ

- संविधान सभा ने 14 सितंबर 1949 को हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता दी तथा भारतीय संसद ने देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया।
- 14 सितंबर 1949 को भारत की संसद ने 312 के मुकाबले 324 मतों से हिन्दी को संघ की राजभाषा बनाया।
- संघ की राजभाषा होने के कारण साथ-साथ हिन्दी उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, छत्तीसगढ़, चंडीगढ़ एवं दिल्ली सहित अंडमान निकोबार द्वीप की भी राजभाषा है।
- भारत के अलावा हिन्दी छह अन्य राष्ट्रों (फिजी, सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुयाना, मारिशस एवं सिंगापुर) की भी राजभाषा है।
- चीनी भाषा के पश्चात् हिन्दी विश्व में दूसरी सर्वाधिक बोली जाने वाली (लगभग 18.2 प्रतिशत लोगों द्वारा) भाषा है।
- सन् 1918 में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की प्रेरणा से दक्षिण हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना की गयी।
- राजभाषा प्रचार समिति का गठन 1933 में किया गया।
- हिन्दी का पहला लिखित साहित्य वीर चंदवरदराई का पृथ्वीराज रासो माना जाता है। इसमें 69 सर्ग है।
- हिन्दी का अंतरराष्ट्रीय सचिवालय मॉरीशस में है।
- काशी में 16 जुलाई 1882 को नागरी प्रचार सभी की स्वथापन की गयी।
- भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप 1 2 3 4 5 6 7 8 9 0 है।

संदेश

- राष्ट्रभाषा का प्रचार करना मैं राष्ट्रीयता का एक अंग मानता हूँ। **डॉ. राजेन्द्र प्रसाद**
- राष्ट्र के रूप में हिन्दी हमारे देश की एकता में सबसे अधिक सहायक सिद्ध होगी। **पं. जवाहर लाल नेहरू**
- भाषा के जरीये ही हम एक आदर्श समाज की कल्पना कर सकते हैं। **डॉ. मनमोहन सिंह**
- हिन्दी केवल राष्ट्रभाषा नहीं बल्कि विश्व राष्ट्रभाषा भाषा बन सकती है। **राजीव गाँधी**
- हिन्दी एक जीवन्त भाषा है। इसमें बड़ी सुरमयता और उदारता है। **के.आर. नारायन**
- देश को एकता के सत्र में आबद्ध करने की शक्ति केवल हिन्दी में है। **इन्दिरा गाँधी**
- देश को एक सूत्र में पिरोने वाली भाषा हिन्दी ही हो सकती है। **लाल बहादुर शास्त्री**
- हिन्दी भाषा की उन्नति का अर्थ है राष्ट्र और जाति की उन्नति। **रामवृक्ष बेनीपूरी**
- हिन्दी भारतीय संस्कृति की आत्मा है। **कमलापति त्रिपाठी**

हिन्दी के अंकों का स्वीकृत मानक रूप

1	एक	26	छब्बीस	51	इक्यावन	76	छिहत्तर
2	दो	27	सत्ताइस	52	बावन	77	सतहत्तर
3	तीन	28	अठ्ठाइस	53	तिरपन	78	अठहत्तर
4	चार	29	उनतीस	54	चौवन	79	उनासी
5	पाँच	30	तीस	55	पचपन	80	अस्सी
6	छः	31	इक्तीस	56	छप्पन	81	इक्यासी
7	सात	32	बत्तीस	57	सतावन	82	ब्यासी
8	आठ	33	तैंतीस	58	अठावन	83	तिरासी
9	नौ	34	चौंतीस	59	उनसठ	84	चौरासी
10	दस	35	पैंतीस	60	साठ	85	पिचासी
11	ग्यारह	36	छत्तीस	61	इकसठ	86	छियासी
12	बारह	37	सैंतीस	62	बासठ	87	सतासी
13	तेरह	38	अड़तीस	63	तिरसठ	88	अठासी
14	चौदह	39	उनतालीस	64	चौंसठ	89	नवासी
15	पंद्रह	40	चालीस	65	पैंसठ	90	नब्बे
16	सोलह	41	इकतालीस	66	छियासठ	91	इक्कानवे
17	सत्रह	42	बयालीस	67	सड़सठ	92	बानवे
18	अठारह	43	तैंतालीस	68	अड़सठ	93	तिरानवे
19	उन्नीस	44	चवालीस	69	उनहत्तर	94	चौरानवे
20	बीस	45	पैंतालीस	70	सत्तर	95	पचानवे
21	इक्कीस	46	छियालीस	71	इकहत्तर	96	छियानवे
22	बाईस	47	सैंतालीस	72	बहत्तर	97	सतानवे
23	तेईस	48	अड़तालीस	73	तिहत्तर	98	अठानवे
24	चौबीस	49	उनचास	74	चौहत्तर	99	निन्यानवे
25	पच्चीस	50	पचास	75	पचहत्तर	100	सौ

प्रशासनिक शब्दावली

1.	Drawing and Disbursing Officer	आहरण एवं संवितरण अधिकारी
2.	Audit	लेखा परीक्षा
3.	Estate Officer	संपदा अधिकारी
4.	Withdrawal	प्रत्याहरण
5.	Balance Sheet	तुलन पत्र
6.	Academician	विद्याविद्
7.	Misappropriation	दुर्विनियोजन
8.	Monitoring	अनुवीक्षण
9.	Cell	प्रकोष्ठ
10.	Maintenance	अनुरक्षण, रखरखाव, रखना भरण–पोषण
11.	Tender	निविदा
12.	Contract	संविदा
13.	Mascot	शुभंकर
14.	General provident Fund	सामान्य भविष्य निधि
15.	Antecedents	पूर्ववृत्त
16.	Appendix	परिशिष्ठ
17.	Attestation	अनुप्रमाणन
18.	Biodata	जीवनवृत्त
19.	By hand	दस्ती
20.	Adjustment	समायोजन
21.	Action	कार्रवाई
22.	Admissible	ग्राह्य, स्वीकार्य
23.	Acknowledgement	पवती
24.	Ad hoc	तदर्थ
25.	Proceedings	कार्यवाही
26.	Delegation of powers	शक्तियों का प्रत्यायोजन
27.	Ditto	यथोपरि
28.	Ex-Office	पदेन
29.	Forwarding Letter	अग्रेषण पत्र
30.	Extraordinary	असाधारण
31.	Ex parte	एक पक्षीय
32.	Fund	निधि
33.	Appropriation	विनियोजन
34.	Reappropriation	पुनर्विनियोजन
35.	Commitment	बचनबदधा, प्रतिबद्धता

36.	Commutation	परिवर्तन, संराशीकरण लघूकरण
37.	Delimitation	परिसीमन
38	Demi- Official	अर्धशासकीय
39	Denovo	नये सिरे से
40	Qualifying	अर्हक
41	Desirable	वांछनीय
42	Purview	क्षेत्र, कार्यक्षेत्र
43	Strategy	कार्यनीति, रणनीति
44	Quorum	कोरम, गणपूर्ति
45	Quarantine	संगरोध
46	Random	यादृच्छिक, सांयोजिक, अनियमित
47	Provisional	अनंतिम
48	Provision	प्रावधान, व्यवस्था, उपबन्ध शर्तें
49	Election	निर्वाचन
50	Effective	प्रभावी, दकारगर, वास्तविक
51	Earnest Money	ब्याना, अग्रिमधन
52	Personnel	कार्मिक
53	Perspective	परिप्रेक्ष्य, संदर्श
54	Plenary	पूर्ण
55	Plenary Session	पूर्ण अधिवेशन
56	Reminder	अनुस्मारक
57	Un Official Note	अनौपचारिक टिप्पणी, स्मारण–पत्र
58	Note	नोट, टिप्पणी
59	Endorsement	पृष्ठांकन
60	Notification	अधिसूचना
61	Resolution	संकल्प
62	Advertisement	विज्ञापन
63	Reimbursement	प्रतिपूर्ति
64	Installation	संस्थापन, अधिष्ठापन
65	Competent Authority	सक्षम अधिकारी
66	Compendium	सार–संग्रह
67	Selection	चयन
68	Direction	निदेशन
69	Compliance	अनुपालन

फलों एवं सब्जियों के नाम

एस.आर. सिंह[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

Apple	सेब
Banana	केला
Grapes	अंगूर
Pomegranate	अनार
Apricot	खुमानी
Mango	आम
Guava	अमरूद
Jamun	जामुन
Bail	बेल
Aonla	आँवला
Litchi	लीची
Crane berry	करोंदा
Pomelo	पेमिलो
Orange	संतरा
Khirni	खिरनी
Cashewnut	काजू
Artichoke	आर्टीचोक
Ash gourd	पेठा
Asparagus	एस्पैरेगस
Chenopodium	बथुआ
Spinach	पालक
Bitter gourd	करेला
Bottle gourd	लौकी
Brinjal	बैगन
Broad bean	बाकला
Brussels sprouts	बटन गोभी
Cabbage	बंद गोभी
Carrot	गजर
Cauliflower	फूल गोभी
Celery	सेलरी
Chakwat/orach	चकवत
Chicory	चिकोरी
Chilli	मिर्च
Chinese cabbage	चीनी पत्ता गोभी
Chive	चाईव
Chow-chow	चोचो
Cowpea	लोबिया
Cucumber	खीरा
French bean	फराश बीन
Garlic	लहसुन
Kale	केल
Kasuri methi	कसूरी मेथी
Knol khol	गाँठ गोभी
Lablab bean	सेम
Larger yam	रतालू
Leaf mustard	सरसों साग
Leek	लीक
Lesser yam	सूथनी
Lettuce	सलाद
Long melon	ककड़ी

[1]प्रधान वैज्ञानिक

Fenugreek	मेथी	Soyabean	सोयाबीन
Multiplier onion	गुणक प्याज	Sponge gourd	चिकनी तोरी
Musk melon	खरबूज	Sprouting broccoli	स्प्राउटिंग ब्रोकोली
New Zealand spinach	विलायती पालक	Summer squash	चप्पन कद्दू
Okra	भिंडी	Sweet corn	शिशु मक्का
Onion	प्याज	Sweet potato	शकरकंद
Sarda Melon	सरदा मेलन	Swiss chard	स्वीस चार्ड
Parsley	पारसीले	Tapioca	कसावा
Pea	मटर	Taro/Arvi	घुईयाँ
Pointed gourd	परवल	Tinda	टिंडा
Potato	आलू	Tomato	टमाटर
Pumkin	कद्दू	Turnip	शलजम
Radish	मूली	Water melon	तरबूज
Ridge gourd	नसदार तोरी	Winged bean	पंखिया सेम
Snake gourd	चिड़चिड़ा	Parsnip	पार्सनिप

बागवानी से संबंधी शब्दावली

Anthracnose	ऐन्थ्रेकनोज	Creamish	अत्यन्त हल्का पीला
Die back	उल्टा सूखा	Stone	गुठली
Wilt	उकठा, सूखा	Hardening of stone	गुठली का कड़ाहोना
Sooty mould	काली फफूंद	Bruised	खरोंच लगा हुआ
Bacterial canker	शाकाणु कैंकर	Damaged	क्षतिग्रस्त
Harvest	तुड़ाई, कटाई	Sort out	छाँटना
Mature	परिपक्व	Graded	श्रेणीकरण
Ripened	पका हुआ	Size	आकार
Stalk	डंठल, वृंत	Weight	वजन, भार
Harvester	तोड़क यंत्र	Colour	रंग
Pulp	गूदा	Maturity	परिपक्वता

Wooden Box	लकड़ी का बक्सा	Raw	कच्चा
Packaging	पेटी बन्दी	Variety	किस्म, प्रभेद
Transportation	स्थानान्तरण	Jelly	जेली
Design	रूप–रेखा प्रस्तुत करना	Seed	बीज
Capacity	क्षमता	Genesis	उत्पत्ति
Ventilation	संवातन वायुसंचार	Genetic	आनुवांशिक, आनुवांशिकी
Life	जीवन	Product	उत्पाद
Juice	जूस, रस	Caved Fruits	डिब्बा बंद फल
Nectar	नेक्टर	Procure	प्राप्त करना
Squash	शरबत	Canker	कैंकर
Biotic	जैव	Density	घनत्व
Abiotic	अजैव	Soil	मृदा, मिट्टी
Accession	अभिगमन	Twigs	टहनियाँ
Resistant varieties	प्रतिरोधी किस्में	Braches	शाखाएँ
Infection	संक्रमण	Petioles	पर्णवन्त
Wilt	उकठा, सूखा, म्लानि	Lesions	बड़े धब्बे
Rootstock	मूलवृंत	Spots	धब्बा
Disease Management	रोग प्रबंधन	Cultivar	किस्म
Disease	रोग	Field gene bank	प्रक्षेत्र जीन बैंक
Stem	तना	Breed	नस्ल
Stem rot	तना विगलन	Arid soil	शुष्क मृदा
Stem borer	तना भेदक	Arid lands	शुष्क भूमि
Breeding	प्रजनन	Arable crop	कृष्य फसल
Slices	टुकड़ा, फाँकें	Arable farming	कृष्य कृषि

हिन्दी चेतना मास 2015 के समापन अवसर पर आयोजित हिन्दी कार्यशाला के वक्ता के रूप में आमंत्रित डॉ. वी.के. मिश्र, प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, सी.एस.एस. आर.आई., क्षेत्रीय केन्द्र, लखनऊ का स्वागत करते संस्थान के निदेशक, डॉ. शैलेन्द्र राजन।

जनजातीय उप योजना के अन्तर्गत बांसवाड़ा, राजस्थान में व्याख्यान देते हुए डॉ. एस.के. शुक्ला, प्रधान वैज्ञानिक।

डॉ. शैलेन्द्र राजन, संस्थान के निदेशक हिन्दी दिवस के अवसर पर राजभाषा हिन्दी पर व्याख्यान देते हुए।

महामहिम राष्ट्रपति महोदय द्वारा संस्थान के वैज्ञानिकों का सम्मान

डा. ओम प्रकाश पाण्डेय

डा. ओम प्रकाश

डॉ. ओम प्रकाश पाण्डेय, सेवा निवृत्त, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. ए. के. मिश्र, प्रधान वैज्ञानिक एवं डॉ. ओम प्रकाश, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ को संयुक्त रूप से गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के राजीव गाँधी ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तक लेखन पुरस्कार के अन्तर्गत महामहिम राष्ट्रपति, डॉ. प्रणव मुखर्जी द्वारा 14 सितम्बर, 2014 को उनकी पुस्तक 'आम के रोग एवं विकार - एक संक्षिप्त विवरण' के लिए प्रोत्साहन पुरस्कार दिया गया।

डॉ. के. के. श्रीवास्तव, वरिष्ठ वैज्ञानिक, केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ को गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा उनकी पुस्तक ''शीतोष्ण फलों की वैज्ञानिक खेती'' को राजभाषा गौरव ज्ञान-विज्ञान खण्ड में मौलिक पुस्तक लेखन के द्वितीय पुरस्कार से महामहिम राष्ट्रपति, डॉ. प्रणव मुखर्जी द्वारा हिन्दी दिवस के अवसर पर सितम्बर 14, 2015 को सम्मानित किया गया।

2015
अन्तर्राष्ट्रीय मृदा वर्ष

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333